सर्व देव सिद्धि साधना



न्यू स्टैण्डर्ड पब्लिकेशन्स
१८१३, चन्द्रावल रोड, दिल्ली-११० ००७

1. 3

सर्व देव सिद्धि साधना

तन्त्र-शास्त्र वर्णित श्री गणेश, शिव, हनुमान, महामाया, महाकाली, भद्रकाली, गुह्यकाली, दुर्गा, लक्ष्मी, सरस्वती, बटुक भैरव आदि सभी प्रमुख देवी-देवता के पूजन सिद्धि साधन सम्बन्धी मन्त्र, यन्त्र, स्तोत्र, हव्य पूजा विधि के विस्तृत विवेचन का अद्वितीय संकलन

आचार्य श्री शिवनाथ राय

न्यू स्टेण्डर्ड पब्लिकेशन्स
1813, चन्द्रावल रोड, दिल्ली-110007

प्रकाशक :
एस० एल० सचदेव
न्यू स्टेन्डर्ड पब्लिकेशन्स
1813, चन्द्रावल रोड़, दिल्ली-110007

दिल्ली : (1990)

मूल्य : 20/-

मुद्रक : सिटीजन प्रिन्टर्स
१८१३, चन्द्रावल रोड, दिल्ली-७

श्रीदेशानन्द मोहनानन्द आजाद

दो शब्द

देवी-देवताओं के पूजन-साधन पर अनेकानेक धार्मिक ग्रन्थ तन्त्र शास्त्र भारत में विद्यमान हैं। किन्तु उन महान् ग्रन्थों व शास्त्र आदि को प्रत्येक साधक सरलता से समझने में असमर्थ है क्योंकि उनमें क्लिष्ट भाषा का प्रयोग हुआ है और विषय असीम गहराई में प्रस्तुत किया गया है। एक तो ये महान ग्रन्थ तन्त्र शास्त्र सरलता से उपलब्ध नहीं हैं। दूसरे यदि इनको उपलब्ध कर भी लिया जाय तो उनके अध्ययन मनन के लिए पर्याप्त समय निकालना होगा और उनको समझने के लिए आवश्यकता होगी कुशाग्र बुद्धिमत्ता की।

आज के व्यस्त जीवन में प्रत्येक साधकभक्त कम समय में सरल भाषा द्वारा इन पूजन-साधन विधियों को ग्रहण करना चाहता है। इसी उद्देश्य को समक्ष रखते हुए प्रस्तुत पुस्तक का निर्माण इस रूप में किया गया है। इसके सम्यक् अध्ययन से देवी-देवता साधन सम्बन्धी सभी जानकारी सामान्य पाठक भी सरलता से प्राप्त कर सकता है।

प्रस्तुत पुस्तक में विभिन्न तन्त्र शास्त्रों के आधार पर श्री गणेश, शिव, विष्णु, हनुमान, महामाया, महाकाली, भद्रकाली, गुह्यकाली, दुर्गा, कमलासना लक्ष्मी, सरस्वती, बटुकभैरव आदि अनेक देवी-देवताओं के साधन संबंधी मन्त्र, पूजा, यंत्र, ध्यान, पूजाप्रयोग, न्यास, कवच, स्तोत्र आदि का समावेश किया गया है। सरल हिन्दी भाषा में यह अपने प्रकार की संभवतः प्रथम पुस्तक है, जो देव-देवी के साधकों-भक्तों के लिए परम उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

यहाँ जिस सामग्री को संकलित किया गया है उसका वर्णन 'महाइन्द्र-जाल' के किसी अन्य खण्ड में नहीं किया गया है।

पाठकों से हमारा अनुरोध है कि देवी-देवताओं के पूजन-साधन संबंधी जो भी मन्त्र इस पुस्तक में दिए गए हैं उनके सम्बन्ध में यह ध्यान रखें कि

उनको करते समय कोई भूल न हो। यदि च इस पुस्तक में साधनों की क्रियाओं का विस्तार पूर्वक वर्णन किया गया है फिर भी साधन से पूर्व इस विषय के जानकार किसी अनुभवी विद्वान् से परामर्श कर लें ताकि क्रिया में कोई कमी न रहे।

मुझे पूर्ण आशा है कि मेरा परिश्रम साधकों के लिए उपयोगी और लाभकारी सिद्ध होगा और सभी लोग इस पुस्तक को सस्नेह स्वीकार करेंगे।

नई दिल्ली
पहली मई, 1979

शिवनाथ राय

7. काली साधन

8. लक्ष्मी साधन

9. भैरव साधन

10. गायत्री साधन

गायत्री साधन
(तन्त्र-शास्त्र के अनुसार)

देवी-देवता सिद्धि

1

साधना और सिद्धि

स्वामी श्री शुद्धानंदजी भारती

'साधना' किसे कहते हैं ?

'साधना' का अर्थ है प्रयत्न करना, उद्योग करना, लगना। साधना का अर्थ सिद्धि भी है। आत्मानुसंधान के मार्ग में, अपनी आत्मा को परमात्मा में लगाने पर 'पूर्णमदः पूर्णमिदं' की अनुभूति के पथ में हमारी जो कुछ भी आध्यात्मिक चेष्टाएं होती हैं उन सब का नाम 'साधना' है। नदी की धारा ऊंचे चढ़ती है, नीचे ढलती है, वन-पर्वत को लांघती हुई बढ़ती जाती है। क्यों, किसलिये ? इसलिये कि यह अन्त में अपने आपको समुद्र की गोद में सुला दे, लीन कर दे, मिटा दे। मनुष्य की आत्मा भी भाग्य के चढ़ाव-उतार, सुख-दुःख हर्ष-विषाद और ऐसे ही जीवन के विविध खट्टे-मीठे अनुभवों को पार करती हुई चित्त और आनन्द के एक अनन्त महासागर अपने आपको ढाल देने के लिए व्याकुल है, बेचैन है। नदी का लक्ष्य है समुद्र, मनुष्य का लक्ष्य है भगवान। भगवान के मार्ग में चलने के लिये जो भी अनुष्ठान किया जाता है, जो भी व्रत किया जाता है, वह सभी 'साधना' है और जो भी इस मार्ग में अवरोधक है, वह है अन्तराय, वह है साधना में विघ्न।

साधना का श्रीगणेश कहां से और कैसे होता है ?

मनुष्य मात्र अपने भीतर एक निगूढ़, एक अव्यक्त अभाव का अनुभव करता है। वह कुछ 'खोज' रहा है, चाह रहा है; परन्तु वह 'चाह' क्या है, उसे पता नहीं। वह 'किसी' को देखना चाहता है। परन्तु वह नहीं जानता कि वह 'कोई' कौन है ? और कैसा है ? संसार के इस बनने-मिटने वाले चित्रों से, क्षण-क्षण पर बदलने वाली वस्तुओं से, उसे स्थायी सुख, स्थायी शान्ति मिले

तो कैसे ? आज का विश्वासी मित्र कल घोर शत्रु हो जाता है, दगा दे जाता है। स्वजन परिजनों को देखकर आज घड़ी-दो-घड़ी के लिये एक हल्की-सी सुखानुभूति हुई, परन्तु कल ही उनका दुःख दर्द देख कर रोना पड़ता है। मनुष्य आज धन-सम्पत्ति जमा करता है, परन्तु कल ही उनके बन्धनों में बन्ध करके तड़पने लगता है, छटपटाने लगता है; उनके भार से पिसने लगता है। इन्द्रियों का सुख, क्षण भर के लिये उसे बहला तो जाता है, परन्तु फिर सदा के लिए असन्तोष और सन्ताप के अथाह सागर में छोड़ जाने के लिए। बुद्धि की दौड़-धूप और उछल कूद से जीवन की शंका मिटती नहीं। अपने ही मन के रचे हुए जेल में मनुष्य अपने आप कैदी है। वह प्रकाश के लिए तड़प रहा है, स्वतन्त्रता के लिए विलख रहा है। पिंजरे को तोड़कर, जेल की दीवारें लांघकर वह बाहर आना चाहता है परन्तु···परन्तु जुगनुओं से कहीं रात का अंधकार जाता है ? जगत् के सुखभोग से क्या अन्तर की प्यास मिटती है ? हीरे जवाहर भी इस अंधकार को छिन्न-भिन्न नहीं कर सकते, फिर बुद्धि के उच्चतम विकास और विलास से मन का संशय कैसे मिटे ? दुनिया भर में नाम और यश का विस्तार हो गया, परन्तु इससे, उसको कौन सा सन्तोष मिला ? कहीं भी तृप्ति मिली ? इन्द्रियों के सुख-भोग से क्षण-भर की जो तृप्ति हुई, उसके पीछे मन सदा के लिए, चिरकाल के लिए और क्षुब्ध हो उठा ! मन तो भावों का, बल खाते हुए भावों का एक सागर है और जीवन है उस क्षुब्ध जल में डगमगाती हुई एक नन्ही-सी नाव। इसके सामने है रहस्यों से भरा भविष्य, इसके पीछे-पीछे लगा आ रहा है भाग्य का मकर, किस्मत का घड़ियाल, सन्नाटा और तूफ़ान, धूप और वर्षा, ओले और कुहारा मार्ग में आते हैं और नाव की गति-विधि को छेड़ते रहते हैं। प्रकृति की शक्तियों के सामने हमारी बुद्धि कुछ काम नहीं देती। पग-पग पर वह हमें छकाती है, अब गया, तब गया ऐसा लगने लगता है। एकाएक वह देखता है कि उसकी किश्ती बुरी तरह से फिर गयी है सर्वनाशी तूफ़ान से; तब वह अपने आपको पाता है चारों ओर से असहाय, निराधार और निरवलम्ब। ऐसे ही समय उसके अन्तस्तल से एक पुकार उठती है, एक हूक निकलती है—हे प्रभो ! हे मेरे स्वामी ! मुझे बचाओ ! बचाओ !! मैं दीन-हीन हूँ, असहाय हूँ !!!

बुद्धिर्विकुण्ठिता नाथ समाप्ता मम युक्तयः ।
नान्यत्किञ्चिद्विजानामि त्वमेव शरणं मम ॥
त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव ॥

हे नाथ ! मेरी मति कुण्ठित हो गयी है, मेरी सारी तर्क युक्तियां समाप्त हो गयी हैं, मैं तुम्हारे सिवा कुछ भी नहीं जानता; तुम ही मेरे एकमात्र शरण हो । तुम ही सच्चे पिता हो, तुम ही स्नेहमयी माता हो, तुम ही विपत्ति से बचाने वाले सच्चे बन्धु हो, तुम ही सच्चे मित्र हो; विद्या, धन और सर्वस्व, हे देवदेव ! मेरे सब कुछ तुम ही हो !

हे प्रभो ! हे अशरण शरण ! आज तुम्हारे सिवा मेरे लिए कोई सहारा नहीं है, कोई गति नहीं है; तुम ही मेरे सर्वस्व हो, जीवन के आधार हो, प्राणों के अवलम्ब हो; मुझे बचाओ ! मुझे बचाओ ! मुझे बचाओ ! तुम से प्रेम करना ही प्रेम है । तुम्हें जानना ही ज्ञान है । प्रभो ! दया कर अपने प्रेम का दान दो अपने प्यार से मुझे नहला दो, पवित्र कर दो; अपने ज्ञान का प्रकाश दो, जिससे मेरा अन्तर-बाहर ज्योतिर्मय हो जाये—शुभ्र ज्ञानमय हो जाये !

मनुष्य के हृदय से जब ऐसी करुण पुकार निकलती है, तब समझना चाहिये कि यथार्थ साधना का श्रीगणेश हुआ है ।

साधना की आवश्यकता क्यों है ?

हर बात में उपयोगिता ढूंढ़ने वाले यह पूछ सकते हैं कि आखिर साधना की आवश्यकता किसलिए है, उससे क्या लाभ है ? क्यों न मनुष्य खाये पिये, भोजन करे, धन संग्रह करे, बम बरसाये, दुनिया को जीतकर उनकी छाती पर अपना शासन स्थापित करे, हकूमत कायम करे ? और इस बात की आवश्यकता ही क्या है कि वह भगवान और साधना के विषय में सोचे विचारे, माथा पच्ची करे ? परन्तु यह भी कोई जीवन है ? यह तो अज्ञान-तिमिर में भटकना है ! यह जगत त्रिगुणमयी माया की अन्तिम क्रीड़ास्थली है । मनुष्य

आंख मिचौली खेल रहा है। उसकी आंखों पर अज्ञान की पट्टियां बंधी हैं। अंधकार के कारण वह दुख के गर्त में जा पड़ा है । कभी इसे छूता है कभी उसे। दुनिया भर की खाक छानता फिरता है। अटक से कटक तक, चीन से पेरू तक चक्कर लगाता फिरता है और सुख-दुख हर्ष विषाद के थपेड़े खाता-फिरता है। जहां जाता है, वहां धक्के खाता है, दुरदुराया जाता है। कहीं भी शान्ति नहीं, सुख नहीं, स्वतन्त्रता नहीं, सन्तोष नहीं । अपने ही आप अपनी इच्छाओं में आबद्ध है,। वासनाओं में जकड़ा हुआ है । अपनी इच्छाओं का गुलाम है। वह जितना भी सोचता विचारता है, जितना भी हाथ पैर मारता है, उतना ही वह दुखों की जंजीरों से अधिकाधिक जकड़ा जाता है, उलझता जाता है ।

इतने में ही अन्दर की घंटी बज उठती है और भगवान का नाम हृदय में गूंजने लगता है। शास्त्र एक स्तर पर कहते हैं — डंके की चोट कहते हैं। कि भगवान ही — एक मात्र श्रीभगवान ही विशुद्ध आनन्द हैं, वास्तविक ज्ञान हैं, परात्पर सत्य हैं। जीवन उन्मुक्त हो जाता है,. सत्य उतर आता है और हृदय के अन्तस्तल में आनन्द की तरंगें उठने लगती हैं। नाम का अनुसरण और भगवान के चरणों का स्मरण साधना की पहली सीढ़ी है। भगवान के परम पावन चरण युगल ही हमारे सच्चे आश्रय हैं, एकमात्र शरण्य हैं; और तमाम आधार व्यर्थ हैं। धोखे में डालने वाले हैं, भरमाने वाले हैं। भगवान की प्राप्ति ही सच्ची प्राप्ति है; उनके विना सारी प्राप्ति व्यर्थ है, महान् हानि है। भगवत्-चेतना के विना जीवन दारुण आत्म-हत्या भयानक आत्महनन है। आज की दुनिया में जहां विज्ञान के नवीन-नवीन अनुसन्धानों में मनुष्य का अहंकार इतरा उठा है, जहाँ सौभाग्य साम्राज्यवाद की दानवी ज्वाला से मानवता पीड़ित एवं क्षुब्ध है — सर्वत्र इसी आत्महनन का दौर-दौर है। पैशाचिकता नहीं तो और क्या है कि समुद्र के गर्भ में लोह चुम्बक तारों का जाल बिछा कर जहाजों को डुबो देते हैं और निरीह मानवों पर बम बरसाये जा रहे हैं? इस आधार से मनुष्य को ऊपर उठाना होगा, इस अहंकार से पल्ला छुड़ाना पड़ेगा और तभी यह अपने सत्य स्वरूप की, उस सनातन शाश्वत सत्य की उपलब्धि कर सकेगा, जिसके लिये उसके भीतर तड़फ है, व्याकुलता है, अभाव

का बोध है, दूसरे शब्दों में उसे साधना करनी होगी तब अपने सत्य स्वरूप का — जो स्वयं श्रीनारायण है — पता लगेगा। यह साधना जीवन के लिये आवश्यक है, अनिवार्य है। जीवन में अन्न, जल, वायु, प्रकाश की अपेक्षा भी इस साधना की आवश्यकता अधिक है।

साधना के केन्द्र

मनुष्य वस्तुतः दिव्य भागवत प्राणी है। वह आत्मदृष्टि साक्षात् श्री भगवान ही है, मनुष्यता का तो उसने चोला धारण किया है। मनुष्य की तमाम पहेलियों का बस एक ही हल है और वह यही है कि मनुष्य अपने दिव्य भगवत्-स्वरूप की उपलब्धि करे। मनुष्य के भीतर भगवान पंच कोषों में छिपे हुए हैं। मनुष्य का भौतिक रूप आत्मा का परिच्छेद है, यही है अन्नमय कोष, उस के बाद है प्राणों का कोष अर्थात स्नायु जाल, जो शरीर धारण किये हुए है। इस स्नायुजाल में ही जीवन की धाराएं प्रवाहित होती रहती है। मन इन स्नायुओं का पोषण और संचालन करता है। शरीर, मन और प्राण मनुष्य के निम्न स्तर के केन्द्र हैं। मन के परे विज्ञान है। इस विज्ञान की दृष्टि में एक तत्त्व बहुत ही स्पष्ट एवं प्रांजल रूप में रह जाता है। विज्ञान के परे आनन्द-मय कोष है और इसमें प्रवेश करने पर मनुष्य आत्मानन्द के हृदय में प्रवेश कर जाता है। आत्मा इन पांचों कोषों से परे है और हमारे हृदय कमल में जगमगा रहा है। साधना की तीव्रता के द्वारा जब दिव्य चेतना का स्फुरण और जागरण होता है, तब इन पर पञ्चकोषों की प्रक्रिया समझ में आती है। दृष्टि के सभी अंगों में भगवान के दिव्य संस्पर्श की अनुभूति होनी चाहिए इसके लिये आवश्यकता इस बात की है कि हमारे समग्र अंग सक्रिय साधना में लगें। साधना कोई भी क्यों न हो, यह आवश्यक है कि वह हमारी मनोदृष्टि को उद्बोधित करे और हृदय को स्पर्श करे। हमारे शरीर के अन्दर हृदय और बुद्धि में भगवान का निवास होता है। मन-बुद्धि साधना में स्थिर हो जाये और हृदय उसके आनन्द रस का निरन्तर आस्वादन करता रहे—यही तो साधना की सफलता के लक्षण हैं। मन-बुद्धि और हृदय के केन्द्रों को जो साधना स्पर्श नहीं करती, वह साधना अधूरी समझी जायेगी। अच्छा, इसके सम्बन्ध में फिर आगे विचार किया जायेगा।

साधना के सिद्धान्त

साधारणतः हमारी चेतना बहिर्मुखी होती है। बाहर के विषयों में यह मनमानी बेलगाम दौड़ लगाती है, खूब उछल-कूद मचाती है और उस प्रत्येक उछल-कूद में हमारी शान्ति और शक्ति का क्षरण होता रहता है और मन चंचल और क्षुब्ध होता रहता है। मन पर अच्छी तरह लगाम कसकर और इस प्रकार समग्र बिखरी हुई चेतना को अपने अन्दर समेट कर उसे हृदय में डुबो देना ही साधना का गुह्य तत्त्व है। जिस प्रकार परजीवा समुद्र में गोते लगाकर रत्न ढूंढ़ निकालता है, उसी प्रकार साधक को अपने हृदय में डूबना होगा। हमारे सभी अंग, हमारे अस्तित्व का एक-एक कण भगवत प्राप्ति की सजग अभीप्सा में पुलकित हो उठें, हमारे भीतर दिव्य पवित्रता भर जाए -- इसके लिए अन्दर दृढ़ निश्चय चाहिए, अटल निष्ठा चाहिए। और चाहिए साधना के प्रति अटूट अनुराग। "अन्तर्मुख होओ, भीतर की ओर लौटो"— समस्त साधनों का एक मात्र यही सूत्र है।

साधना का मूल आधार

हृदय में स्थित नारायण का साक्षात्कार करने के लिएं तथा समस्त जगत में उनका सम्पर्श अनुभव करने के लिए अनेक प्रकार की साधनाएं हैं। उनमें कोई भी साधना लगन और उत्साह के साथ की जाए तो साधक अपने लक्ष्य को प्राप्तकर लेगा क्योंकि हमारी अन्तरात्मा ही हमें यन्त्र बनाकर कार्य करती है। मन, वचन और कर्म की पवित्रता, सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, सात्त्विक एवं युक्त आहार-विहार, सत्संग, एकान्त-सेवन, आंख, कान, जिह्वा, और उपस्थेन्द्रिय का पूर्ण संयम, भगवान में पूर्ण विश्वास, नाम-स्मरण, नम्रता, निरपेक्षता, सदा ग्रंथसेवन, साधु-सेवन, श्री गुरु की आज्ञा का पालन—यह ही हैं साधना के मूल आधार और कोई भी साधक, चाहे जिस शैली की उसकी साधना हो, इन तत्त्वों की अवहेलना नहीं कर सकता।

गुरु

योग्य गुरु के संरक्षण में साधना करना सर्वथा सुरक्षित एवं निरापद है। परन्तु सच्चे गुरु के लिए सच्ची खोज होनी चाहिए। गुरु के जीवन में जितनी अधिक दिव्यता होगी, उसके मुखमण्डल पर चिच्छक्ति का जितना अधिक विकास

होगा, उसकी करुणा भरी, कृपा भरी दृष्टि में जितनी भी दिव्य आध्यात्मिक ज्योति निकलती रहेगी, उसके शान्त, स्थिर, निर्मल, अहंकार-शून्य, सरल, निश्छल, निर्मान, निर्मोह आचरण में, उसकी शीतल स्निग्ध वाणी में जो सहज ही संशय का उच्छेदन करती है, आनन्द और प्रकाश की वर्षा करती है, जितना अधिक प्रभाव होगा, साधक का उतना ही शीघ्र कल्याण होगा। सच्चा गुरु कभी भी अपने को अवतार घोषित नहीं करता, न अपने को सर्वशक्तिमान ही बतलाता है। इस प्रकार के अहंकार का उसमें लेश भी नहीं होता। प्रकाशन और प्रचार की अपेक्षा मौन और एकान्त से उसका विशेष प्रेम होता है। वह यह कहता भी नहीं कि मैं गुरु हूं। सच्चा गुरु एक बार के दृष्टि-निक्षेपमात्र से, एक बार के स्पर्श से, एक बार के संकल्प से अपने योग्य शिष्य में शक्तिपात कर सकता है। मीलों दूर से अपने शिष्य की काया पलट सकता है, क्योंकि परमाणुओं की गति में जो संवेग है, उससे भी अधिक तीव्र संवेग उसके विचारों में, उसके संकल्प में होता है। बड़ा ही भाग्यशाली है वह साधक जिसे ऐसा गुरु प्राप्त हो गया है। ऐसे योग्य गुरु हैं बहुत ही दुर्लभ। भगवान की कृपा से ही वह इस धराधाम पर आते हैं। इस संसार में आजकल ऐसे गुरु बहुत ही थोड़े हैं।

कुछ साधनाएँ

साधना के जिन आवश्यक तत्त्वों का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है, यदि उनका विकास किसी साधक में हो रहा है यह आत्मज्ञान की निम्नलिखित साधनाओं में से किसी एक का; जिसका निर्देश उसके गुरु देव करें अथवा जिस का अनुमोदन उसकी अन्तरात्मा करे, आधार ले सकता है।

(1) भगवद्गीता, रामायण, भागवत, सूतसंहिता, विवेकचूडामणि आदि आदि धर्म ग्रन्थों का अनुशीलन एवं मनन।

(2) राम, कृष्ण, शिव, शक्ति, अल्लाह, जेहोवा या भगवान के अन्य किसी भी प्रिय नाम का प्रतिदिन कम-से-कम दस हज़ार जप।

(3) भजन गाना, भगवत्प्रेम में नाचना, और खूब प्रेम से भगवद्नाम का ज़ोर-ज़ोर से उच्चारण और भगवत् कृपा का आवाहन। हृदय द्वार को खोलने तथा हृदय ग्रन्थियों को काटने के लिए यह सर्वोत्तम साधन है।

(4) सत्संग, साधु-सेवा और संत-महात्माओं को भगवान का रूप समझ कर उनका सम्मान करना।

(5) हमारे धर्म शास्त्र द्वारा अनुमोदित नित्य नैमित्तिक कर्मानुष्ठान-संध्योपासन, ब्रह्मयज्ञ, बलिवैश्वदेव आदि पवित्र कर्मों का विधिवत् पालन करना। इन कर्मों में महान् आध्यात्मिक रहस्य भरा पड़ा है।

(6) भगवत्पूर्ण बुद्धि से ही कर्म करना और उन समस्त कर्मों से जो अहंकार उत्पन्न करते हैं, सर्वथा अलग रहना।

(7) भगवान की मूर्ति की उपासना और अर्चा। यह भाव दृढ़ रहे कि मूर्ति में साक्षात् भगवान का निवास है। यह धातु की नहीं है, अपितु स्वयं श्रीभगवान का दिव्य मंगलमय विग्रह है। मूर्तिपूजा के आलोचक इस बात को भूल जाते हैं और इसलिए मूर्तिपूजा के तत्व से अनभिज्ञ रह जाते हैं।

(8) नियमपूर्वक किसी मन्दिर में जाना, उसे धोना, पोंछना, साफ करना, बत्ती जलाना, धूप दिखाना आदि कैङ्कर्य करना।

(9) तीर्थ-सेवन, गङ्गा, यमुना, सरयू आदि पवित्र नदियों में स्नान करना। यदि सच्चाई के साथ निष्ठा पूर्वक यह कार्य किये जायें तो अवश्य ही इसके द्वारा चित्त शुद्धि होती है और भक्ति की लता लहरा उठती है।

(10) दान करना — दीन दुखियों, अपाहिजों को अन्न देना, पशु-पक्षियों को अपनी सन्तान समझ कर उनको दाना-पानी पहुँचाना, गो-सेवा करना, पूजा के लिए बाग बगीचे और फुलवारियाँ लगाना, ब्रह्मचारियों को अन्न वस्त्र देना, साधु संन्यासियों की आवश्यकताओं को पूर्ण करना, सद्ज्ञान का प्रचार और प्रसार, गरीबों के लिए, रोगियों के अस्पताल खुलवाना गरीबों और मजदूरों के लिए काम-काज की व्यवस्था करना, और उनकी जीविका की व्यवस्था बैठाना, उदारता पूर्वक दान देना, मानव-मात्र को श्री नारायण का विग्रह समझकर निष्काम भाव से उनकी सेवा शुश्रूषा करना अन्तःकरण की शुद्धि के लिए यह कार्य नितान्त अनिवार्य हैं।

(11) गुरुसेवा — गुरु के चरणों में अपने आपको अर्पित कर देना, उन्हें साक्षात् श्री भगवान समझना, और धैर्य तथा उत्साह के साथ उनके

निर्देशित पथ का, उनकी आज्ञाओं का श्रद्धापूर्वक पालन एवं अनुसरण करना, कभी उनकी भगवत्ता में संशय न करना।

(12) हठयोग की कुछ क्रियाएं — आसन, बन्ध, मुद्रा-प्राणायाम, कुम्भक, धौति, नौलि, त्राटक आदि का अभ्यास किसी योग्य अनुभव गुरु के अनुशासन एवं तत्त्वावधान में करना। हठयोग के आसनों का अभ्यास एक मात्र नाड़ी शुद्धि और प्राण शुद्धि के लिए किया जाता है। इससे तुरन्त लाभ यह होता है कि इसके द्वारा साधक का चित्त स्थिर होता है और ध्यान जमता है और शारीरिक क्षोभ अथवा विक्षेप नहीं होने पाता। चमत्कार के लिए आसनों का जो प्रदर्शन किया जाता है, उससे कुछ भी होता हवाता नहीं। पैसों के लिए तो राह में भिखमंगे भी आसन करते देखे जाते हैं। मन के साथ स्नायुओं का सीधा सम्बन्ध है। योग के आसनों द्वारा प्राणप्रवाह पर बहुत ही सुन्दर ढंग से नियन्त्रण किया जा सकता है, मन के वेगों पर लगाम कसा जा सकता है और इस कारण आसनों के द्वारा मन और प्राण स्वस्थ होते हैं और शरीर भी पुष्ट होता है, संगठित होता है। हठ योग का यही लक्ष्य है (इस पुस्तक के प्रकाशकों से मेरी जगत् प्रसिद्ध रचना 'योगासन' जरूर मंगाकर देखिए)

(13) राजयोग—राजयोग में आठ सीढ़ियाँ हैं—यम, नियम, आसन और प्राणायाम के सम्बन्ध में ऊपर उल्लेख हो चुका है। प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि के विषय में, बहुत संक्षेप में यहाँ चर्चा की जा रही है। पहले चार तो बाह्य साधना के अंग हैं और पिछले चार आन्तरिक साधना के। पिछले चार द्वारा मनुष्य भगवान के बहुत निकट पहुँच जाता है। ध्यान ही आभ्यन्तर साधना का प्राण है। ध्यान का सरल अर्थ यही है कि समस्त बाह्य वृत्तियों को अन्तर्मुख करके हृदयात्मा अथवा हृत्पुण्डरीक स्थित आत्मपुरुष में लीन कर देना। ध्यान में सबसे पहले चित्त की वृत्तियों को एकाग्र करना पड़ता है। इष्ट देवता की मूर्ति या चित्र पर दृष्टि को टिकाने से सहज ही ध्यान जमता है, चित्त एकाग्र होता है। अथवा किसी पुण्य नक्षत्र, सूर्य, प्रकाश मन्त्र, श्वासोच्छ्वास अथवा हृदय की धड़कन पर दृष्टि स्थिर करने से सहज ही ध्यान लगने लगता है। तारे और पुष्प को अपने परम प्रियतम प्रभु की मृदुल मुस्कान समझना चाहिए, हृदय को उसका मन्दिर मानना चाहिए। वस्तुओं

के रहस्यमय आन्तरिक स्वरूप को ही ग्रहण करना चाहिए। ध्यान जब हृदय में किया जाता है तब बाह्य के किसी उपकरण या सहायता की आवश्यकता नहीं रह जाती क्योंकि हृदयस्थ चैत्य पुरुष का दिव्य भाव-प्रवाह हमारी समस्त सत्ता को आत्मसात कर लेता है और इस कारण हमारी उपासना भी दिव्य हो जाती है। हृदय देश में स्थित भगवान नारायण का ध्यान लगातार छः महीने करने पर हमारी अन्तश्चेतना जाग उठती है और उसके अनन्तर तो साधक को केवल इस बात का ध्यान रखना पड़ता है कि उसकी अन्तर्गुफा में जो दिव्य ज्वाल-माल जगमगा रहा है उस पर उसकी दृष्टि स्थिर रहे। फिर और कुछ करना धरना नहीं पड़ता, साधना तो स्वयं चलती जाती है, होती रहती है। इससे होगा यह कि धीरे-धीरे जब समग्र चेतना जाग उठेगी तो मन बुद्धि का आत्मा में विलयन हो जायेगा और समाधि का आनन्द प्राप्त होने लगेगा।

(14) भक्ति-योग-- अपने इष्टदेव के चरणों में आत्मसमर्पण ही सर्व श्रेष्ठ साधन है। इससे स्वय ही साधक की आवश्यक बातें आ जाती हैं। भक्ति की साधना अत्यन्त सुगम है और इसमें किसी प्रकार की विघ्न बाधा या अन्तराय का प्रायः भय नहीं है। भगवान के चरणों में भक्ति करके, संसार में आज तक किसी को धोखा हुआ नहीं, हो नहीं सकता। गृहस्थोंके लिए जिनकी संख्या संसार में 99% (सौ में निन्यानवें) है, यह सर्वोत्तम साधन है। भक्ति के मुख्यतः दो भेद हैं—सगुणभक्ति और निर्गुणभक्ति। इनमें सगुण भक्ति अधिक सुगम है और इसका पालन सभी कर सकते हैं। प्रेम कई प्रकार से व्यक्त होता है। प्रेमी भक्त अपने आपको अनेक प्रकार से प्रकट करता है। भगवान से वह कई प्रकार सम्बन्ध जोड़ लेता है -- दास्यभाव, सख्यभाव, वात्सल्यभाव, कई सम्बन्धों को लेकर वह भगवान से जुड़ जाता है। इनमें से किसी भी भाव से की हुई भक्ति द्वारा भगवत्कृपा प्राप्त होती ही है।

(15) ज्ञान-साधन - समाधि के लिये ज्ञान-साधन बहुत ही उत्तम साधन है। विवेक, वैराग्य, आत्मविचार, अन्तर्दर्शन — यह है प्रक्रिया ज्ञान-साधन की। दृश्य जगत के विषयों के प्रति — जो उत्तम दीखते हैं, किन्तु तुच्छ और क्षणभङ्गुर हैं, ज्ञानी अपनी दृष्टि मून्द लेता है, अपनी इन्द्रियों को हटा लेता है, खींच लेता है। मैं यह भी नहीं हूँ। मैं यह भी नहीं हूँ — 'नाहम्'

'नाहम्' से यह शुरू करता है। फिर सहज ही प्रश्न उठता है — फिर मैं क्या हूँ, मैं क्या हूँ — 'कोऽहम्' 'कोऽहम्'।

अन्त में शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप में अपने आपको स्थित पाकर वह कह उठता है — 'मैं यह हूँ' 'मैं यह हूँ' 'सोऽहम्' 'सोऽहम्' ! ज्ञानी इस बात को जानता है कि वह आत्मा है, स्वयं ब्रह्म है। अहर्निश, सोते जागते उठते बैठते इसी जागृत चेतना में रहता है और अपने मन, चित्त तथा प्राण को उस एक शाश्वत सत्य में लय किये रहता है। उसी एक का ही वह अपने अन्दर हृदय में दर्शन करता है और आँखे खोलकर भी बाहर के संसार में भी वह उसी का दर्शन करता है। उसके सिवा उसके लिये और कुछ रह नहीं जाता। वह सर्वत्र और सब वस्तुओं में उसी एक अद्वितीय को ही और उस 'अद्वितीय' में सब वस्तुओं और सब रूपों को देखता है। इसी को कहते हैं अनेक में एक का दर्शन। ऐसे ही आत्मदर्शी सन्त का गुणगान गीता और उपनिषद् गाते हैं।

(16) तन्त्र — योगी लोग जागृत कुण्डलिनी की उपासना शक्ति रूप में करते हैं। चक्र वेध की क्रिया के द्वारा यह कुण्डलिनी के छः चक्रों को भेदता हुआ सहस्रार में ले जाता है और वहाँ महाकुण्डलिनी का 'पुरुष' से मिलन होता है। इस मिलन से ओंकार की ध्वनि स्पष्ट सुनने में आती है और ब्रह्मानन्द में प्रकाश जगमगाने लगता है और कई वर्ष की साधना से हमारा पूर्ण अस्तित्व मन, प्राण, शरीर सब-का सब दिव्य हो जाता है। नस-नस में, कण कण में चिच्छक्ति का दिव्य विलास होने लगता है और आनन्द की पुलक से रोम रोम सिहर उठता है। परन्तु यह बात स्मरण रखने की है कि तन्त्र की साधना से कुण्डलिनी जागरण द्वारा जो कुछ आनन्दानुभूति होती है, ज्ञान की सहज समाधि या भक्त के अशेष आत्मस्मरण में उससे किञ्चिदंश में भी कम आनन्दानुभूति नहीं होती। तन्त्र का मार्ग संकटापन्न है और किसी अनुभवी योग्य सिद्ध गुरु की देख रेख में रहकर ही इस मार्ग में प्रवृत्त होना चाहिये। गुरु ऐसा हो जो शिष्य में शक्तिपात कर सके। केवल प्रपञ्च-सार, षट्चक्रभेदन, कुलार्णव या महार्णव तन्त्र पढ़ लेने से तन्त्र का ज्ञान नहीं हो सकता। और इन्हें पढ़कर पञ्चमकार की उपासना में प्रवृत्त हाल तो अपने को एकदम

खतरे में डालना है। बहुत से साधक इस मार्ग पर चलकर खतरा उठा चुके हैं, धोखा खा चुके हैं। इस पथ में पूर्ण सावधानी न रही तो अवांछनीय परिणाम होना स्वाभाविक है। जान लेना चाहिये कि भक्ति-साधना और शक्ति-साधना दोनों ही समानरूप से प्रभावशाली हैं।

पुकारो, भगवान को पुकारो

बचपन में मैं सहज ही भक्ति मार्ग में लगा। मेरे दादा एक सच्चे संन्यासी थे। पैदल दो बार, मद्रास से हिमालय तक की यात्रा उन्होंने की थी और अपने अन्तिम दिनों में एक धर्मशाला में रहा करते थे। मेरी अवस्था उस समय छः सात साल की थी। मैं बराबर उनकी सेवा-परिचर्या में लगा रहता था और मेरे लिए तो वह भगवान ही थे। उनके पास बैठ कर ही मैंने हठयोग के तमाम आसन सीखे, प्राणायाम की क्रिया सीखी—और यह सब हुआ खेल तमाशे में। उनकी सेवा में मुझे इतना रस मिलता कि पढ़ना लिखना सब ताक पर रख दिया और मेरा दिल दिमाग दुनिया की किसी भी बात में रमता नहीं था। घर वाले मुझे बुरी तरह फटकारते, परन्तु मैं अपनी सारी बातें चुपचाप अपने दादा से—जिन्हें मैं साक्षात् भगवान् नारायण समझता था—कह दिया करता था।

मैं — "स्वामी जी, मेरे पिताजी मुझे पीटते हैं ... "

मैं—"स्वामी जी, मेरी माँ मुझे बुरी तरह से फटकारती हैं।

वह — "एक ऐसा भी पिता है जो अपने बच्चों को कभी नहीं पीटता ; उसे खोजो।"

वह — " एक ऐसी मां है जो तुम्हें कभी फटकारेगी नहीं, वह तुम्हें केवल प्यार-ही-प्यार करेगी, उसे ढूंढो।"

× × ×

मैं — स्वामी जी : मेरे मास्टर बेतों से मेरी खबर लेते हैं "

वह — " एक ऐसा भी मास्टर है जो तुम्हें कभी भी बेंत नहीं लगायेगा न तुम्हें छेड़ेगा ही। वह तुम्हें ऐसी बातें सिखलायेगा जिन्हें तुम्हारे दुनिया के मास्टर सौ जन्म में भी नहीं सिखला सकेंगे। "

मैं— " मुझे किताबों में कुछ मजा नहीं मिलता।"

वह—(मेरे हृदय को थपथपा कर) " असली किताब तो यहाँ है, इसे खोलकर देखो, पढ़ो। फिर आप- ही आप तुम्हें सारा ज्ञान हासिल हो जायेगा।

मेरे अन्तर की दिन प्रतिदिन उनके उत्तरों से गाँठें खुलती गईं और अपने आप ही मैं आत्मविचार में लग गया। मैंने मन में यह दृढ़ निश्चय कर लिया कि उस 'परमपिता' के दर्शन करने ही हैं और उसका ज्ञान प्राप्त करना ही है, अवश्यमेव करना है। एक दिन वह बहुत ढंग से यह समझा रहे थे कि जो कुछ है सब-का-सब भगवान ही है, एकमात्र भगवान है, भगवान सर्वत्र है और सब कुछ है। इस पर मैंने उनसे पूछा — " स्वामी जी ! क्या मैं उनके दर्शन कर सकता हूं ?

" हाँ : हाँ : " उन्होंने स्नेह के साथ कहा।

" कैसे ? " मैंने आतुरता से पूछा।

"पुकारो, उन्हें पुकारो, " उन्होंने समझाते हुए कहा—

कैसे पुकारूँ स्वामी जी ?

"अरे भाई ; उन्हें पुकारने में क्या दिक्कत है ? वे सर्वव्यापक हैं, शुद्ध हैं, पवित्र हैं, सर्वशक्तिमान् हैं। चाहे जिस नाम से पुकारो वे सुनते हैं, अवश्य सुनते हैं। इन्हें शुद्ध ब्रह्म कहो या उन्हें सर्वशक्तिमान्, सर्वसमर्थ कहो उन्हें पुकारो या उनकी शक्ति को पुकारो। अच्छा सुनो, मैं तुम्हें एक मन्त्र सुनाता हूं, तुम उसे जपा करो और तुम उसके दिव्य चमत्कार को देखोगे। वह मन्त्र है " ओं शुद्धशक्ति; " इससे तुम्हारे सारे मनोरथ सिद्ध हो जायेंगे।

इस मन्त्र के साथ मेरे हृदय का एक विचित्र अकथनीय आकर्षण हो गया। उसके लिए हृदय में चाह उत्पन्न हो आई और रात दिन मैं बराबर उसका जाप करता रहा। यह मन्त्र मेरे हृदय की धड़कन के साथ मिल गया। मैं अपने हृदय की धड़कन में स्पष्ट सुनता था उस मन्त्र की ध्वनि; मुझे यह दिव्य मन्त्र प्रदान कर वह महात्मा इस संसार से चल बसे। इसके बाद मैं अनेक सन्त महात्माओं के संसार में आया और अनेक प्रकार की साधनाएं की। परन्तु अन्ततः मेरे लिये तो उस परम शुद्ध शक्ति के चरणों में पूर्ण आत्मसमर्पण का ही एकमात्र आधार हो गया है और इसी से मेरे जीवन में एक अद्भुत आनन्द है, जिसका मैं निरन्तर मान किया करता हूं। भक्ति की ज्वाला मेरे हृदय में अहर्निश प्रज्वलित रहती है। शुद्ध और शक्ति का वही सम्बन्ध है, जो सूर्य और उसकी किरणों का है।

महासाधन

सम्पूर्ण, निःशेष आत्मसमर्पण को ही मैं 'महासाधन' कहता हूँ। साधकों की प्राणदायिनी माता गीता का यह सर्वस्व है। लोग समझते हैं कि समर्पण एक बहुत आसान चीज है, परन्तु यह आसान नहीं है। समर्पण से सारा कार्य, सारी साधना, समग्र मनोरथ सफल हो जाते हैं। इसमें कोई भी संदेह नहीं। मुझे तो एकमात्र समर्पण से ही पूर्ण शान्ति, की पूर्ण आनन्द की अनुभूति हुई है। हठयोग और राजयोग की अपेक्षा समर्पण का मार्ग अधिक कठिन है। समर्पण में कर्म, भक्ति और ज्ञान का पूर्ण समन्वय है। हाँ, यह बात अवश्य है कि हमारा समर्पण पूर्णतः प्रीति पूर्वक होना चाहिये। नम्रता, आज्ञा-पालन, प्रभु की सेवा और भगवद्भाव से जगत के जीवों की यथाशक्ति सेवा सहायता करना — यह तो है शरीर का समर्पण। प्राणों का स्तर इतना सुदृढ़ होना चाहिये कि वह साधना के भार को सम्भाल सके, अहंकार को भगा सके; इच्छा, मोह, वासना, आसक्ति, ईर्ष्या, राग-द्वेष, लोभ, लालसा, मद मत्सर से साधक को अछूता रख सके। यह पूर्णतः नरम, कोमल, चिकना, मसृण और संवेदनशील होना चाहिये — जिसमें यह भगवत्कृपा के संस्पर्श और प्रभाव को बराबर अनुमान करता रहे। किसी भी व्यक्तिगत वासना, किसी भी अहंकार पूर्ण माँग या पूर्ति के द्वारा समर्पण को कलंकित नहीं करना चाहिये। चित्त सर्वथा शुद्ध और निर्मल हो, स्थिर हो, दृढ़ हो और हमारी समस्त इच्छाएं पुञ्जीभूत होकर भगवान को पुकार सकें, भगवान को ही प्राप्त करने के लिए तड़फ उठें! अहंकार को तो एकदम मिटा देना होगा। निःशेष कर देना पड़ेगा। साधक को इस बात का दृढ़ विश्वास होना चाहिये कि मनुष्य भगवान के हाथ यन्त्रमात्र है, भगवान उससे जो कुछ कराना चाहते हैं वही उसे करना पड़ता है। उसे यह अनुभव करना चाहिये कि स्वयं भगवान ही उसके प्राणों के प्राण हैं, जीवन के जीवन हैं, मस्तिष्क में बैठकर भगवान ही विचार करते हैं और हृदय में बैठकर वही आनन्द की तृप्ति करते हैं।

साधना के दो घोर शत्रु हैं अहंकार और ममकार, मैं और मेरा। इनके नाम मात्र से भी साधना के क्षेत्र से सब कुछ चौपट हो जाता है। बुद्धि के द्वारा आत्मा को अनात्मा से पृथक् करके भगवान के पथ में आगे बढ़ना चाहिये

मन इन्द्रियों पर पूरी चौकसी रखे। इन्द्रियाँ कभी-कभी मदमाते उद्दाम घोड़ों की तरह खाई-खंदक में फेंक गिराती हैं और मनुष्य विषय-वासनाओं के जंगल में भटकता फिरता है। मनुष्य अज्ञान के हाथ की कठपुतली हो जाता है। मन तो विषयों का स्फुरण स्थान है। मन हृदय में डूब जाये और हृदय में भगवान की ज्योति सदैव जगमगाती रहे—फिर चाहिए क्या? हृदय को इस बात का पूरा-पूरा विश्वास हो जाना चाहिए कि अधोगामी विषयों में कुछ भी नहीं है और प्रेम करने योग्य कोई वस्तु है तो वह है परम प्रियतम प्राणधन हरि। जब दिव्य प्रेम हृदय को स्पर्श करता है तो मार्ग अपने-ही आप सुगम हो जाता है और सारी कठिनाइयां आप-ही-आप हल हो जाती हैं। तब तो ऐसा होता है कि हमारा परम प्रियतम हमें अपनी भुजाओं में बांध कर अपने साथ लिए फिरता है। जब मन, बुद्धि, प्राण भगवान में डूब जायें, जब हृदय में उसी एक 'दिलबर' के लिए उसी एक 'महबूब' के लिए तड़फ रह जाये — बस, प्यार-भरी तड़फ और तड़पता हुआ प्यार रह जाये जब जगत् के भोग विलासों से चित्त आप-ही आप फिर जाये। जब साधक यह समझे, यह अनुभव करे कि शरीर जाये तो जाये, परन्तु भगवान के जाये बिना नहीं रह सकूंगा, जब उसे जीवन की अपेक्षा भी प्रभु प्रिय लगें तब उसे समझना चाहिए कि भगवदीय चेतना का उसमें अवतरण एवं स्फुरण हुआ है। तभी उस पर भगवान की दया उतरती है, दिव्य प्रकाश उस पर अपने आप बरसने लगता है। तभी उस के भीतर भागवती इच्छा अपना कार्य करने लगती है। साधक तब यह समझता है कि वह भगवान के हाथ का एक यन्त्रमात्र है और भगवान को जो इच्छा होती है वही उसके द्वारा कराता है। अन्यथा कुछ हो ही नहीं सकता। वह यह अनुभव करता है कि उसके फुफ्फुस में भगवान ही सांस लेते हैं, भगवान ही उस के हृदय में बैठे प्यार करते हैं, उसकी बुद्धि में बैठे विचार करते हैं और उसकी आत्मा में रहकर आनन्द का आस्वादन करते हैं। यह है समर्पण की पराकाष्ठा। इसके द्वारा मनुष्य स्वतः निश्चिन्त निर्द्वन्द्व और निर्लेप रहता है और उसके द्वारा भागवती शक्ति अपना कार्य करने लगती है। साधक अपने हृदय में भगवान के साथ नित्य युक्त रहता है। साधक भगवान को नहीं छोड़ता, भगवान साधक को नहीं छोड़ते। साधक का निवास होता है भगवान में,

भगवान का निवास होता है साधक में। इस प्रकार के समर्पण की प्रक्रिया हमारे प्राचीन ऋषियों-मुनियों ने बतलायी है और यही है इस युग के लिए परम साधन।

सिद्ध पुरुष

सिद्ध पुरुष यह जानता है कि भगवान ही उसकी आत्मा हैं। वह डंके की चोट से कह सकता है कि मैं आत्मा हूं, मैं ब्रह्म हूं। परन्तु सिद्ध पुरुष इस कारण किसी ऐसे भ्रम या अहंकार में नही पड़ेगा कि वह सोचने लगे कि वह सर्वशक्तिमान है, सर्वव्यापक है और स्वयं भगवान है या उसका प्रतिनिधि है। समाधि-साधकों को तो इस दिशा में बहुत ही सतर्क रहने की आवश्यकता है। नाम मात्र का अहंकार भी उसे ले डूबेगा। मनुष्य तो सीमाओं से आबद्ध हैं। वह ईश्वर का अंश अवश्य ही है, परन्तु ईश्वर नहीं है। अंश पूर्ण बराबर नहीं हो सकता, सूर्य की एक किरण सूर्य के समान नहीं हो सकती। जल का एक कण लघु सागर है—इसमें कोई संदेह नहीं है, परन्तु यह पूर्ण सागर तो नहीं है। साधक सदैव इस बात का ध्यान रखे कि वह जीवित है, क्योंकि भगवान का उसमें निवास है; वह सांस लेता है, क्योंकि भगवान उसके भीतर सांस लेते हैं; वह सोचता विचारता है, इस लिए कि उसकी बुद्धि में बैठे हुए भगवान अपनी बुद्धि से, उसकी बुद्धि को प्रकाशित किए हुए हैं और वह भगवान का साक्षात्कार करता है, क्योंकि भगवान ही उसके साथ सत्ता हैं। डायनेमो बिजली के प्रवाह से चलता है। स्वयं मशीनों में क्या शक्ति है कि कुछ भी कर सकें। उस अनन्त शक्ति के एक कण-मात्र से समस्त लोक-लोकान्तरों में जीवन-प्रवाह प्रवाहित हो रहा है। उसी शक्ति से यह जगत्-चक्र चल रहा है। मनुष्य उस शक्ति-कण का करोड़वें हिस्से का भी करोड़वां हिस्सा है या उससे भी कम। इसलिए उसे यह भूल नहीं जाना चाहिये कि चाहे कितनी भी उसकी शक्ति क्यों न हो, वह देश और काल से सीमित है, परिच्छन्न है और वह कदापि उस अनन्त सर्वशक्तिमान प्रभु की समानता नहीं कर सकता। इसलिए मनुष्य मात्र के लिए एक ही मार्ग है और वह मार्ग है समर्पण का। जिस प्रकार एक माला के मनके धागे

में पिरोये रहते हैं उसी प्रकार जप से लेकर समाधि तक समस्त साधनों का मूल आधार है यह समर्पण, सर्वस्वसमर्पण, नि:शेष सर्वात्मसमर्पण।

समर्पण

प्रभो ! मेरे देवाधिदेव ! मैं यह भूलूं नहीं कि तुम सदैव मेरे हृदयदेश में निवास करते हो। तुम्हीं मेरे जीवन के सूत्रधार हो। इस क्षण-क्षण बदलने वाले, पल-पल में बनने मिटने वाले संसार में जो कुछ भी हो रहा है, जो कुछ सामने आ रहा है, जो कुछ भी हिल-डुल रहा है और फिर आँखों से ओझल हो रहा है वह सारा ही तुम्हारी सत्ता से अनुप्राणित है, स्पन्दित है। मेरा मन प्राण तुम में ही निवास करे, और मेरा यह ज्ञान, यह चेतना बनी रहे कि तुम्हारी इच्छा के सिवा मेरी कोई गति नहीं, कोई आश्रय नहीं, कोई शरण नहीं, कोई अस्तित्व नहीं। यह शरीर तो मृत पिण्ड है, यह सजीव इस लिए है कि तुम इसमें सांस लेते हो। ओ मेरे प्रियतम ! मेरे प्राणाराम ! मैं अपने हृदय देश में सतत तुम्हारा आलिंगन-रस पाता रहूँ। जो कुछ करूं तुम्हारी प्रेरणा और संकेत से; तुम मेरे द्वारा अपना कार्य करो, अपना उद्देश्य साधो, मेरे हृदय में तुम्हारा ही प्रेम विराजे, तुम ही प्रेम रूप में विराजो; मेरी बुद्धि में तुम ही प्रकाश-रूप बने रहो : मेरे मस्तिष्क में तुम ही विचार करो। मेरे समस्त अहंकार को अपने में डुबो लो। प्रभो ! मेरे अन्दर तुम्हारे सिवा कुछ भी रह न जाए, तुम-ही-तुम रह जाओ। हे सर्वशक्तिमान ! सर्व समर्थ स्वामिन् ! भले ही मैं समाधि की अवस्था में तुम से एकाकार होकर तुम्हारी तरह हो जाऊं परन्तु यह भूलकर भी मैं न मान बैठूं कि मैं तुम्हारे सदृश हूं। मैं हूं ही क्या ? एक तुच्छ नगण्य नाचीज—जो कि अपनी एक-एक सांस के लिए तुम्हारी कृपा पर अवलम्बित है, तुम्हारी दया का मुंह जोहता है। तुम्हारे अनन्त महासागर के सम्मुख इस कण की क्या हस्ती है ? प्रभो ! मेरा अहंकार तुम ले लो। मेरे दयामय हरि ! मुझे नम्रता, दीनता प्रदान करो। ओ मेरे स्वामी ! तुम्हारी इच्छा मेरे जीवन में पूर्ण हो, वही मेरे भीतर बाहर हो—तुम ही मेरे भीतर साधना करो और तुम ही मेरे, भीतर सिद्ध होकर अपनी इच्छा पूर्ण करो।

2

श्रीगणेश-साधना

प्रथम चरण

सबसे पूर्व आदि पूज्य, विघ्न-नाशक श्रीगणेश जी के मन्त्र साधन की विधि यहाँ प्रस्तुत की जा रही है।

श्रीगणेश साधन मन्त्र—"ओं श्री ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गणपतये वर वरद सर्व्वजनम्मे वशमानय ठः ठः।"

श्रीगणेश पूजन यन्त्र—निम्न प्रदर्शित यन्त्र को अष्टगन्ध द्वारा भोजपत्र पर बना करके गणेश जी का पूजन करना चाहिए।

पूजन विधि—सबसे पहले प्रातःकाल नित्य कृत्यादि से निवृत्त होकर पीठ शक्तियों का न्यास करना चाहिए। यन्त्रस्थ केशर में पीठ शक्तियों का इस प्रकार पूजन करें :—

ओं तीव्रायै नमः, ओं ज्वालिन्यै नमः, ओं नन्दायै नमः, ओं भोगदायै नमः, ओं कामरूपिण्यै नमः ओं उग्रायै नमः, ओं तेजोवत्यै नमः, ओं रात्यायै नमः ओं विघ्ननाशिन्यै नमः।"

इसके पश्चात् मध्य में सर्वशक्तिकमलासनाय नमः, कहना चाहिए।

ऋष्यादि न्यास—इसके उपरांत ऋष्यादि न्यास करना चाहिए जो इस प्रकार है :—

"शिरसि गणक ऋषये नमः।
मुखे निचृद्गायत्रीच्छन्दसे नमः।
हृदि गणपतये देवतायै नमः।"

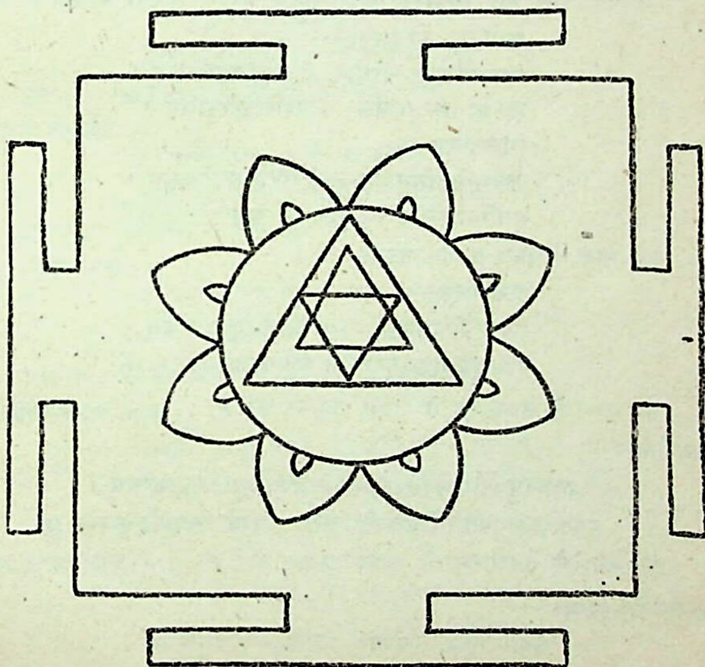
करांगन्यास—इसके उपरान्त कराङ्ग न्यास निम्न प्रकार से करना चाहिए—

ओं श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गां अंगुष्ठाभ्यान्नमः।

ओं श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गीं तर्ज्जनीभ्यां स्वाहा ।
ओं श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गूं मध्यमाभ्यां वषट् ।
ओं श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गैं अनामिकाभ्यां हुम् ।
ओं श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गौं कनिष्ठाभ्यांव्वषट् ।
ओं श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् ।

बिल्कुल इसी प्रकार हृदयादि में करना चाहिए ।

कुछ विद्वानों का मत है "ओं गां हृदयाय नमः, ओं गीं शिरसे स्वाहा—" आदि षट् तत्व बीजों से दीर्घ मात्रा प्रकल्पित की गई है । इसे वैशिष्ट्य समझना चाहिए ।



षोडशोपचार क्रम से पूजाविधि—

ध्यान-मन्त्र—

एकदन्तं शूर्पकर्णङ्गजवक्त्रञ्चतुर्भुजम् ।
पाशांकुशधरन्देवम्मोदकान्बिभ्रतङ्करैः ।।
रक्तपुष्पमयीम्मालां कण्ठे हस्ते परां शुभाम् ।
भक्तानाँव्वरदं सिद्धिबुद्धिभ्यां सेवितं सदा ।।
सिद्धिबुद्धिप्रदंन्नृणान्धर्म्मार्थकाममोक्षदम् ।
ब्रह्मरुद्रहरीन्द्राद्यैस्संस्तुतम्परमर्षिभिः ।।"

उपरोक्त मन्त्र का उच्चारण करते समय 'ध्यान' करना चाहिए ।

आवाहन का मन्त्र—

"आगच्छ जगदाधार सुरासुरवरार्च्चित ।
अनाथनाथ सर्व्वज्ञ गीर्व्वाणपरिपूजित ।"

आसन-मन्त्र—

स्वर्णसिंहासनन्दिव्यन्नानारत्नसमन्वितम् ।
समर्प्पितम्मया देव तत्र त्वं समुपाविश ।।"

यह मन्त्र बोलकर आसन प्रदान करें ।

पाद्य-मन्त्र—

"देव देवेश सर्व्वेश सर्व्वतीर्थाहृतञ्जलम् ।
पाद्यङ्गृहाण गणप गन्धपुष्पाक्षतैर्य्युतम् ।।"

इस मन्त्र के उच्चारण से 'पाद्य' प्रदान करें ।

अर्घ्य-मन्त्र—

"प्रवालमुक्ताफलपूगरत्नन्ताम्बूलजाम्बूनदमष्टगन्धम् ।
पुष्पाक्षतायुक्तममोघशक्ते दत्तम्मयार्घ्यं सफली कुरुष्व ।।

इस मन्त्र के उच्चारण से 'अर्घ्य' प्रदान करें ।

आचमनीय-मन्त्र—

"गंगादिसर्व्वतीर्त्थेभ्यः प्रार्त्थितन्तोयमुत्तमम् ।
कर्प्पूरैलालवंगादिवासितं स्वीकुरु प्रभो ।।"

इस मन्त्र के उच्चारण से 'आचमनीय' प्रदान करें।

तैल-मन्त्र—

"चम्पकाशोकबकुलमालतीमल्लिकादिभिः।
वासितं स्निग्धताहेतुन्तैलञ्चारु प्रगृह्यताम्।"

इस मन्त्र के उच्चारण से 'तैल' प्रदान करें।

दुग्ध-स्नान-मन्त्र—

"कामधेनुसमुद्भूतं सर्वेषाञ्जीवनम्परम्।
पावनं यज्ञहेतुन्ते पयः स्नानार्थमर्पितम्॥"

इस मन्त्र के उच्चारण से 'दुग्ध-स्नान' करें।

दधि-स्नान-मन्त्र—

"धेनुदुग्धसमुद्भूतं शुद्धं सर्व्वगतं प्रियम्।
मयानीतन्दधिवरं स्नानार्थम्प्रतिगृह्यताम्।"

इस मन्त्र के उच्चारण से "दधि-स्नान' करें।

घृत-स्नान-मन्त्र—

"नवनीतसमुत्पन्नं सर्व्वसन्तोषकारणम्।
यथाङ्गन्देवताहारङ्घृतं स्नातुं समर्प्पितम्॥"

इस मन्त्र के उच्चारण से 'घृत स्नान' करें।

मधु-स्नान-मन्त्र—

"रक्तसारघसम्भूतं सर्व्वतेजोविवर्द्धनम्।
सर्वपुष्टिकरन्देव मधु स्नानार्थमर्प्पितम्।"

इस मन्त्र के उच्चारण से मधु-स्नान' करायें।

शर्करा-स्नान-मन्त्र—

"इक्षुसारसमुद्भूतां शर्करां सुमनोहराम्।
मलापहारिणीं स्नातुङ् गृहाण त्वम्मयार्प्पिताम्॥"

इस मन्त्र के उच्चारण से 'शर्करा-स्नान' करायें।

गुड-स्नान-मन्त्र—

"सर्व्वमाधुर्य्यताहेतुस्वादुस्सर्व्वप्रियङ्करः।
पुष्टिकृत्स्नातुमानीत इक्षुसारभवो गुडः॥"

इस मन्त्र के उच्चारण से 'गुड़-स्नान' करायें।

मधुपर्क-मंत्र—

"कांस्ये कांस्येन पिहितो दधिमध्वाज्यपूरितः ।
मधुपर्को मयानीतः पूजार्त्थम्प्रतिगृह्यताम् ॥"

इस मन्त्र के उच्चारण से 'मधु-पर्क' प्रदान करें।

शुद्धोदक-स्नान-मंत्र—

"सर्व्वतीर्त्थाद्धृतन्तोयम्मया प्रार्त्थनया विभो ।
सुवासितङ् गृहाणेदं सम्यक् स्नातुं सुरेश्वर ॥"

इस मंत्र के उच्चारण से शुद्धोदक-स्नान करायें।

वस्त्र-मंत्र —

"रक्तवस्त्रयुगन्देव लोकलज्जानिवारणम् ।
अनर्घ्यमतिसूक्ष्मञ्च गृहाणेदम्मयार्पितम् ॥"

यज्ञोपवीत-मंत्र—

"राजतम्ब्रह्मसूत्रञ्च काञ्चनं रक्तसंय्युतम् ।
भक्त्या मयार्पितं देव गृहाण परमेश्वर ।"

इस मंत्र के उच्चारण से 'यज्ञोपवीत' प्रदान करें।

आभूषण-मंत्र—

"अनेकरत्नयुक्तानि भूषणानि बहूनि च ।
तत्तदङ्गे काञ्चनानि योजयामि तवाज्ञया ॥"

इस मन्त्र के उच्चारण से 'आभूषण' प्रदान करें।

चन्दन-मंत्र—

अष्टगन्धसमायुक्तं रक्तचन्दनमुत्तमम् ।
द्वादशाङ्गेषु ते देव लेपयामि कृपाङ् कुरु ॥"

इस मंत्र के उच्चारण से 'चन्दन' प्रदान करें।

अक्षत-मंत्र—

"रक्तचन्दनसंमिश्रांस्तन्दुलांस्तिलकोपरि ।
शोभार्थं सम्प्रदास्यामि गृहाण परमेश्वर ॥"

इस मंत्र के उच्चारण से 'अक्षत' प्रदान करें।

पुष्प-मंत्र—

"पाटलं कर्णिकारञ्च गन्धकं रक्तपङ्कजम् ।
भृंगरम्मालतीपुष्पं गृहाण सुमनोहरम् ।"

इस मंत्र के उच्चारण से 'पुष्प' प्रदान करें ।

धूप-मंत्र—

"दशाङ्गङ्गु ग्गुलन्धूपं सर्व्वसौगन्ध्यकारकम् ।
सर्व्वपापक्षयकरन्त्वं गृहाण मयार्प्पितम् ।।"

इस मंत्र के उच्चारण से 'धूप' प्रदान करें ।

दीपक-मंत्र—

"सर्व्वज्ञ सर्वलोकेश तमोनाशनमुतमम् ।
गृहाण मङ्गलन्दीपन्देव देवनमोऽस्तु ते ।"

इस मंत्र के उच्चारण से 'दीपक' प्रदर्शित करें ।

नैवेद्य-मंत्र—

"नानापक्वान्नसंयुक्तम्पायसं शर्करान्वितम् ।
नानाव्यञ्जनशोभाढ्यं शाल्योदनमनुत्तमम् ।।
दधिदुग्धघृतैर्य्युक्तं ल्लवङ्गैलासमन्वितम् ।
मरीचिचूर्णसहितन्त्वथिकावटकान्वितम् ।।
सजिकाधान्यसंय्युत्क्तम्मेथीपिष्टं सतक्रकम् ।
हिङ्गजीरककूष्माण्डम्मरीचिमार्षपिष्टकैः ।।
सम्पादितैः सुपक्वैश्च भर्ज्जितैर्व्वटकैर्य्युतम् ।
मोदकापूपलड्डूकशष्कुलीमण्डकादिभिः ।।
पर्प्पटैरपि सय्युक्तन्नैवेद्यममृतान्वितम् ।
हारिद्राहिङ्गलवणसहितं सूपमुत्तमम् ।।
ससामुद्रं गृहाणेदम्भोजनङ् कुरु सादरम् ।।"

इन मंत्रों के उच्चारण से 'नैवेद्य' प्रदान करें ।

आचमनीय-मंत्र—

"सुतृप्तिकारकन्तोयं सुगन्धञ्च पिबेच्छया ।
त्वयि तृप्ते जगत्तृप्तन्नित्यतृप्ते महात्मनि ।।

उत्तरापोशनार्थन्ते दद्मि तोयं सुवासितम् ।
मुखपाणिविशुद्ध्यर्थम्पुनस्तोयन्ददामि ते ॥"

इस मंत्र के उच्चारण से 'आचमनीय' प्रदान करें ।

फल-मंत्र—

"दाडिमम्मधुरन्निम्बुजम्वाम्रपनसादिकम् ।
द्राक्षारम्भाफलम्पक्वङ्कर्कन्धू: खार्जुरम्फलम् ॥
नारिकेलञ्च नारिङ्गमञ्जिरञ्जम्बिरन्तथा ।
उर्व्वारुकञ्च देवेश फलान्येतानि गृह्यताम् ॥"

आचमनीय कर उद्वर्त्तनादि मंत्र—

"मुखपाणिविशुद्ध्यर्थम्पुनस्तोयन्ददामि ते ।
गृहाण चन्दनञ्चारु कराङ्गोद्वर्तनं शुभम् ॥"

इस मंत्र द्वारा 'आचमनीय सहित करोद्वर्त्तन' प्रदान करें ।

सिन्दूर मंत्र—

"चारुश्मलूरसम्भूतंव्वंशसारसमुद्भवम् ।
सीमन्तभूषणञ्चूर्णाल्लाक्षारञ्जितमस्तु ते ॥"

इस मंत्र के उच्चारण से 'सिन्दूर' प्रदान करें ।

ताम्बूल-मंत्र—

"सचन्द्रपूगवर्णाढ्यङ्खाद्यस्रादिरसंय्युतम् ।
एलालवङ्गसंमिश्रं ताम्बूलङ्केसरान्वितम् ॥"

इस मंत्र द्वारा 'ताम्बूल' प्रदान करें ।

दक्षिणा-मंत्र—

"न्यूनातिरिक्तपूजायाः सम्पूर्णाफलहेतवे ।
दक्षिणाङ्काञ्चनीन्देव स्थापयामि तवाग्रतः ॥"

इस मंत्र द्वारा 'दक्षिणा' प्रदान करें ।

माला मंत्र—

"सितपीतैस्तथा रक्तैर्ज्जलजैः कुसुमैः शुभैः ।
ग्रथितां सुन्दराम्मालाङ्गृहाण परमेश्वर ॥"

इस मंत्र के उच्चारण से 'माला' प्रदान करें ।

दूर्वा-मन्त्र—

"हरिता श्वेतवर्णा वा पञ्चत्रिपत्रसय्युताः ।
दूर्वाङ्कुरा मया दत्ता एकविंशतिसम्मिताः ॥

इस मन्त्र द्वारा 'दूर्वा' प्रदान करें ।

प्रदक्षिणा-मन्त्र—

"एकविंशतिसंख्याकाः कुर्य्यादेव प्रदक्षिणाः ।
पदे पदे ते देवेंश नश्यन्तु पातकानि मे ॥"

इस मन्त्र द्वारा 'प्रदक्षिणा' करें ।

आरात्रिक-मंत्र—

"औदुम्बरे राजते वा कांस्ये काञ्चनसम्भवे ।
पात्रे प्रकल्पितान्दीपान्गृहाण चतुरर्पितान्
पञ्चारार्त्तिम्पञ्चदीपैर्द्दीपिताम्परमेश्वर ।
चारुचन्द्रनिभं दीपं गृहाण वीचिवारणम् ॥
यथास्य नेक्ष्यते भस्म तथा पापं विनाशय ॥"

श्रीगणेश षडाक्षर-मन्त्र—

"वक्रतुंडाय हुं ।"

यह श्रीगणेश जी का षडाक्षर मन्त्र है ।

इस मन्त्र के भार्गव ऋषि अनुष्टुप् छन्द, विघ्नेश देवता व बीजशक्ति है तथा अभीष्ट सिद्धि में इसके जप का विनियोग है ।

साधनविधि—

प्रथम षडङ्गन्यास करके एक लाख की संख्या में मन्त्र का जप करके अष्ट द्रव्यों द्वारा दशांश होम करें ।

ध्यान का स्वरूप—

इस मन्त्र के साधन में श्रीगणेश जी का ध्यान इस प्रकार कहा गया है :—

"उद्यद्दिनेश्वररुचिं निजहस्तपद्मैः
पाशांकुशाभयवरान्दधतं गजास्यम् ।

"रक्तांबरं सकलदु:खहरं गरोशं
ध्यायेत्प्रसन्नमखिलाभरणाभिरामम् ॥"

अन्य सभी क्रियायें पूर्वोक्त मन्त्र की भांति ही करें। अष्ट द्रव्यों के सम्बन्ध में इस प्रकार कहा गया है —

"इक्षव: सक्तवो रंभाफलानि चिपिटास्तिला: ।
मोदका नारिकेलानि लाजा द्रव्याष्टकं स्मृतम् ॥"

विनायक के इस मन्त्र के साथ मन्त्र में पीठशक्तियों का पूजन करें। पीठशक्तियों के नाम इस प्रकार हैं :—

(1) तीव्रा, (2), चालिनी, (3) नंदा, (4) भोगदा, (5) कामरूपिणी, (6) उग्रा, (7) तेजोवती, (8) सत्या और (9) विघ्ननाशिनी ।

प्रतिदिन दो सहस्र की संख्या में 6 मास तक इस मन्त्र का जप करने से दरिद्रता नष्ट हो जाती है।

श्रीगणेश जी का एकत्रिंशद्वर्ण मंत्र—

"रायस्पोषस्य ददिता निधिदो रत्नधातुमान्नक्षोहणीबलगहनो वक्रतुंडाय हुं ।"

यह श्रीगणेश जी का मन्त्र इकत्तीस वर्णं का है। इसकी साधन विधि व पूजनविधि पूर्वोक्त मन्त्र की भांति ही की जाती है।

श्रीगणेश जी के अन्य मंत्र—

"मेघोल्काय स्वाहा ।" इस मन्त्र का जप एक लाख की संख्या में करना चाहिए। अन्य सब विधियाँ पूर्ववत् हैं।

"हस्तिपिशाचि लिखे स्वाहा ।"

इस मन्त्र का जप भी एक लाख की संख्या में करना चाहिए। अन्य सभी विधियां पूर्ववत् हैं।

ओं हीं ग्रीं ह्रीं ।

इस चार अक्षर के मंत्र की साधन विधि भी पूर्ववत् ही है।

लक्ष्मी-गणेश-मन्त्र—

"ओं श्रीं गं सौम्याय गणपतये वरवरद
सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा।"

यह अट्ठाईस वर्ण वाला मन्त्र लक्ष्मीगणेश का है।

इस लक्ष्मी विनायक मन्त्र के अन्तर्यामी ऋषि, गायत्री छन्द, लक्ष्मी विनायक देवता, वीज तथा स्वाहा शक्ति हैं। अभीष्ट सिद्धि के लिये इसके जप का विनियोग है। इस मत्र का चार लाख की संख्या में जप करके विल्व की समिधाओं से दशांश होम करना चाहिए।

(1) वलाका, (2) विमला, (3) कमला, (4) वनमालिका, (5) विभीषिका, (6) मालिका, (7) शाङ्करी (8) सुवालिका। —इन आठ शक्तियों की अंग पूजा करनी चाहिए। दक्षिण तथा वामपार्श्व में शंख और पद्मनिधि की पूजा करनी चाहिए तथा लोकपाल और उनके अस्त्रों की बाह्य भाग में पूजा करनी चाहिए। इस विधि द्वारा साधन करने पर मंत्र सिद्ध हो जाता है तथा साधक की समस्त मनोभिलाषायें पूर्ण हो जाती हैं। नाभि-पर्यन्त जल में खड़े होकर सूर्यमण्डल की ओर दृष्टि गढ़ाये हुए इस मंत्र का तीन लाख की संख्या में जप करने से धन की वृद्धि होती है।

त्रैलोक्यमोहनकर गणेश-मंत्र—

वक्रतुण्डकदंष्ट्राय क्लीं ह्रीं श्रीं गं गणपतये वर
वरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा।

इस मंत्र के गणक ऋषि, गायत्री छन्द तथा त्रैलोक्य मोहनकर गणेश देवता हैं। अभीष्ट सिद्धि में इनके जप का विनियोग है।

ध्यान और जप—

गदावीजपूरे धनुशूलचक्रे सरोजोत्पले पाशधान्याग्रदन्तान्।
करैः सन्दधानं स्वशुंडाग्रराजन्मणिकुम्भमंकाधिरूढं स्वपत्न्या।
सरोजन्मनां भूषणानां भरेणोज्ज्वलद्धस्ततन्व्या समालिङ्गिताङ्गम्।
करीन्द्राननं चन्द्रचूडं त्रिनेत्रं जगन्मोहनं रक्तकान्ति भजेत्तम्।

उपरोक्त मंत्र का चार लाख की संख्या में जप करके अष्ट द्रव्यों का दशांश होम करना चाहिए तथा पूर्वोक्त पीठों एवं दिक्पालों की उनके अस्त्रों

सहित पूजा करनी चाहिए। इस मंत्र को सिद्ध करके आप तीनों लोकों को मोहित कर सकते हैं।

हरिद्रा गणेश मंत्र—

"ओं हुं गं ग्लौं हरिद्रागणपतये वरद सर्वजन-
हृदयं स्तम्भय स्तम्भय स्वाहा।"

इस मंत्र के मदन ऋषि, अनुष्टुप् छन्द तथा हरिद्रा गणनायक देवता हैं। अभीष्ट सिद्धि के लिए इसके जप का विनियोग है।

ध्यान और जपविधि—

इस मंत्र का ध्यान निम्न प्रकार से करें—

"पाशाङ्कुशौ मोदकमेकदन्तं करैर्दधानं कनकासनस्थम्।
हरिद्रखण्डं प्रतिमं त्रिनेत्रं पीतांशुकं रात्रिगणेशमीडे।"

इस मन्त्र का चार लाख की संख्या में जप करके हरिद्रा चूर्ण मिश्रित दशांश चावलों का होम करना चाहिए तथा ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए, पूर्वोक्त पीठ, अङ्ग मातृकादि का पूजन करना चाहिए। शुक्ल पक्ष की चतुर्थी को क्वारी कन्या के हाथ से हरिद्रा (हल्दी) पिसवा कर अपने शरीर पर लेप करके स्नानोपरान्त गणेश जी का पूजन करके तर्पण करते हुए आठ सहस्र की संख्या में मन्त्र का जप करके, घृत मिश्रित पुओं का एक सो की संख्या में हवन करके ब्रह्मचारियों को भोजन कराये तथा कुमारियों को सन्तुष्ट कर, गुरु से अभिलषित फल की प्राप्ति होती है। शत्रुओं का मुख स्तंभित होता है। जल, अग्नि, चोर, सिंह आदि हिंस्र जन्तुओं का निरोध होता है।

वन्ध्या स्त्री को रजस्नान से निवृत्त होकर गणेश जी का पूजन करना चाहिए तथा एक पल हल्दी को गोमूत्र में पीसकर उसको एक हजार की संख्या में इस मन्त्र से अभिमंत्रित करना चाहिए। फिर कन्या तथा ब्रह्मचारियों को लड्डुओं का भोजन कराना चाहिए। तत्पश्चात् पूर्ववत् हल्दी का पूजन करना चाहिए तथा उक्त अभिमंत्रित पिसी हुई हल्दी का पान करना चाहिए। इस प्रकार करने से गुणवान् पुत्र की प्राप्ति होती है।

उच्छिष्ट गणेश साधन
(द्वितीय चरण)

यहाँ पर अब उच्छिष्ट गणेश साधन मन्त्र एवं पूजन-विधि प्रस्तुत की जा रही है।

उच्छिष्टगणेश मन्त्र :—

(क) 'ओं हस्तिपिशाचिनि खे ठः ठः ।'

(ख) 'ओं हस्तिपिशाचिनि खे स्वाहा ।'

(ग) 'गं हस्तिपिशाचिनि खे स्वाहा ।'

उपरोक्त तीनों मन्त्रों में से किसी एक मन्त्र द्वारा उच्छिष्ट-गणेश का साधन किया जा सकता है

इस देवता की आराधना में तिथि, वार आदि का कोई नियम नहीं है उपवास आदि करने की आवश्यकता नहीं होती । जो मनुष्य जिस मनोरथ से इस देवता की आराधना करता है उसकी वह अभिलाषा पूर्ण होती है ।

प्रयोग विधि—

सामान्यविधि के अनुसार प्रातः कृत्यादि से निवृत्त होकर प्राणायाम के पश्चात् सभी कार्यों का सम्पादन करना चाहिए। उसके पश्चात् ऋष्यादि न्यास करना चाहिए।

ऋष्यादि न्यास इस प्रकार करें :—

"शिरसि सुघोरऋषये नमः ।
मुखे निविडगायत्रीछन्दसे नमः ।
हृदि उच्छिष्टगणपतये नमः ।"

करांग-न्यास—

ऋष्यादि न्यास के पश्चात् निम्नलिखित विधि से कराङ्ग न्यास करना चाहिए ।—

ओं अंगुष्ठाभ्यां नमः ।
ओं तर्जनीभ्यां स्वाहा ।
ओं मध्यमाभ्यां वषट् ।
ओं अनामिकाभ्यां हुँ ।

ओं कनिष्ठाभ्यां वौषट्।
ओं करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।
ओं हृदयाय नमः।
ओं शिरसे स्वाहा।
ओं शिखायै वषट्।
ओं कवचाय हुं।
ओं नेत्रत्रयाय वौषट्।
ओं करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

इस विधि से कराङ्ग न्यास करने के पश्चात् ध्यान करना चाहिए।

ध्यान का स्वरूप—

"रक्तमूर्ति गणेशं च सर्वाभरणभूषितम्।
रक्तवस्त्रं त्रिनेत्रं च रक्तपद्मासने स्थितम्॥
चतुर्भुजं महाकायं द्विदन्तं सस्मिताननम्।
इष्टं च दक्षिणे हस्ते दन्तं च तदधः करे॥
पाशांकुशौ च हस्ताभ्यां जटामण्डलवेष्टितम्।
ललाटे चन्द्ररेखाढ्यं सर्वालंकारभूषितम्॥"

भावार्थ—"उच्छिष्ट गणेश रक्त वर्ण हैं। उनके वस्त्र, पहिनावा तथा नेत्र लाल वर्ण के हैं। रक्त-कमल के आसन पर विराजमान हैं। उनके चार हाथ हैं, शरीर बड़ा है, दो दांत हैं तथा मुख पर हास्य की रेखा सदैव विद्यमान रहती है। उनके दांई ओर के ऊपर हाथ में वरमुद्रा है तथा नीचे का हाथ एक दांत को पकड़े हुये है। बांई ओर के ऊपर हाथ में पाश है तथा नीचे के हाथ में अंकुश है। उनके मस्तक पर जटामण्डल तथा अर्द्धचन्द्र सुशोभित है।"

पूजन विधि —

ध्यान के पश्चात् मूल मंत्र से अर्घ्य स्थापित करके, अर्घ्य के जल से पूजा के उपकरण द्रव्य तथा अपने शरीर पर छींटे देने चाहिएं। फिर दूसरी बार देवता का ध्यान करके उन्हें अष्टदल पद्म में स्थापित करे। फिर पंचोपचार से देवता की पूजा करके अष्टदल पद्म के पूर्वादि पत्र में 'ओं वक्रतुण्डाय

स्वाहा, ओं एकदन्ताय स्वाहा, ओं लम्बोदराय स्वाहा, ओं विकटाय स्वाहा, ओं विघ्नेशाय स्वाहा, ओं गजवक्त्राय स्वाहा, ओं विनायकाय स्वाहा, ओं गणपतये स्वाहा, तथा मध्य में ओं हस्तिमुखाय स्वाहा,

इस मंत्र से देवताओं की पूजा करे। फिर तीन मूल देवता ओं की पूजा करके, यथाशक्ति मूल मंत्र का जप करते हुए जप समर्पण करे।

इसके पश्चात् "ओं उच्छिष्टगणेशाय महाकालाय एष बलिर्नमः" इस मंत्र से बलि देकर, आचमनीयादि प्रदान करे। विशेष फल की इच्छा रखने वाले व्यक्ति को "ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रूं फट् स्वाहा"—इस मंत्र से पुनर्वार बलि प्रदान करनी चाहिए, फिर एक पुष्प दक्षिण दिशा में फेंककर 'क्षमस्व' कहते हुए विसर्जन करना चाहिए।

पुरश्चरणविधि—

इस मंत्र के पुरश्चरण में सोलह सहस्र की संख्या में मंत्र का जप करना चाहिए। कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी से आरम्भ करके शुक्ल पक्ष की चतुर्थी तक स्त्री (पत्नी) के सहयोग से (साथ लेकर) प्रतिदिन एक सहस्र की संख्या में जप करना चाहिए। देवता को प्रतिदिन मधु से स्नान कराकर गुड़-पायस का नैवेद्य प्रदान करना उचित है। भोजनोपरान्त आचमन किए बिना ही उच्छिष्ट (जूठे) मुख से देवता का जप करना चाहिए।

श्वेत आक या लाल चन्दन द्वारा अंगुष्ठ प्रमाण उच्छिष्ट गणपति की प्रतिमूर्ति बनाकर उसमें प्राण प्रतिष्ठा पूर्वक, ब्राह्मण, अग्नि तथा गुरु के समीप सोलह सहस्र की संख्या में मंत्र का जप करने पर ही मंत्र की सिद्धि होती है। केवल मानसिक जप ही करना चाहिए। कुछ तन्त्रों के मतानुसार कराङ्ग न्यास नहीं करना चाहिए तथा "मैं स्वयं ही गणेश स्वरूप हूँ" इस प्रकार चिन्तन करते हुये जप करना चाहिए। इस सम्बन्ध में गर्ग मुनि का यह कहना है कि निर्जन वन में बैठकर लाल चन्दन से लिप्त ताम्बूल (पान) को चबाते हुए जप करना चाहिए। अन्य तन्त्रानुसार साधक को सब प्रकार

के आभूषणों से विभूषित होकर जप करना चाहिए। एक अन्य तन्त्र के मतानुसार इस देवता की पूजा में लड्डू खाते हुए जप करना चाहिए।

भृगु मुनि के मतानुसार उच्छिष्ट-गणपति की आराधना में फल भक्षण करते हुए जप करना चाहिए तथा विभीषण के मतानुसार नैवेद्य का भोजन करते हुए जप करना चाहिए।

उच्छिष्ट गणेश का एकोनविंशति वर्णमन्त्र—

"ओं नमः उच्छिष्टगणेशाय हस्तिपिशाचिनि खे स्वाहा।"

इसकी साधन विधि पूर्ववत् है। यह उन्नीस वर्ण का मन्त्र है।

उच्छिष्ट गणेश का सप्तत्रिंशदक्षर मन्त्र—

"ओं नमो भगवते एकदंष्ट्राय हस्तिमुखाय लम्बोदराय उच्छिष्टमहात्मने आं क्रों ह्रीं गं घे घे स्वाहा।"

यह सैंतीस अक्षर का मंत्र है और साधन विधि पूर्ववत् है।

उच्छिष्ट गणेश का द्वात्रिंशद्वर्ण मंत्र—

"ओं हस्तिमुखाय लम्बोदराय उच्छिष्टमहात्मने
आं क्रों ह्रीं हूँ घे घे उच्छिष्टाय स्वाहा।"

यह बत्तीस वर्ण का मन्त्र है, साधन विधि पूर्ववत् है।

उच्छिष्ट गणपति के विशेष प्रयोग—

1. राजद्वार, वन, सभा, गोत्र, समाज, विवाद, व्यवहार, युद्ध, शत्रु संकट, द्यूतक्रीड़ा, विपत्तिकाल, ग्रामदाह चोर-भय, तथा सिंह व्याघ्रादि का भय उपस्थित होने पर इस देवता के स्मरण से समस्त भयों का तथा विघ्न का नाश हो जाता है।

2. मूल मन्त्र द्वारा अपामार्ग की समिधा को एक सौ आठ बार अभिमन्त्रित करके होम करने पर साधक को सौभाग्य की प्राप्ति होती है।

3. इस मन्त्र द्वारा एक करोड़ की संख्या में होम करने पर अणिमादिक अष्ट सिद्धियों की प्राप्ति होती है।

4. इस मन्त्र को भोजपत्र पर लिख कर कंठ अथवा मस्तक पर धारण करने से सौभाग्य की वृद्धि तथा सर्वत्र रक्षा होती है।

5. विवाहार्थी मनुष्य यदि पांच सहस्त्र की संख्या में इस मन्त्र का जप करे तो उसे श्रेष्ठ स्त्री की प्राप्ति होती है।

6. जिस साध्य व्यक्ति का नाम लेकर मूलमन्त्र का एक सहस्त्र की संख्या में जप किया जाय, वह वशीभूत होता है।

7. इस मन्त्र द्वारा दस सहस्त्र की संख्या में होम करके अभिलषित राजा को वशीभूत किया जा सकता है।

8. उच्छिष्ट गणेश का मन्त्र एक लाख की संख्या में जपने पर राजा, दो लाख की संख्या में जपने पर राजा के समस्त कर्मचारी आदि वशीभूत होते हैं।

9. बन्दर की हड्डी से बनी कील को मूल मत्र से अभिमन्त्रित करके जिस मनुष्य के घर में गाड़ दिया जाये, उसका उच्चाटन होता है।

10. उपर्युक्त प्रकार की कील को यदि किसी बाजार में गाड़ दिया जाये तो वहाँ क्रय-विक्रय का व्यापार अवरुद्ध हो जाता है।

11. उपर्युक्त प्रकार की कील को यदि कलाल (शराब बनाने व बेचने वाले) के घर में गाड़ दिया जाये तो उसके घर में रखी हुई शराब बिगड़ जाती है।

12. उपर्युक्त कील को यदि किसी वेश्या के घर में गाड़ दिया जाये तो उसका कोई आदर नहीं करता।

13. उपर्युक्त कील को यदि किसी क्वारी कन्या के घर में गाड़ दिया जाये तो उसका विवाह नहीं होता।

14. मनुष्य की हड्डी से बनी कील को मूल मन्त्र से अभिमन्त्रित करके किसी मनुष्य के घर में गाड़ दिया जाये तो उसकी मृत्यु हो जाती है। कील उखाड़ लेने पर दोष की शान्ति हो जाती है।

3

गणपति-पूजन

किसी भी कार्य एवं साधन के प्रारम्भ में श्रीगणेश जी का पूजन करना अत्यावश्यक कहा गया है। अतः यहाँ हम श्रीगणेश जी के पूजन की विधि का वर्णन कर रहे हैं।

सर्वप्रथम साधक को चाहिए कि वह प्रातःकाल उठकर नित्य कर्म स्नानादि से निवृत्त होकर शुद्ध वस्त्र धारण कर, प्रथम सामग्री संकलन, आचमन, दीप-पूजन, अर्घ्य-स्थापन आदि कृत्य समाप्त करके सर्वविघ्ननाशक गणपति का पूजन प्रारम्भ करे।

सबसे पूर्व हाथ में दूर्वा, अक्षत (चावल) और पुष्प लेकर निम्नलिखित मन्त्रों का सस्वर उच्चारण करे—

ओं सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो गणाधिपः॥
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि॥
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा।
संग्रामे सङ्कटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते॥
नवरत्नमयं द्वीपं स्मरेदिक्षुरसाम्बुधौ।
तद्वीचिगीतपर्यन्तममन्दमारुतसेवितम्॥
मन्दारपारिजातादिकल्पवृक्षलताकुलम्।
उद्भूतरत्नच्छायाभिररुणीकृतभूतलम्॥
उद्यद्दिनकरेन्दुभ्यामुद्भासितदिगन्तरम्।
तस्य मध्ये परिजातन्नवरत्नमयं स्मरेत्॥

ऋतुभिः सेवितं षड्भिरनिशम्प्रीतिवर्द्धनैः ।
तस्याधस्तान्महापीठरचिते मातृकाम्बुजे ।
षट्कोणान्तस्त्रिकोणाढ्यम्महागणपतिं स्मरेत् ।।
हस्तीन्द्राननमिन्दुचूडमरुणच्छायन्त्रिनेत्रं रसा-
दाश्लिष्टम्प्रियया सपद्मकरया स्वाङ्कस्थया सन्ततम् ।
बीजापूरगदाधनुस्त्रिशिखियुक्चक्राब्जपाशोत्पल-
कब्जाभः स्वविषाणरत्नकलशौ हस्तैर्दहन्तम्भजे ।
गण्डपालीगलद्दानपूरलालसमानसान् ।
द्विरेफान्कर्णतालाभ्यां वारयन्तम्मुहुर्मुहुः ।।
कराग्रधृतमाणिक्यकुम्भवक्त्रविनिस्सृतै-
रत्नवर्षैः प्रीणयन्तं साधकम्मदविह्वलम्
माणिक्यमुकुटोपेतं रत्नाभरणभूषितम् ।।

उपरोक्त मन्त्रोच्चारण करके हाथ के दूर्वा अक्षत तथा पुष्प को गणेश जी की मूर्ति के समीप समर्पित करे ।

तत्पश्चात् तिल, कुश और जल हाथ में लेकर निम्न संकल्प करे—

संकल्प

ओं विष्णुः विष्णुः विष्णुः नमः परमात्मने श्रीपुराणपुरुषोत्तमाय । विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्याद्यब्रह्मणो द्वितीये प्रहरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे द्वितीये यामे तृतीये दिवसे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे आर्य्यावर्तान्तर्गतदेशैकपुण्यक्षेत्रे, 'अमुक' सम्वत्सरे 'अमुक' अयने, 'अमुक' ऋतौ 'अमुक' मासे, 'अमुक' पक्षे, 'अमुक' तिथौ, 'अमुक' नक्षत्रे, 'अमुक' योगे, 'अमुक' उपयोगे 'अमुक' करणे, 'अमुक' वासरे, 'अमुक' राशिस्थिते सूर्ये चन्द्रे भौमे बुधे गुरौ भार्गवे शनौ राहौ केतौ तथा राशिस्थानस्थितेषु ग्रहेषु काले श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तचतुर्वर्गफलप्राप्तये एवं गुणवैशिष्ट्येन विशिष्टे 'अमुक' गोत्रः 'अमुक' राशिः 'अमुक' शर्मा वाऽहं मम करिष्यमाणामुकसंस्कारकर्मणि भगवतो गणेशस्य तथा कलशस्थानपुण्याहवाचननीराजनमातृकापूजनवसोधारानिपातनाभ्युदयिकनान्दीश्राद्धनवग्रहादीनां पञ्चोपचारेण वा षोडशोपचारेण निर्विघ्नतया कार्य्यसिद्धये पूजनं करिष्ये ।

इस संकल्प को पढ़कर हाथ के अक्षत पुष्प आदि को गणेश जी की प्रतिमा के समीप छोड़ दे। संकल्प में जहाँ-जहाँ 'अमुक' शब्द आया है वहाँ-वहाँ यथोचित उच्चारण करे। इसके पश्चात् गणेश जी का नीचे लिखे अनुसार आवाहन करे।

आवाहन-मंत्र

"ओं एहि हेरम्ब त्वं मे देहि अम्बिकात्र्यम्बकात्मज। सिद्धिबुद्धिपते त्र्यक्ष लक्षलाभपितुः पितः। नागास्य नागहार त्वं गणराज चतुर्भुज। भूषितः स्वायुधैर्दिव्यैः पाशाङ्कुशपरश्वधैः। आवाहयामि पूजार्थं रक्षार्थं च मम क्रतोः। इहागत्य गृहाण त्वं पूजाकर्तुश्च रक्ष मे।"

प्रतिष्ठापन के लिए मन्त्र निम्नलिखित है—

"ओं एतन्ते देव सवितुर्यज्ञं प्राहुर्बृहस्पतये ब्रह्मणे। तेन यज्ञमव तेन मामव मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञं समिमं दधातु। विश्वे देवा स इह मादयन्तामोम् प्रतिष्ठेति।"

इस मंत्र से प्रतिष्ठापन करने के उपरान्त निम्न मंत्र से स्थापन करना चाहिए।

स्थापन-मंत्र

"ओं गणानां त्वेति प्रजापतिऋषिर्यजुश्छन्दो गणपतिदेवता गणपतिस्थापने विनियोगः।

ओं गणानां त्वा गणपतिं हवामहे निधीनां त्वा निधिपतिं हवामहे व्वसो मम आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम्। ओं भूर्भुवः स्वः गणपते इहागच्छ इहातिष्ठ। विनायक नमस्तेस्तु उमामलसमुद्भव। इमां मया कृतां पूजां गृहाण सुरसत्तम"

अब आसन देने के लिए

आसनमंत्र—

"सुमुखाय नमस्तुभ्यं गणाधिपतये नमः।
गृहाणासनमीश त्वं विघ्नपुञ्जं निवारय॥"

पाद्य-मन्त्र—

"उमापुत्राय देवाय सिद्धवन्द्याय ते नमः ।
पाद्यं गृहाण देवेश विघ्नराज नमोस्तु ते ॥"
इस मंत्र से पाद्य प्रदान करें ।

अर्घ्य-मंत्र—

"एकदन्त महाकाय नागयज्ञोपवीतक ।
गणाधिदेवदेवेश गृहाणार्घं नमोस्तु ते ॥"

पंचामृत-स्नान-मन्त्र—

' पंयोदधिघृतक्षौद्रैः शर्करामिश्रितैः कृतम् ।
पञ्चामृतं गृहाणेदं स्नानार्थं विघ्नभञ्जनम् ॥"

स्नानीयजल-मन्त्र—

"नर्मदा चन्द्रभागादिगङ्गासङ्गमजैर्जलैः ।
स्नापितोसि मया देव विघ्नं सद्यः निवारय ॥"

स्थानीय जल के पश्चात् यज्ञोपवीत प्रदान करने के लिए यह मंत्र उच्चारण करे—

यज्ञोपवीत-मन्त्र—

"सूर्यकोटिसमाभासं नागयज्ञोपवीतकम् ।
सुवर्णमूले रचितमुपवीतं गृहाण मे ॥"

वस्त्र-मन्त्र—

"रक्ताम्बरधर श्रेष्ठ पाशांकुशधरेश्वर ।
वस्त्रयुग्मं मया दत्तं गृहाण परमेश्वर ॥"
वस्त्र प्रदान करने के पश्चात् आचमनीय प्रदान करना चाहिए -

आचमनीय मन्त्र—

"सुगन्धमिश्रतीर्थादिपूतं पानीयमुत्तमम् ।
आचमार्थं गृहाण त्वं विघ्नराज वरप्रद ॥"
आचमनीय के पश्चात् निम्नलिखित मन्त्र से गन्ध प्रदान करना चाहिए ।

गन्ध-मंत्र—

"ईशपुत्र नमस्तुभ्यं नमो मूषकवाहन ।

गन्धं गृहाण देवेश सर्वसौख्यं विवर्धय ॥"

इसके उपरान्त अक्षत-प्रदान करे।

अक्षत-मंत्र—

"रक्तचन्दनसंमिश्रैरक्षतैर्द्योतयाम्यहम्।
सर्वभूतहितार्थाय विघ्नराज जगद्गुरो ॥"

पुष्प-मंत्र—

"पाटला मल्लिका दूर्वा शतपत्राणि विघ्नहृत्।
पुष्पं गृहाण देवेश विबुधप्रिय सर्वतः ॥"

उपरोक्त मन्त्र द्वारा पुष्प प्रदान करने के पश्चात् धूप प्रदान करने के लिए निम्न मन्त्र उच्चारण करे।

धूप-मंत्र—

"लम्बोदर महाकाय धूम्रकेतो नमो नमः।
धूपं गृहाण देवेश विघ्नपुञ्जं निवारय ।।"

दीपक-प्रदर्शन मंत्र—

"घृताक्तवर्त्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया।
दीपं गृहाण देवेश रुद्रप्रिय नमोऽस्तु ते ॥"

दीपक के उपरान्त निम्न मन्त्र द्वारा नैवेद्य समर्पण करे।

नैवेद्य मंत्र—

"भालचन्द्र नमस्तुभ्यं विघ्नहृन्मोदकप्रिय!
नानाविधं गृहाणेदं नैवेद्यं कृपया प्रभो ॥"

नैवेद्य के उपरान्त नीचे लिखे मन्त्र द्वारा जल प्रदान करना चाहिए

जल-मंत्र—

"लम्बोदर महाकाय गौरीसुत नमोऽस्तु ते।
करानन विशुद्ध्यर्थं जलमेतद् गृहाण मे ॥"

अब फल प्रदान करने के लिए यह मन्त्र उच्चारण करे।

फल-मंत्र—

"इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव।
तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि ॥"

फल चढ़ाने के पश्चात् पुष्प द्वारा जल के छींटे देते हुए इस प्रकार उचारें—

''ओं गणाधिपतये नमः दूर्वाङ्कुरयुग्मं समर्पयामि ।

ओं उमापुत्राय नमः ,, ,, ,, ।

ओं अघनाशिने नमः ,, ,, ,, ।

ओं एकदन्ताय नमः ,, ,, ,, ।

ओं इभवक्त्राय नमः ,, ,, ,, ।

ओं मूषकवाहनाय नमः ,, ,, ,, ।

ओं विनायकाय नमः ,, ,, ,, ।

ओं ईशपुत्राय नमः ,, ,, ,, ।

ओं सर्वसिद्धिप्रदायकाय नमः ,, ,, ।

ओं कुमारगुरवे नमः ,, ,, ,, ।

ओं चतुर्थीशाय नमः ,, ,, ,, ।

ओं सर्वविघ्नहराय नमः ,, ,, ,, ।''

इसके पश्चात् नीराजन प्रदान करें ।

नीराजन मंत्र —

''ओं अन्तस्तेजो बहिस्तेज एकीकृत्यामितप्रभम् ।
नीराजनमिदं देव गृहाण मदनुग्रहात् ।।''

अब प्रार्थना करनी चाहिए । हाथ जोड़ कर नतमस्तक होकर इस प्रार्थना मन्त्र का उच्चारण करें ।

प्रार्थना मंत्र—

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय
लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय ।
नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय
गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते ।।
भूतार्तिनाशनपराय गणेश्वराय
सर्वेश्वराय शुभदाय सुरेश्वराय ।
विद्याधराय विकटाय च वामनाय

भक्तप्रसन्नवरदाय नमो नमस्ते ॥
नमस्ते ब्रह्मरूपाय विष्णुरूपाय ते नमः ।
नमस्ते रुद्ररूपाय करिरूपाय ते नमः ॥
विश्वरूपस्वरूपाय नमस्ते ब्रह्मचारिणे ।
भक्तिप्रियाय देवाय नमस्तुभ्यं विनायक ॥
लम्बोदर नमस्तुभ्यं सततं मोदकप्रिय ।
निर्विघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा ॥

गणेशस्तवराज—

गणेश जी का निम्नलिखित स्तोत्र पाठ करने से साधक की सभी अभिलाषाएँ पूर्ण होती हैं—

ॐ तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि ।
तन्नो दन्ती प्रचोदयात् ॥
ओंकारमाद्यम्प्रवदन्ति सन्तो
वाचः श्रुतीनामपि यं गृणन्ति ।
गजाननन्देवगणानताङ्घ्रि-
म्भजेहमर्द्धेन्दुकृतावतंसम् ॥
पादारविन्दार्च्चनतत्पराणां
संसारदावानलभङ्गदक्षम् ।
निरन्तरन्निर्गतदानतोयं
तन्नौमि विघ्नेश्वरमम्बुदाभम् ॥
कृताङ्गरागन्नवकुङ्कुमेन
मत्तालिजालम्मदपङ्कलग्नम् ।
निवारयन्तन्निजकर्णतालैः
को विस्मरेत्पुत्रमनङ्गशत्रोः ॥
शम्भोर्ज्जटाजूटनिवासिगङ्गाजलं समानीय कराम्बुजेन ।
लीलाभिराराच्छिवमर्च्चयन्तङ्गजाननम्भक्तियुता भजन्ति ॥
कुमारभुक्तौ पुनरात्महेतोः पयोधरौ पर्व्वतराजपुत्र्याः ।

अक्षालयन्तङ्करशीकरेण मौग्ध्ये च तन्नागमुखम्भजामि ।।
तथा समुद्धृत्य गजस्य हस्तं ये शीकराः पुष्कररन्ध्रमुक्ताः ।
व्योमाङ्गणे ते विचरन्ति ताराः कालात्मना मौक्तिकतुल्यभासः ।।
क्रीडारते वारिनिधौ गजस्थे वेलामतिक्रामति वारिपूरे ।
कल्पावसानम्परिचिन्त्य देवाः कैलासनाथं श्रुतिभिः स्तुवन्ति ।।
नागानने नागकृतोत्तरीये क्रीडारते देवकुमारसंघैः ।
त्वयि क्षणङ्कालगतिंविहाय तौ प्रापतुः कन्दुकतामिनेन्दू ।।
मदोल्लसत्पञ्चमुखैरजस्रमध्यापयन्तं सकलागमार्थम् ।
देवान्ऋषीन्भक्तजनैकमित्रं हेरम्बमङ्कारुणमाश्रयामि ।।
पादाम्बुजाभ्यामतिवामनाभ्याङ्कृतार्थयन्तङ्कृपया धरित्रीम् ।
अकारणङ्कारणमाप्तवाचान्तन्नागवक्त्रन्न जहाति चेतः ।।
येनार्पितं सत्यवतीसुताय पुराणमालिख्य विषाणकोट्या ।
तच्चन्द्रमौलेस्तनयन्तपोभिराराध्यमानन्दघनम्भजामि ।।
पदं श्रुतीनामपदं स्तुतीनाँल्लीलावतारम्परमात्मभूतेः ।
नागात्मकंव्वा पुरुषात्मकंव्वा त्वयेवमाद्यं भज विघ्नराजन् ।।
पाशाङ्कुशाभग्नरदन्त्वभीष्टङ्करैर्दधानङ्कररन्ध्रमुक्तैः ।
सिच्चन्तमङ्गं शिवयोर्भजामि सिञ्चन्तमङ्गं शिवयोर्भजामि ।।
मुक्ताफलाभैः पृथुशीकरौघैरनेकमेकङ्गजमेकदन्तम्
ब्रह्मेति यं व्वेदविदो वदन्ति तं शंभुसूनुं सततम्भजामि ।।
स्वाङ्कस्थिताया निजवल्लभाया मुखाम्बुजालोकनलोलनेत्रम् ।
स्मेराननाब्जम्मदवैभवेन रुद्धम्भजे विश्वविमोहनन्तम् ।।
ये पूर्वमाराध्य गजाननन्त्वां
सर्वाणि शास्त्राणि पठन्ति तेषाम् ।
त्वत्तो नचान्यत्प्रतिपाद्यमेतै-
स्तदस्ति चेत्सर्वमसत्यकल्पम् ।।
हिरण्यवर्णञ्जगदीशितार-
ङ्कविम्पुराणं रविमण्डलस्थम् ।
गजाननं यम्प्रविशन्ति सन्त-

स्तत्कालयोगैस्तमहम्प्रपद्ये ।।
वेदांतगीतम्पुरुषम्भजेह-
मात्मानमानन्दघनं हृदिस्थम् ।
गजाननंय्यन्महसा जनानां
व्विघ्नांधकारो विलयम्प्रयाति ।।
शम्भोस्समालोक्य जटाकलापे
शशाङ्कखण्डन्निजपुष्करेण ।
सुभग्नदन्तं प्रविचिन्त्य मौग्ध्या-
दाक्रष्टुकामः श्रियमातनोतु ।।
विघ्नार्गलानांव्विनिपातनार्थं
यं नारिकेलैः कदलीफलाद्यैः ।
प्रसारयन्तम्मदवारणास्य-
म्प्रभुं सदाभीष्टप्रदम्भजेयम् ।।
यज्ञैरनेकैर्ब्बहुभिस्तपोभि-
राराध्यमाद्यङ्गजराजवक्त्रम् ।
स्तुत्यानया ये विधिवत्स्तुवन्ति
ते सर्व्वलक्ष्मीनिलया भवन्ति ।।

गणेशकवच —

विश्वसारतन्त्र में उल्लिखित गणेश कवच इस प्रकार है। यह कवच समस्त सम्पत्तियों को देने वाला, समस्त रिपुओं का दमन करने वाला तथा ग्रह पीड़ा, ज्वर, राग, बीमारी, गुह्यकादि दोषों को मिटाने वाला है। इसलिए गणेश जी के प्रत्येक साधक भक्त को इस कवच का प्रतिदिन पाठ करना चाहिए।

ईश्वर उवाच—

शृणु वक्ष्यामि कवचं सर्व्वसिद्धिकरम्प्रिये ।
पठित्वा पाठयित्वा च मुच्यते सर्व्वसङ्कटात् ।।
अज्ञात्वा कवचं देवि गणेशस्य मनुञ्जपेत् ।
सिद्धिर्न जायते तस्य कल्पकोटिशतैरपि ।।

ओं आमोदश्शिरः पातु प्रमोदश्च शिखोपरि ।
सम्मोदो भ्रूयुगे पातु भ्रूमध्ये च गणाधिपः ॥

गणक्रीडश्चक्षुर्युगं नासायाङ्गणनायकः ।
गणक्रीडाचितः पातु वदने सर्व्वसिद्धये ॥

जिह्वायां सुमुखः पातु ग्रीवायान्दुर्म्मुखः सदा ।
विघ्नेशो हृदये पातु विघ्ननाशश्च वक्षसि ॥

गणानान्नायकः पातु बाहुयुग्मे सदा मम ।
विघ्नकर्ता च उदरे विघ्नहर्त्ता च लिङ्गके ॥

गजवक्त्रः कटिदेशे एकदन्तो नितम्बके ।
लम्बोदरः सदा पातु गुह्यदेशे ममारुणः ॥

व्यालयज्ञोपवीती माम्पातु पादयुगे सदा ।
जापकः सर्व्वदा पातु जानुजंघे गणाधिपः ॥

हरिद्रः सर्व्वदा पातु सर्व्वाङ्गे गणनायकः ।
य इदम्प्रपठेन्नित्यं गणेशस्य महेश्वरि ॥

कवचं सर्व्वसिद्धाख्यं सर्व्वविघ्नविनाशनम् ।
सर्व्वसिद्धिकरं साक्षात् सर्व्वपापविमोचनम् ॥

सर्व्वसम्पत्प्रदं साक्षात्सर्वशत्रुक्षयङ्करम् ।
ग्रहपीडा ज्वरा रोगा ये चान्ये गुह्यकादयः ॥

पठनाद्धारणादेव नाशमायान्ति तत्क्षणम् ।
धनधान्यकरन्देवि कवचं सुरपूजितम् ॥

समो नास्ति महेशानि त्रैलोक्ये कवचस्य च ।
हरिद्रस्य महेशानि कवचस्य च भूतले ।
किमन्यैरसदालापैर्व्यर्थायुर्व्यर्थतामियात् ॥

इति श्रीगणेशकवचं सम्पूर्णम् ।

गणपतिस्तुतिः

गाइये गणपति जग वन्दन

शंकर सुमन भवानी के नन्दन ।

सिद्ध सदन गज बदन विनायक

कृपासिन्धु सुन्दर सब लायक ॥

मोदकप्रिय मुदमंगलदाता

विद्यावारिधि बुद्धिविधाता ॥

मांगत तुलसीदास कर जोरे

बसहुं राम सिय मानस मोरे ॥

4
शिव साधना

यहाँ हम शिवसाधना के मन्त्र, यन्त्र, पूजाविधि, स्तोत्र, कवच इत्यादि को प्रस्तुत कर रहे हैं।

सर्वप्रथम शिव साधन का मूल मंत्र—

"ओं नमश्शिवाय ।"

शिव पूजन यंत्र—

निम्नलिखित यन्त्र (देखिये पृ० 46) को अष्टगन्ध द्वारा भोजपत्र पर लिख कर शिवजी का पूजन-साधन करना चाहिए ।

प्रातः कृत्यादि करके पूजा-स्थान में जाकर आसन पर विराजमान होकर दीपक प्रज्ज्वलित करना चाहिए। "ओं दीं दीपनाथाय नमः" इस मन्त्र का उच्चारण करके दीपक का पूजन करना चाहिए। भूतापसर्प्पण करना चाहिए। तत्पश्चात् पूजा प्रारंभ करनी चाहिए।

शिवध्यान-मंत्र—

"बन्धूकसन्निभन्देवन्त्रिनेत्रचन्द्रशेखरम् ।
त्रिशूलधारिणन्देवञ्चारुहासं सुनिर्म्मलम् ।
कपालधारिणन्देवं वरदाभयहस्तकम् ।
उमया सहितं शम्भुन्ध्यायेत्सोमेश्वरं सदा ॥"

उपरोक्त मन्त्र से ध्यान करके निम्नलिखित मन्त्र द्वारा आवाहन करना चाहिए ।

आवाहन-मंत्र—

"आयाहि भगवञ्छम्भो शर्व्व त्वङ्गिरिजापते ।
प्रसन्नो भव देवेश नमस्तुभ्यं हि शंकर ॥

अब निम्नलिखित मन्त्र द्वारा आसन प्रदान करना चाहिए—

आसन-मंत्र—

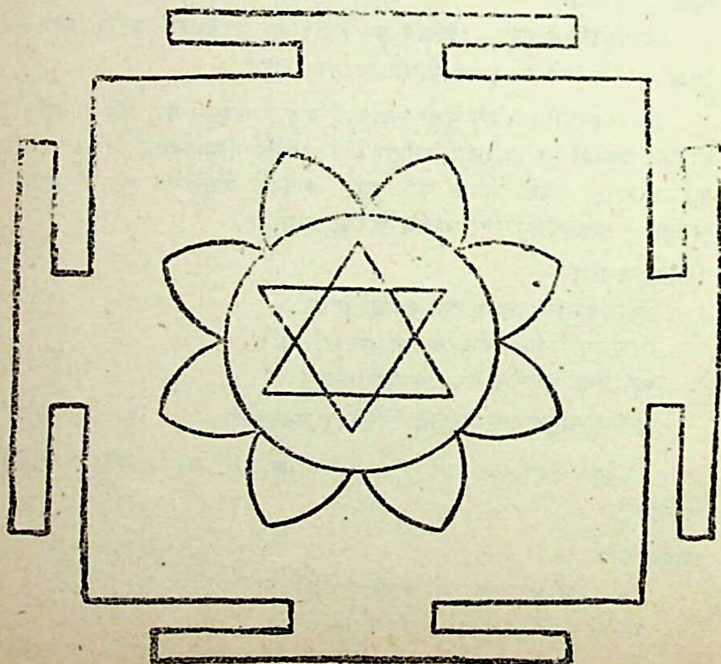
"विश्वेश्वर महादेव राजराजेश्वरप्रिय ।
आसनन्दिव्यमीशान दास्येंऽहन्तुभ्यमीश्वर ॥"

इसके पश्चात् निम्नलिखित मन्त्र द्वारा अर्घ्य प्रदान करे—

अर्घ्य-मन्त्र—

"त्र्यम्बकेशसदाचार जगदादिविधायक ।
अर्घ्यं गृहाण देवेश साम्ब सर्व्वार्थदायक ॥"

इसके पश्चात् 'आचमनीय' प्रदान करना चाहिए । उसके लिए मन्त्र निम्नलिखित है । (देखो पृ० 45)



आचमनीय मंत्र—

"त्रिपुरान्तक दीनार्त्ति हर श्रीकण्ठ शाश्वत।
ग्रह्णाणाचमनीयञ्च पवित्रोदकमर्पितम् ॥"

तत्पश्चात् गोदुग्धस्नान कराना चाहिए। इसके लिए इस मन्त्र का उच्चारण करे—

गोदुग्धस्नान मंत्र—

"मधुरं गोपयः पुण्यम्पटपूतम्पुरस्कृतम्
स्नानार्थन्देवदेवेश गृहाण परमेश्वर ॥"

गो-दुग्ध स्नान करने के पश्चात् निम्नलिखित मन्त्र द्वारा दधिस्नान कराये—

दधिस्नानमंत्र—

"दुर्ल्लभन्दिवि सुस्वादु दधि सर्व्वप्रियम्परम्।
पुष्टिदम्पार्व्वतीनाथ स्नानाय प्रतिगृह्यताम् ॥"

दधि स्नान कराकर निम्नलिखित मन्त्र द्वारा 'घृतस्नान' कराये :—

घृतस्नान मंत्र—

"घृतगव्यं शुचिस्निग्धं सुसेव्यम्पुष्टिमिच्छताम्।
गृहाण गिरिजानाथ स्नानाय चन्द्रशेखर ॥"

घृत स्नान के पश्चात् निम्नलिखित मन्त्र द्वारा मधु-स्नान कराये—

मधुस्नान मंत्र—

"मधुरम्मृदु मोहघ्नं स्वरभंगविनाशनम्।
महादेवेरमुत्सृष्टन्तव स्नानाय शंकर ॥"

तत्पश्चात् निम्नलिखित मन्त्र द्वारा शर्क्करास्नान करायें—

शर्क्करास्नान मंत्र—

"तापशान्तिकरी शीता मधुरा स्वादसंय्युता।
स्नानार्थन्देवदेवेश शर्क्करेयम्प्रदीयते ॥"

इसके पश्चात् निम्नलिखित मन्त्र द्वारा शुद्धोदक स्नान कराये।

शुद्धोदक स्नान मंत्र—

"गंगा गोदावरी रेवा पयोष्णी यमुना तथा।
सरस्वत्यादितीर्थानि स्नानार्थम्प्रतिगृह्यताम् ॥"

इस प्रकार शुद्धोदक स्नान कराकर निम्नलिखित 900 मन्त्रों द्वारा 'शत-रुद्री स्नान' कराना चाहिये ।

शतरुद्री स्नान मंत्र—

शतरुद्री स्नान का मंत्रोद्धार—

"नमस्ते रुद्रसूक्तञ्च पुनः षोडशमेव च ।
एष ते द्विर्न्नमस्तेद्विर्न्नतावद्वयमेव च ।
मीढुष्टमष्ट चत्वारि वत्रक्ष्वमष्टमञ्जपेत् ॥"

स्नान मंत्र इस प्रकार हैं :—

"ओं नमस्ते रुद्र मन्यवऽउतोत इषवे नमः बाहुभ्यामुत ते नमः ॥ १ ॥
या ते रुद्र शिवा तनूरघोरापापकाशिनी ।
तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभि चाकशीहि ॥ २ ॥
या मिषुं गिरिशन्त हस्ते बिभर्व्यस्तवे ।
शिवांगिरित्र ताङ् कुरु माहि ठं सीः पुरुषञ्जगत् ॥ ३ ॥
शिवेनव्वचसा त्वा गिरिशाच्छाव्वदामसि ।
यथा नः सर्व्वमिज्जगदयक्ष्म ठं. सुमनाऽअसत् ॥ ४ ॥
अध्यवोचदधिवक्ता प्रथमो दैव्यो भिषक् ।
अहींश्च सर्व्वाञ्जम्भयन्त्सर्व्वांश्च यातुधान्योधराचीः परासुव ॥ ५ ॥
असौ यस्ताम्रोऽअरुणऽउत बभ्रुः सुमंगलः ।
ये चैन ठं रुद्रा अभितो दिक्षु श्रिताः सहस्रशो वैषां हेडऽईमहे ॥ ६ ॥
असौ योऽवसर्प्पति नीलग्रीवो विलोहितः ।
उतैनं गोपाऽअदृश्रन्नदृश्रन्नुदहार्य्यः स दृष्टोमृडयाति नः ॥ ७ ॥
नमोऽस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे ।
अथो येऽअस्य सत्वानो हन्तेभ्योकरन्नमः ॥ ८ ॥
प्रमुञ्च धन्वनस्त्वमुभयोरात्न्योंर्ज्ज्याम् ।
याश्च ते हस्त इषवः पराताभगवोव्वप ॥ ९ ॥
विज्ज्यन्धनुः कपर्दिनो विशल्यो बाणवाँऽउत ।
अनेशन्नस्य याऽइषवऽआभुरस्य निषङ्गधिः ॥ १० ॥
या ते हेतिर्म्मीढुष्टम हस्ते बभूव ते धनुः ।

तयास्मान्विश्वतस्त्वमयक्ष्मया परि भुज । ११
परि ते धन्वनो हेतिरस्मान्वृणक्तु विश्वतः ।
अथोयऽइषुधिस्तवारेऽअस्मन्नि धेहि तम् । १२
अवतत्य धनुष्ट्व ठं सहस्राक्ष शतेषुधे ।
निशीर्य्य शल्यानाम्मुखा शिवो नः सुमना भव । १३
नमस्तऽआयुधायानातताय धृष्णवे ।
उभाभ्यामुत ते नमो बाहुभ्यान्तव धन्वने । १४
मा नो महान्तमुत मा नोऽअर्भकम्मा नऽउक्षन्तमुत मा नऽउक्षितम् ।
मा नो वधीः पितरम्मोत मातरम्मा नः प्रियास्तन्वो रुद्र रीरिषः । १५
मा नस्तोके तनये मा नऽआयुषि मा नो गोषु मा नोऽअश्वेषु रीरिषः ।
मा नोव्वीरान् रुद्र भामिनो व्वधीर्हविष्मंतः सदमि त्वा हवामहे । १६
नमो हिरण्यबाहवे सेनान्ये दिशाञ्च पतये नमो नमो नमो वृक्षेभ्यो
हरिकेशेभ्यः पशूनाम्पतये नमो नमः शष्पिञ्जराय त्विषीमते
पथीनाम्पतये नमो नमो हरिकेशायोपवीतिने दुष्टानाम्पतये नमः । १७
नमोवभ्लुशाय व्याधिनेऽन्नानाम्पतये नमो नमो भवस्य
हेत्यै जगताम्पतये नमो नमो रुद्रायाततायिने क्षेत्राणाम्पतये नमो नमः
सूतायाहन्त्यैव्वनानाम्पतये नमः । १८
नमो रोहिताय स्थपतये व्वृक्षाणाम्पतये नमो नमो भुवन्तयेव्वारिवस्कृताया-
षधीनाम्पतये नमो नमो मन्त्रिणेव्वाणिजाय कक्षाणाम्पतये नमो
नमऽउच्चैर्घोषायाक्रन्दयते पत्तीनाम्पतये नमः । १९
नमः कृत्स्नाय तयावते सत्वानाम्पतये नमो नमः सहमानाय
निव्याधिनेऽआव्याधिनीनाम्पतये नमो नमो निषङ्गिणे ककुभाय स्तेनाना-
म्पतये नमो नमो निचेरवे परिचरायारण्यानाम्पतये नमः ।२०
नमो वञ्चते परिवञ्चते स्तायूनाम्पतये नमो नमो
निषङ्गिणेऽइषुधिमते तस्कराणाम्पतये नमो नमः सृकायिभ्यो जिघां-
सद्भ्यो मुष्णताम्पतये नमो नमो
ऽसिमद्भ्यो नक्तञ्चरद्भ्यो विकृन्तानाम्पतये नमः । २१
नमऽउष्णीषिणे गिरिचराय कुलुञ्चानाम्पतये नमो नमो ऽइषुमद्भ्यो धन्वा-

यिभ्यश्च वो नमो नमऽआतन्वानेभ्यः प्रतिदधानेभ्यश्च वो नमो नमऽआय-
च्छद्भ्योऽस्यद्भ्यश्च वो नमो नमः । २२
नमो विसृजद्भ्यो विद्ध्यद्भ्यश्च वो नमो नमः स्वपद्भ्यो जाग्रद्भ्यश्च वो
नमो नमः शयानेभ्यऽआसीनेभ्यश्च वो नमो नमस्तिष्ठद्भ्यो धावद्भ्यश्च
वो नमो नमः । २३
नमः सभाभ्यः सभापतिभ्यश्च वो नमो नमोऽश्वेभ्योऽश्वपतिभ्यश्च वो नमो
नमोऽ आव्याधिनीभ्यो विविद्ध्यन्तीभ्यश्च वो नमो नमो गणाभ्यस्तृं ठं
हतीभ्यश्च वो नमो नमः । २४
नमो गणेभ्यो गणपतिभ्यश्च वो नमो नमो व्रातेभ्यो व्रातपतिभ्यश्च वो
नमो नमो गृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्च वो नमो नमो विरूपेभ्योविश्वरूपेभ्य-
श्च वो नमो नमः । २५
नमः सेनाभ्यः सेनानिभ्यश्च वो नमो नमो रथिभ्योऽअरथेभ्यश्च वो नमो नमः
क्षतृभ्यः संग्रहीतृभ्यश्च वो नमो नमो महद्भ्योऽअर्भकेभ्यश्च वो नमः ।२६
नमस्तक्षभ्यो रथकारेभ्यश्च वो नमो नमः कुलालेभ्यः कर्म्मारेभ्यश्च वो
नमो नमो निषादेभ्यः पुञ्जिष्ठेभ्यश्च वो नमो नमः श्वनिभ्यो मृगयुभ्यश्च
वो नमो नमः । २७
नमः श्वभ्यः श्वपतिभ्यश्च वो नमो नमो भवाय च रुद्राय च नमो नमः
शर्वाय च पशुपतये च नमो नीलग्रीवाय च शितिकण्ठाय च । २८
नमः कपर्द्दिने च व्युप्तकेशाय च नमः सहस्राक्षाय च शतधन्वने च नमो
गिरिशयाय च शिपिविष्टाय च नमो मीढुष्टमाय चेषुमते च
नमो नमः । २९
नमो ह्रस्वाय च वामनाय च नमो बृहते च वर्षीयसे च नमो
वृद्धाय च संवृधे च नमोऽग्र्याय च प्रथमाय च । ३०
नमऽआशवे चाजिराय च नमः शीघ्याय च शीभ्याय नमः ऊर्म्याय चाव-
स्वन्याय च नमो नादेयाय च द्वीप्याय च । ३१
नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च नमः पूर्व्वजाय चापरजाय च नमो मध्यमाय
चापगल्भाय च नमो जघन्याय च बुद्ध्न्याय च । ३२
नमः सोभ्याय च प्रतिसर्प्याय च नमो याम्याय च क्षेम्याय च नमः
श्लोक्याय चावसान्याय च नमो वर्य्याय च खल्याय च । ३३

नमोव्वन्याय च कक्ष्याय च नमः श्रवाय च प्रतिश्रवाय च
नमऽआशुषेणाय चाशुरथाय च नमः शूराय चावभेदिने च। ३४
नमो बिल्मिने च कवचिने च नमोव्वर्म्मिणे च वरूथिने च नमः
श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुभ्याय चाहनन्याय च। ३५
नमो धृष्णवे च प्रमृशाय च नमो निषङ्गिणे चेषुधिमते च
नमस्तीक्ष्णेषवे चायुधिने च नमः स्वायुधाय च सुधन्वने च ३६
नमः स्रुत्याय च पथ्याय च नमः काट्याय च नीप्याय च नमः
कुल्याय च सरस्याय च नमो नादेयाय च व्वैशन्ताय च। ३७
नमः कूप्याय चावट्याय च नमोवीध्र्याय चातप्याय च
नमो मेघ्याय च विद्युत्याय च नमो वर्ष्याय चावर्ष्याय च। ३८
नमो वात्याय च रेष्म्याय च नमो वास्तव्याय च व्वास्तुपाय च नमः
सोमाय च रुद्राय च नमस्ताम्राय चारुणाय च। ३९
नमः शङ्गवे च पशुपतये च नमऽउग्राय च भीमाय च नमोऽग्रेवधाय च दूरेव-
धाय च नमो हन्त्रे च हनीयसे च नमो वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यो नमस्ताराय। ४०
नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शंकराय च मयस्कराय च
नमः शिवाय शिवतराय च। ४१
नमः पार्याय चावार्याय च नमः प्रतरणाय चोत्तरणाय च नमस्तीर्थ्याय
च कूल्याय च नमः शष्प्याय च फेन्याय च। ४२
नमः सिकत्याय च प्रवाह्याय च नमः कि ꣳ शिलाय च क्षयणाय च नमः
कपर्दिने च पुलस्तये च नमऽइरिण्याय च प्रपथ्याय च। ४३
नमोव्व्रज्याय च गोष्ठ्याय च नमस्तल्प्याय च गेह्याय च नमो हृदय्याय च
निवेष्प्याय च नमः काट्याय च गह्वरेष्ठाय च। ४४
नमः शुष्क्याय च हरित्याय नमो नमः पा ꣳ सव्याय च रजस्याय च
नमो लोप्याय चालोप्याय नमऽऊर्व्व्याय सूर्म्याय च। ४५
नमः पर्ण्णाय च पर्ण्णशदाय च नमऽउद्गुरमाणाय चाभिघ्नते च
नमोऽआखिदते च प्रखिदते च नमऽइषुकृद्भ्यो धनुष्कृद्भ्यश्च वो नमो
नमो वः किरिकेभ्यो देवाना ꣳ हृदयेभ्यो नमो विचिन्व-
त्केभ्यो नमो विक्षिणत्केभ्यो नमऽआनिर्हतेभ्यः। ४६

द्रापेऽअन्धसस्पते दरिद्र नीललोहित ! आसाम्प्रजानामेषा-
म्पशूनाम्माभेर्म्मारोङ्म्मो च नः किंचनाममत् । ४७
इमा रुद्राय तवसे कपर्द्दिने क्षयद्वीरायप्र भरामहे मतीः ।
यथा शमसद्द्विपदे चतुष्पदे विश्वम्पुष्टङ् ग्रामेऽअस्मिन्ननातुरम् । ४८
या ते रुद्र शिवा तनू: शिवा विश्वाहा भेषजी ।
शिवा रुतस्य भेषजी तया नो मृड जीवसे । ४९
परि नो रुद्रस्य हेतिर्व्वृणक्तु परि त्वेषस्य दुर्म्मतिरघायोः ।
अव स्थिरा मघवद्भ्यस्तनुष्व मीढ्वस्तोकाय तनयाय मृड । ५०
मीढुष्टम शिवतम शिवो नः सुमना भव । परमे वृक्षऽआयु-
धन्निधाय कृत्तिंव्वसानऽआ चर पिनाकम्बिभ्रदागहि । ५१
विकिरिद्र विलोहित नमस्तेऽअस्तु भगवः । यास्ते सहस्र
ठं हेतयोऽन्यमस्मन्निवपन्तु ताः । ५२
सहस्राणि सहस्रशो बाह्वोस्तव हेतयः । तासामीशानो भगवः
पराचीना मुखा कृधि । ५३
असङ्ख्याता: सहस्राणि ये रुद्राऽअधिभूम्याम् ।
तेषां सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि । ५४
अस्मिन्महत्यर्णवेऽन्तरिक्षे भवाऽअधि ।
तेषा ठं सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि । ५५
नीलग्रीवा शितिकण्ठा दिव ठं रुद्रा उपश्रिताः ।
तेषां सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि । ५६
नीलग्रीवा शितिकण्ठाः शर्व्वाऽअधः क्षमाचराः ।
तेषां सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि । ५७
ये भूतानामधिपतयो विशिखासः कपर्द्दिनः ।
तेषां सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि । ५८
ये वृक्षेषु शष्पिञ्जरा नीलग्रीवाव्विलोहिताः ।
तेषां सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि । ५९
ये पथाम्पथिरक्षयऽऐलवृदा आयुर्युधः ।
तेषां सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि । ६०

ये तीर्त्थानि प्रचरन्ति सृका हस्ता निषङ्गिणः ।
तेषां सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि । ६१
येऽन्नेषुविविद्ध्यन्ति पात्रेषु पिबतो जनान् ।
तेषां सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि । ६२
येऽएतावन्तश्च भूया ठँ सश्च दिशो रुद्रा व्वितस्थिरे ।
तेषां सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि । ६३
नमोस्तु रुद्रेभ्यो ये दिवि येषांव्वर्षमिषवः ।
तेभ्यो दश प्राचीर्दश दक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्ध्वाः ।
तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यन्द्विष्मो
यश्च नो द्वेष्टि तमेषाञ्जम्भे दध्मः । ६४
नमोस्तु रुद्रेभ्यो येऽअन्तरिक्षे येषांव्वातऽइषवस्तेभ्यो दश
प्राचीर्दश दक्षिणा दशप्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्ध्वाः
तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यन्द्विष्मो
यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः । ६५
नमोऽस्तु रुद्रेभ्यो ये पृथिव्यांय्येषामन्नमिषवः तेभ्यो दश
प्राचीर्दश दक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्ध्वाः ।
तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडन्तु ते यं द्विष्मो
यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः । ६६
नमस्ते रुद्र मन्यवऽउतोतऽइषवे नमः ।
बाहुभ्यामुत ते नमः । ६७
या ते रुद्र शिवा तनूरघोरा पापकाशिनी ।
तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभि चाकशीहि । ६८
यामिषुङ्गिरिशन्तहस्ते बिभर्ष्यस्तवे ।
शिवांगिरित्रता ङ् कुरु मा हि ठँ सीः पुरुषञ्जगत् । ६९
शिवेनव्वचसा त्वा गिरिशाच्छाव्वदामसि ।
यथा नः सर्व्वमिज्जगदयक्ष्म ठँ सुमनाऽअसत् । ७०
अध्यवोचदधिवक्ता प्रथमो दैव्यो भिषक् ।
अहींश्च सर्व्वाञ्जम्भयन्त्सर्व्वाश्च यातुधान्योऽधराचीः परासुव । ७१

असौ यीव सर्प्पति नीलग्रीवोव्विलोहितः
उतैनङ्गोपाऽअदृश्रन्नदृश्रन्नुदहार्य्यः स दृष्टो मृडयाति नः। ७२
असौ यस्ताम्रोऽअरुणऽउत बभ्रुः सुमंगलः।
ये चैन ठं रुद्राऽअभितो दिक्षु श्रिताः सहस्रशो वैषाः हेडऽईमहे। ७३
नमोऽस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे।
अथो येऽअस्य सत्वानोऽहस्तेभ्योकरन्नमः। ७४
प्रमुञ्च धन्वनस्त्वमुभयोरात्त्न्योंर्ज्ज्याम्।
याश्च ते हस्तऽइषवः परा ता भगवोव्वप। ७५
विज्यन्धनुः कपर्द्दिनोव्विशल्यो बाणवांउत।
अनेशन्नस्य याऽइषवऽआभुरस्य निषङ्गधिः। ७६
या ते हेतिर्मीढुष्टम हस्ते बभूव ते धनुः।
तयाऽस्मान्विश्वतस्त्वमयक्ष्मया परि भुज। ७७
परि ते धन्वनो हेतिरस्मान्वृणक्तु विश्वतः।
अथो यऽइषुधिस्तवारेऽअस्मन्नि धेहि तम्। ७८
अवतत्य धनुष्ट्व ठं. सहस्राक्ष शतेषुधे।
निशीर्य्य शल्यानाम्मुखा शिवो नः सुमना भव। ७९
नमस्तेऽआयुधायानातताय धृष्णवे।
उभाभ्यामुत ते नमो बाहुभ्यान्तव धन्वने। ८०
मा नो महान्तमुत मा नोऽअर्भकम्मा न ऽउक्षन्तमुत मा न ऽउक्षितम्।
मा नोव्वधीः पितरम्मोत मातरम्मा नः प्रियास्तन्वो रुद्र रीरिषः। ८१
मा नस्तोके तनये मा नऽआयुषि मा नो गोषु मा नोऽअश्वेषु रीरिषः।
मा नोव्वीरान्रुद्र भामिनोव्वधीर्हविष्मन्तः सदमित्त्वा हवामहे। ८२
एष ते रुद्र भागः स्वस्राम्बिकया तं जुषस्व स्वाहैष ते-
रुद्र भागऽआखुस्ते पशुः। ८३
अव रुद्र मदीमह्यव देवं त्र्यम्बकम्।
यथा नो व्वस्यसस्करद्यथा नः श्रेयसस्करद्यथा नो व्व्यवसाययात् ८४
नमस्ते हरसे शोचिषे नमस्तेऽअस्त्वर्चिषे।
अन्न्यांस्तेऽअस्म्मत्तपन्तु हेतयः पावकोऽअस्मभ्य ठं शिवो भव। ८५

नमस्तेऽअस्तु विद्युते नमस्ते स्तनयित्नवे ।
नमस्ते भगवन्नस्तु यतः स्वः समीहसे । ८६
न तँव्विदाथ यऽइमा जजानान्यद्युष्माकमन्तरम्बभूव ।
नीहारेण प्रावृता जल्प्या चासुतृप उक्थशासश्चरन्ति । ८७
विश्वकर्म्मा ह्यजनिष्ट देव आदिगन्धर्व्वोऽअभवद्द्वितीयः ।
तृतीयः पिता जनितौषधीनामपाँ गर्भँव्व्यदधात्पुरुत्रा । ८८
विकिरिद्रव्विलोहित नमस्तेऽअस्तु भगवः ।
यास्ते सहस्र ठं. हेतयोन्यमस्मन्नि वपन्तु ताः । ८९
मीढुष्टम शिवतम शिवो नः सुमना भव ।
परमे वृक्ष आयुधन्निधाय कृत्तिव्वसानऽआचर पिनाकम्बिभ्रदागहि । ९०
सहस्राणि सहस्रशो बाह्वोस्तव हेतयः ।
तासामीशानो भगवः पराचीना मुखा कृधि । ९१
असङ्ख्याताः सहस्राणि ये रुद्राऽअधिभूम्याम् ।
तेषा सहस्रयोजने व धन्वानि तन्मसि । ९२
वय ठंः सोम व्रते तव मनस्तनूषु बिभ्रतः ।
प्रजावन्तः सचेमहि ९३
एष ते रुद्र भागः सह स्वस्राम्बिकया तं जुषस्व स्वाहैष ते ।
रुद्र भागऽआखुस्ते पशुः ९४
अव रुद्र मदीमह्यव देवन्त्र्यम्बकम् ।
यथा नो वयस्करद्यथा नः श्रेयसस्करद्यथा नो व्यवसाययात् । ९५
भेषजमसि भेषजं गवेऽश्वाय पुरुषाय भेषजम् ।
सुखम्मेषाय मेष्यै । ९६
त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम् ।
उर्व्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् । ९७
त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पतिवेदनम् ।
उर्व्वारुकमिव बन्धनादितो मुक्षीय मामुतः ।
एतत्ते रुद्रावसन्तेन परो मूजवतोऽतीहि । ९८

त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम् ।
यद्देवेषु त्र्यायुषन्तन्नोऽअस्तु त्र्यायुषम् । ९९
शिवो नामासि स्वधितिस्ते पिता नमस्तेऽअस्तु मा मा हि ꣳ सीः
नि वर्त्तयाम्यायुषेन्नाद्याय प्रजननाय रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय
सुवीर्य्याय । १००

उपर्युक्त मन्त्रों द्वारा शुद्धोदक स्नान कराने के पश्चात् निम्नलिखित मन्त्र द्वारा वस्त्र प्रदान करे ।

वस्त्र मन्त्र—

"वस्त्राणि पट्टकूलानि विचित्राणि नवानि च ।
मया नीतानि देवेश प्रसन्नो भव शंकर ।।"

इसके उपरान्त निम्नलिखित मन्त्र द्वारा उपवीत प्रदान करे ।

उपवीत मन्त्र—

"सौवर्णं राजतन्ताम्रङ्कार्प्पासस्य तथैव च ।
उपवीतम्मया दत्तं प्रीत्यर्थम्प्रतिगृह्यताम् ।।"

इस मन्त्र के उपरान्त निम्नलिखित मंत्र द्वारा 'गन्ध' प्रदान करे ।

गन्ध मन्त्र—

"सर्व्वेश्वर जगद्वन्द्य दिव्यासनसमास्थित ।
गन्धङ्गृहाण देवेश चन्दनम्प्रतिगृह्यताम् ।।"

इस मंत्र के पश्चात् निम्नलिखित मन्त्र द्वारा 'अक्षत' प्रदान करे ।

अक्षत मन्त्र—

"अक्षताश्च सुरश्रेष्ठाः शुभ्रा पूताश्च निर्म्मलाः ।
मया निवेदिता भक्त्या गृहाण परमेश्वर ।।"

इस मन्त्र द्वारा अक्षत देकर निम्नलिखित मन्त्र द्वारा पुष्प प्रदान करे ।

पुष्प मन्त्र—

"माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो ।
मयाहृतानि पूजार्थम्पुष्पाणि प्रतिगृह्यताम् ।।"

इसके उपरान्त निम्नलिखित मंत्र द्वारा 'विल्वपत्र' प्रदान करे ।

बिल्वपत्र मन्त्र—

"बिल्वपत्रं सुवर्णेन त्रिशूलाकारमेव च ।
मयार्पितम्महादेव बिल्वपत्रङ्गृहाण मे ॥"

इसके पश्चात् निम्नलिखित मंत्र द्वारा 'धूप' प्रदान करे।

धूप मन्त्र—

"वनस्पतिरसोत्पन्नो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः ।
आघ्रेयः सर्व्वदेवानान्धूपोयम्प्रतिगृह्यताम् ॥

इस मन्त्र से धूप प्रदान करके निम्नलिखित मन्त्र द्वारा दीपक प्रदान करे।

दीपक मन्त्र—

"आज्याक्तवर्त्तिसँय्युक्तं वह्निना दीपितन्तु यत् ।
दीपङ्गृहाण देवेश त्रैलोक्यतिमिरापह ॥"

दीपक देने के पश्चात् निम्नलिखित मन्त्र द्वारा नैवेद्य प्रदान करे।

नैवेद्य मन्त्र—

"अपूपानि च पक्वानि मण्डकावटकानि च ।
पायसं सूपमन्नञ्च नैवेद्यम्प्रतिगृह्यताम् ॥"

नैवेद्य मन्त्र देने के पश्चात् निम्नलिखित मन्त्र द्वारा आचमनीय प्रदान करे।

आचमनीय मन्त्र—

"पानीयं शीतलं शुद्धं गांगेयम्महदुत्तमम् ।
गृहाण पार्व्वतीनाथ तव प्रीत्या प्रकल्पितम् ॥"

इसके उपरान्त निम्न मन्त्र द्वारा करोद्वर्त्तन प्रदान करे।

करोद्वर्त्तन मन्त्र—

"कर्पूरादीनि द्रव्याणि सुगन्धीनि महेश्वर ।
गृहाण जगतान्नाथ करोद्वर्त्तनहेतवे ॥"

तत्पश्चात् निम्नलिखित मन्त्र द्वारा फल प्रदान करे।

फल मन्त्र—

"कूष्माण्डम्मातुलिङ्गं च नारिकेलफलानि च ।
गृहाण पार्व्वतीकान्त सोमशेखर शंकर ॥"

इस मन्त्र के उच्चारण के पश्चात् निम्नलिखित मन्त्र द्वारा ताम्बूल पूगीफलादि प्रदान करे।

ताम्बूलपूगीफलादि मन्त्र—

"पूगीफलम्महद्दिव्यन्नागवल्लीदलैर्युतम्।
गृहाण देवदेवेश द्राक्षादीनि सुरेश्वर।"

इसके पश्चात् निम्नलिखित मन्त्र द्वारा 'द्रव्य' प्रदान करे।

द्रव्य मन्त्र—

"हिरण्यगर्भगर्भस्थं हैमबीजममन्वितम्।
पंचरत्नं मया दत्तङ् गृह्यतां वृषभध्वज।।"

इस मन्त्र द्वारा द्रव्य प्रदान करने के पश्चात् निम्नलिखित मन्त्र द्वारा नीराजन प्रदान करे।

नीराजन मन्त्र—

"अग्निर्ज्योती रविर्ज्योतिर्ज्योतिर्न्नारायणो विभुः।
नीराजयामि ते देवश्पंचदीपैः सुरेश्वर।।"

नीराजन देकर निम्न मंत्र द्वारा 'पुष्पांजलि' भेंट करे।

पुष्पांजलि मन्त्र—

"हर विश्वाखिलाधार निराधार निराश्रय।
पुष्पांजलिङ् गृहाणेश सोमेश्वर नमोस्तु ते।।"

इसके उपरान्त निम्नलिखित मंत्र द्वारा प्रणाम निवेदित करे।

प्रणाम मन्त्र—

"हेतवे जगतामेव संसारार्णवसेतवे।
प्रभवे सर्व्वविद्यानां शम्भवे गुरवे नमः।।"

उपर्युक्त सभी मंत्रों के अन्त में "सांगाय सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सावरणाय नमः।" यह वाक्य बोलना चाहिये। इसके पश्चात् पूजा-विधि सम्पन्न होती है।

अर्घ्य प्रदान करने के विशेष मन्त्र—

शिवरात्रि तथा सोमवार के दिन विशेषार्घ्य मंत्र प्रदान किये जाते हैं।

सर्वप्रथम निम्नलिखित संकल्पवाक्य का उच्चारण करे—

"अद्य पूर्व्वोच्चरित एवंगुणविशेषणविशिष्टायाम्पुण्यतिथौ ममात्मनः पुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं पूजासांगतासिद्ध्यर्थमर्घ्यप्रदानङ्करिष्ये।"

शिवरात्रि अर्घ्यमन्त्र—

"नमः शिवाय शर्व्वाय सर्व्वपापहराय च।
शिवरात्रौ महापुण्यङ् गृहाणार्घ्यन्नमोऽस्तु ते।
शिवाय नमः इदम्।"

"व्योमकेश नमस्तुभ्यं व्योमात्मन्व्योमरूपिणे।
नक्षत्ररूपिणे तुभ्यन्तारकार्घ्यन्नमोऽस्तु ते।
तारकाय नमः इदम्।"

"आकाशदिक्छरीराय ग्रहनक्षत्रमालिने।
सुरसिद्धनिवासाय दत्तमर्घ्यं सदाशिव।
सदाशिवाय नमः इदम्।"

सोमवार अर्घ्य मन्त्र—

"सोमवारव्रतं कर्तुं कल्याणम्मम सर्वदा।
प्रसीद पार्व्वतीनाथ सायुज्यन्देहि मे प्रभो।
भवानीशङ्कराभ्यां नमः इदम्।"

"नतेन सोमवारेण सोमनाथ जगत्पते।
अनेककोटिसौभाग्यमनन्तं कुरु शङ्कर।
शङ्कराय नमः इदम्।"

"आकाशदिक्शरीराय ग्रहनक्षत्रमालिने।
सर्व्वसिद्धिनिवासाय दत्तमर्घ्यन्नमोऽस्तु ते।
सदाशिवाय नमः इदम्।"

अर्घ्य के अन्त में निम्न वाक्य का उच्चारण करे।

"अनेनार्घ्यप्रदानेन भगवांच्छ्रीभवानीशङ्करः महारुद्रः प्रीयताम्।

शिव स्तोत्र

यह 'शिवमहिम्न स्तोत्र' के नाम से भी प्रसिद्ध है। इस स्तोत्र का नियमित रूप से पाठ करने पर समस्त पापों का नाश होता है तथा सभी कामनायें पूर्ण होती हैं।

श्रीगणेशाय नमः।

महिम्नः पारन्ते परमविदुषो यद्यसदृशी
स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः।
अथावाच्यः सर्व्वः स्वमतिपरिणामावधिगृणन्
ममाप्येष स्तोत्रे हर निरपवादः परिकरः। १

अतीतः पन्थानन्तव च महिमा वाङ्मनसयो-
रतद्व्यावृत्त्या यं चकितमभिधत्ते श्रुतिरपि।
स कस्य स्तोतव्यः कतिविधगुणः कस्य विषयः
पदे त्वर्व्वाचीने पतति न मनः कस्य न वचः। २

मधुस्फीता वाचः परमममृतन्निर्म्मितवत-
स्तव ब्रह्मन्किंव्वागपिसुरगुरोर्व्विस्मयपदम्।
मम त्वेतांव्वाणीं गुणकथनपुण्येन भवतः
पुनामीत्यर्थेऽस्मिन्पुरमथन बुद्धिर्व्यवसिता। ३

तवैश्वर्य्यं यत्तज्जगदुदयरक्षाप्रलयकृत्
त्रयीवस्तुव्यस्ततिसृषु च गुणभिन्नासु तनुषु।
अभव्यानामस्मिन्वरद रमणीयामरमणीं
विहन्तुं व्याक्रोशीं विदधत इहैके जडधियः। ४

किमीहः किङ्कायः स खलु किमुपायस्त्रिभुवन-
ङ्किमाधारो धाता सृजति किमुपादान इति च।
अतर्क्यैश्वर्य्ये त्वय्यनवसरदुःस्थो हतधियः
कुतर्क्कोऽयङ्कांश्चिन्मुखरयति मोहाय जगतः। ५

अजन्मानो लोकाः किमवयववन्तोऽपि जगता-
मधिष्ठातारं किम्भवविधिरनादृत्य भवति ।
अनीशो वा कुर्याद्भुवनजनने कः परिकरो
यतो मन्दास्त्वाम्प्रत्यमरवर संशेरत इमे । ६
त्रयी सांख्यंय्योगः पशुपतिमतं व्वैष्णवमिति
प्रभिन्ने प्रस्थाने परमिदमदःपथ्यमिति च ।
रुचीनांव्वैचित्र्य दृजुकुटिलनानापथजुषा-
न्नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव । ७
महोक्षः खट्वांगम्परशुरजिनम्भस्म फणिनः
कपालं चैतीयत्तव वरद तन्त्रोपकरणम् ।
सुरास्तां तामृद्धिं विदधति तव भ्रूप्रणिहितां
नहि स्वात्मारामं व्विषयमृगतृष्णा भ्रमयति । ८
ध्रुवङ्कश्चित्सर्व्वं सकलमपरस्त्वध्रुवमिद-
म्परो ध्रौव्याध्रौव्ये जगति गदति व्यस्तविषये ।
समस्तेऽप्येतस्मिन्पुरमथन तैर्व्विस्मित इव
स्तुवञ्जिह्लेमि त्वान्न खलु ननु धृष्टा मुखरता । ९
तवैश्वर्यं यत्नाद्यदुपरि विरिञ्चो हरिरधः
परिच्छेत्तुं यातावनलमनलस्कन्धवपुषः ।
ततो भक्तिश्रद्धाभरगुरुगृणद्भ्यां गिरिश य
त्स्वयन्तस्थे ताभ्यान्तव किमनुवृत्तिर्न्न फलति । १०
अयत्नादापद्य त्रिभुवनमवैरव्यतिकर
न्दशास्यो यद्बाहूनभृत रणकण्डूपरवशान् ।
शिरः पद्मश्रेणीं रचितचरणाम्भोरुहबलेः
स्थिरायास्त्वद्भक्तेस्त्रिपुरहर विस्फूर्जितमिदम् । ११
अमुष्य त्वत्सेवासमधिगतसारम्भुजबल-
म्बलात्कैलासेपि त्वदधिवसतौ व्विक्रमयतः ।
अलभ्या पातालेप्यलसचलिताङ्गुष्ठशिरसि
प्रतिष्ठा त्वय्यासीद्ध्रुवमुपचितो मुह्यति खलः । १२

यदृद्धिं सुत्राम्णो वरद परमोच्चैरपि सतीं
मधश्चक्रे बाणः परिजनविधेयस्त्रिभुवनः ।
न तच्चित्रन्तस्मिन्वरिवसितरि त्वच्चरणयो-
र्न कस्याप्युन्नत्यै भवति शिरसस्त्वय्यवनतिः । १३
अकाण्डब्रह्माण्डक्षयचकितदेवासुरकृपा-
विधेयस्यासीद्यस्त्रिनयन विषं संहृतवतः ।
स कल्माषः कण्ठे तव न कुरुते न श्रियमहो
विकारोऽपि श्लाघ्यो भुवनभयभङ्गव्यसनिनः । १४
असिद्धार्था नैव क्वचिदपि सदेवासुरनरे
निवर्त्तन्ते नित्यं जगति जयिनो यस्य विशिखाः ।
स पश्यन्नीश त्वामितरसुरसाधारणमभूत्
स्मरः स्मर्त्तव्यात्मा नहि वशिषु पथ्यः परिभवः । १५
मही पादाघाताद् व्रजति सहसा संशयपदं
पदं विष्णोर्भ्राम्यद्भुजपरिघरुग्णग्रहगणम् ।
मुहुर्द्यौर्दौस्थ्यं यात्यनिभृतजटाताडिततटा
जगद्रक्षायै त्वन्नटसि ननु वामैव विभुता । १६
वियद्व्यापी तारागणगुणितफेनोद्गमरुचिः
प्रवाहो वारां यः पृषतलघुदृष्टः शिरसि ते ।
जगद्द्वीपाकारं जलधिवलयन्तेन कृतमि-
त्यनेनैवोन्नेयन्धृतमहिम दिव्यन्तव वपुः । १७
रथः क्षोणी यन्ता शतधृतिरगेन्द्रो धनुरथो
रथाङ्गे चन्द्रार्कौ रथचरणपाणिः शर इति ।
दिधक्षोस्ते कोयन्त्रिपुरतृणमाडम्बरविधि-
र्विधेयैः क्रीडन्त्यो न खलु परतन्त्राः प्रभुधियः । १८
हरिस्ते साहस्रं कमलबलिमाधाय पदयो-
र्यदेकोने तस्मिन्निजमनुहरन्नेत्रकमलम् ।
गतो भक्त्युद्रेकः परिणतिमसौ चक्रवपुषा
त्रयाणां रक्षायै त्रिपुरहर जागर्त्ति जगताम् । १९

क्रतौ सुप्ते जाग्रत्त्वमसि फलयोगे क्रतुमताङ्
क्व कर्म्म प्रध्वस्तम्फलति पुरुषाराधनमृते ।
अतस्त्वां सम्प्रेक्ष्य क्रतुषु फलदानप्रतिभुवं
श्रुतौ श्रद्धां बद्ध्वा दृढपरिकरः कर्म्मसु जनः । २०
क्रियादक्षो दक्षः क्रतुपतिरधीशस्तनुभृता-
मृषीणामार्त्विज्यं शरणद सदस्याः सुरगणाः ।
क्रतुभ्रंशस्त्वत्तः क्रतुफलविधानव्यसनिनो
ध्रुवङ्कर्तुं श्रद्धाविधुरमभिचाराय हि मखाः । २१
प्रजानाथन्नाथ प्रसभमभिकं स्वान्दुहितरं
गतं रोहिद्भूतां रिरमयिषुमृष्यस्य वपुषा ।
धनुष्पाणेर्यातन्दिवमपि सपत्राकृतममु-
न्त्रसन्तन्तेऽद्यापि त्यजति न मृगव्याधरभसः । २२
स्वलावण्याशंसाधृतधनुषमह्नाय तृणव-
त्पुरः प्लुष्टन्दृष्ट्वा पुरमथन पुष्पायुधमपि ।
यदि स्त्रैणन्देवी यमनिरतदेहार्द्धघटना-
दवैति त्वामद्धा बत वरद मुग्धा युवतयः । २३
श्मशानेष्वाक्रीडः स्मरहर पिशाचाः सहचरा-
श्चिताभस्मालेपः स्रगपि नृकरोटी परिकरः ।
अमंगल्यं शीलन्तव भवतु नामैवमखिल-
न्तथापि स्मर्तॄणांव्वरद परमम्मंगलमसि । २४
मनः प्रत्यक्चित्ते सविधमवधायात्तमरुतः
प्रहृष्यद्रोमाणः प्रमदसलिलोत्सङ्गितदृशः ।
यदालोक्याह्लादं ह्रद इव निमज्यामृतमये
दधत्यन्तस्तत्त्वङ्किमपि यमिनस्तत्किल भवान् । २५
त्वमर्कस्त्वं सोमस्त्वमसि पवनस्त्वं हुतवह-
स्त्वमापस्त्वंव्योम त्वमु धरणिरात्मा त्वमिति च ।
परिच्छिन्नामेवन्त्वयि परिणता बिभ्रति गिर-
न्न विद्मस्तत्तत्त्वंव्वयमिह तु यत्त्वन्न भवसि । २६

त्रयीन्तिस्रो वृत्तीस्त्रिभुवनमथो त्रीनपि सुरा-
नकाराद्यैर्वर्ण्णैस्त्रिभिरभिदधत्तीर्ण्णविकृति ।
तुरीयन्ते धाम ध्वनिभिरवरुन्धानमणुभिः
समस्तं व्यस्तं वा शरणद गृणात्योमिति पदम् । २७
भवः शर्व्वो रुद्रः पशुपतिरथोग्रः सहमहाँ-
स्तथा भीमेशानाविति यदभिधानाष्टकमिदम् ।
अमुष्मिन्प्रत्येकम्प्रविचरति देव श्रुतिरपि ।
प्रियायास्मै धाम्ने प्रणिहित नमस्यामि भवते । २८
नमो नेदिष्ठाय प्रियदवदविष्ठाय च नमो
नमः क्षोदिष्ठाय स्मरहर महिष्ठाय च नमः ।
नमो वर्षिष्ठाय त्रिनयनयविष्ठाय च नमो
नमः सर्व्वस्मै ते तदिदमिति सर्व्वाय च नमः । २९
प्रवलरजसे विश्वोत्पत्तौ भवाय नमो नमः
प्रबलतमसे तत्संहारे हराय नमो नमः ।
जनसुखकृते सत्त्वोद्रिक्तौ मृडाय नमो नमः
प्रमहसि पदे निस्त्रैगुण्ये शिवाय नमो नमः । ३०
कृशपरिणति चेतः क्लेशवश्यन्क्व चेदङ्
क्व च तव गुणसीमोल्लंघिनी शश्वदृद्धिः ।
इति चकितममन्दीकृत्य मां भक्तिराधा-
द्वरदचरणयोस्ते वाक्यपुष्पोपहारम् । ३१
असितगिरिसमं स्यात्कज्जलं सिन्धुपात्रे
सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्व्वी ।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्व्वकाल-
स्तदपि तव गुणानामीश पारन्न याति । ३२
असुरसुरमुनीन्द्रैरर्च्चितस्येन्दुमौले-
र्ग्रथितगुणमहिम्नो निर्गुणस्येश्वरस्य ।
सकलगुणवरिष्ठः पुष्पदन्ताभिधानो
रुचिरमलघुवृत्तैः स्तोत्रमेतच्चकार । ३३

अहरहरनवद्यं धूर्जटेः स्तोत्रमेतत्
पठति परमभक्त्या शुद्धचित्तः पुमान्यः ।
स भवति शिवलोके रुद्रतुल्यस्तथात्र
प्रचुरतरधनायुःपुत्रवान्कीर्तिमांश्च । ३४

महेशान्नापरो देवो महिम्नो नापरा स्तुतिः ।
अघोरान्नापरो मंत्रो नास्ति तत्त्वं गुरोः परम् । ३२

दीक्षा दानन्तपस्तीर्थं ज्ञानं यागादिकाः क्रियाः ।
महिम्नस्तवपाठस्य कलान्नार्हन्ति षोडशीम् 36

आसमाप्तिमिदं स्तोत्रं सर्व्वमीश्वरवर्णनम् ।
अनौपम्यम्मनोहारि पुण्यं गन्धर्व्वभाषितम् । 37

कुसुमदशननामा सर्व्वगन्धर्व्वराजः
शशधरवरमौलेर्देवदेवस्य दासः ।
स खलु निजमहिम्नो भ्रष्ट एवास्य रोषा-
त्स्तवनमिदमकार्षीद्दिव्यदिव्यम्महिम्नः । 38

सुरवरमुनिपूज्यं स्वर्गमोक्षैकहेतुं ।
पठति यदि मनुष्यः प्रांजलिर्नान्यचेताः ।
व्रजति शिवसमीपङ्किन्नरैः स्तूयमानः
स्तवनमिदममोघम्पुष्पदन्तप्रणीतम् । 39

श्रीपुष्पदन्तमुखपङ्कजनिर्गतेन
स्तोत्रेण किल्विषहरेण हरप्रियेण ।
कण्ठस्थितेन पठितेन समाहितेन
सुप्रीणितो भवति भूतपतिर्म्महेशः । 40

शिव कवच

अस्य श्रीशिवकवचस्तोत्रमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः। अनुष्टुप्छन्दः। श्रीसदाशिवरुद्रो देवता। ह्रीं शक्तिः कीलकम्। श्रीं ह्रीं क्लीं बीजम्। श्रीसदाशिवप्रीत्यर्थे शिवकवचस्तोत्रजपे विनियोगः।

निम्नलिखित 'शिवकवच' का पाठ किये जाने पर शिव मन्त्र की सिद्धि प्राप्त होती है। जो साधक इस कवच का प्रतिदिन नियम पूर्वक पाठ करते हैं अथवा इसे अष्ट गन्ध द्वारा भोजपत्र पर लिख कर एवं त्रिलोह के तावीज में भरकर कण्ठ अथवा भुजा में धारण करते हैं उनके समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं तथा उन्हे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति होती है।

अथ करन्यासः—

ओं नमो भगवते ज्वलज्ज्वालामालिने ओं शं सर्व्वशक्तिधाम्ने ईशानात्मने अंगुष्ठाभ्यान्नमः।

ओं नमो भगवते ज्वलज्ज्वालामालिने रों नित्यतृप्तिधाम्ने तत्पुरुषात्मने तर्जनीभ्यान्नमः।

ओं नमो भगवते ज्वलज्ज्वालामालिने ओं मं रूं अनादिशक्तिधाम्ने अघोराय ते मध्यमाभ्यां नमः।

ओं नमो भगवते ज्वलज्ज्वालामालिने ओं भें रैं स्वतन्त्रशक्तिधाम्ने वामदेवात्मने अनामिकाभ्यान्नमः।

ओं नमो भगवते ज्वलज्ज्वालामालिने ओं वीं रीं अतुल्यशक्तिधाम्ने सद्योजातात्मने कनिष्ठाभ्यान्नमः।

ओं नमो भगवते ज्वलज्ज्वालामालिने ओं यं रः अनादिशक्तिधाम्ने करतलकरपृष्ठाभ्यान्नमः।

एवं हृदयादि।

अथ ध्यानम्—

वज्रदंष्ट्रन्त्रिनयनङ्कालकण्ठमरिन्दमम्।
सहस्रकरमत्युग्रं व्वन्दे शम्भुमुमापतिम्॥ १॥

अथापरं सर्व्वपुराणगुह्यन्निःशेषपापौघहरम्पवित्रम् ।
जयप्रदं सर्व्वविपत्प्रमोचनं वक्ष्यामि शैवङ्कवचं हिताय ते ॥ २ ॥
नमस्कृत्वा महादेवंव्विश्वव्यापिनमीश्वरम् ।
वक्ष्ये शिवमयँव्वर्म सर्व्वरक्षाकरन्नृणाम् ॥ ३ ॥
शुचौ देशे समासीनो यथावत्कल्पितासनः ।
जितेन्द्रियो जितप्राणश्चिन्तयेच्छिवमव्ययम् ॥ ४ ॥
हृत्पुण्डरीकान्तरसन्निविष्टं
स्वतेजसा व्याप्तनभोवकाशम् ।
अतीन्द्रियं सूक्ष्ममनन्तमाद्य-
न्ध्यायेत्परानन्दमयम्महेशम् ॥ ५ ॥
ध्यानावधूताखिलकर्म्मबन्ध-
श्चिरञ्चिरानन्दनिमग्नचेताः ।
षडक्षरन्याससमाहितात्मा
शैवेन कुर्य्यात्कवचेन रक्षाम् ॥ ६ ॥
माम्पातु देवोऽखिलदेवतात्मा
संसारकूपे पतितङ्गभीरे ।
तन्नाम दिव्यँव्वरमन्त्रमूल-
न्धुनोतु मे सर्व्वमघं हृदिस्थम् ॥ ७ ॥
सर्व्वत्र मां रक्षतु विश्वमूर्त्ति-
र्ज्ज्योतिर्म्मयानन्दघनश्चिदात्मा ।
अणोरणीयानुरुशक्तिरेकः
स ईश्वरः पातु भयादशेषात् ॥ ८ ॥
यो भूस्वरूपेण बिभर्त्ति विश्व-
म्पायात्स भूमेर्गिरिशोऽष्टमूर्त्तिः ।
योपां स्वरूपेण नृणाङ्करोति
सञ्जीवनं सोऽवतु माञ्जलेभ्यः ॥ ९ ॥
कल्पावसानेषु वनानि दग्ध्वा
सर्व्वाणि यो नृत्यति भूरिलीलः

स कालरुद्रोऽवतु मान्दवाग्ने
र्वात्यादि भीतेरखिलाच्च तापात् ॥ १० ॥
प्रदीप्तविद्युत्कनकावभासो
विद्यावराभीतिकुठारपाणिः ।
चतुर्मुखस्तत्पुरुषस्त्रिनेत्रः
प्राच्यां स्थितं रक्षतु मामजस्रम् ॥ ११ ॥
कुठारखेटाङ्कुश पाशशूल-
कपालढक्काक्षगुणान्दधानः ।
चतुर्मुखीनीलरुचिस्त्रिनेत्रः
पायादघोरो दिशि दक्षिणस्याम् ॥ १२ ॥
कुन्देन्दुशङ्खस्फटिकावभासो
वेदाक्षमालावरदाभयाङ्कः ।
त्र्यक्षश्चतुर्व्वक्त्र उरुप्रभावः
सद्योधिजातोऽवतु माम्प्रतीच्याम् ॥ १३ ॥
वराक्षमालाभयटङ्कहस्तः
सरोजकिञ्जल्कसमानवर्णः ।
त्रिलोचनचारुचतुर्म्मुखो मा-
म्पायादुदीच्यान्दिशि वामदेवः ॥ १४ ॥
वेदाभयेष्टाङ्कुशपाशटङ्क-
कपालढक्काक्षकशूलपाणिः ।
सितद्युतिः पञ्चमुखोवतान्मा-
मीशान उर्द्ध्वम्परमप्रकाशः ॥ १५ ॥
मूर्द्धानमव्यान्मम चन्द्रमौलिः
भालम्ममाव्यादथ भालनेत्रः ।
नेत्रे ममाव्याद्भगनेत्रहारी
नासां सदा रक्षतु विश्वनाथः ॥ १६ ॥
पायाच्छ्रुती मे श्रुतिगीतकीर्त्तिः
कपोलमव्यात्सततङ्कपाली ।

वक्त्रं सदा रक्षतु पञ्चवक्त्रो
जिह्वां सदा रक्षतु वेदजिह्वः ॥ १७ ॥
कण्ठङ्गिरीशोऽवतु नीलकण्ठः
पाणिद्वयम्पातु पिनाकपाणिः ।
दोर्म्मूलमव्यान्मम धर्म्मबाहु-
र्वक्षःस्थलन्दक्षमखान्तकोऽव्यात् ॥ १८ ॥
ममोदरम्पातु गिरीन्द्रधन्वा
मध्यम्ममाव्यान्मदनान्तकारी ।
हेरम्बतातो मम पातु नाभि-
म्पायात्कटिन्धूर्ज्जटिरीश्वरो मे ॥ १९ ॥
उरुद्वयम्पातु कुबेरमित्रो
जानुद्वयम्मे जगदीश्वरोऽव्यात् ।
महेश्वरः पातु दिनादियामे
माम्मध्ययामेऽवतु वामदेवः ।
त्रियम्बकः पातु तृतीययामे
वृषध्वजः पातु दिनान्त्ययामे ॥ २० ॥
पायान्निशादौ शशिशेखरो मा-
ङ्गङ्गाधरो रक्षतु मन्निशीथे ।
गौरीपतिः पातु निशावसाने
मृत्युञ्जयो रक्षतु सर्व्वकालम् ॥ २१ ॥
अन्तःस्थितं रक्षतु शङ्करो मां
स्थाणुः सदा पातु बहिःस्थितम्माम् ।
तदन्तरे पातु पतिः पशूनां
सदाशिवो रक्षतु मां समन्तात् ॥ २२ ॥
तिष्ठन्तमव्याद्भुवनैकनाथः
पायाद्व्रजन्तम्प्रमथाधिनाथः ।

वेदान्तवेद्योऽवतु मान्निषण्ण-
म्मामव्ययः पातु शिवः शयानम् ॥ २३ ॥
मार्ग्गेषु मां रक्षतु नीलकण्ठः
शैलादिदुर्ग्गेषु पुरत्रयारिः ।
अरण्यवासादिमहाप्रवासे
पायान्मृगव्याध उदारशक्तिः ॥ २४ ॥
कल्पान्तकाटोपपटुप्रकोप-
स्फुटाट्टहासोच्चलिताण्डकोशः ।
घोरारिसेनार्ण्णवदुर्न्निवार-
महाभयाद्रक्षतु वीरभद्रः ॥ २५ ॥
पत्यश्वमातङ्गरथावरूथ-
सहस्रलक्षायुतकोटिभीषणम् ।
अक्षौहिणीनां शतमाततायिना-
ञ्छिन्द्यान्मृडो घोरकुठारधारया ॥ २६ ॥
निहन्तु दस्यून्प्रलयानलार्च्चि-
ज्ज्वलन्त्रिशूलन्त्रिपुरान्तकस्य ।
शार्दूलसिंहर्क्षवृकादिहिंस्रान्
सन्त्रासयत्वीशधनुः पिनाकः ॥ २७ ॥
दुःस्वप्नदुःशकुनदुर्गतिदौर्म्मनस्य-
दुर्भिक्षदुर्व्यसनदुःसहदुर्य्यशांसि ।
उत्पाततापविषभीतिमसद्ग्रहार्त्ति-
व्याधींश्च नाशयतु मे जगतामधीशः ॥ २८ ॥

ओं नमो भगवते सदाशिवाय सकलतत्त्वात्मकाय सर्व्वमन्त्ररूपाय सर्व्वयन्त्राधिष्ठिताय सर्व्वतन्त्ररूपाय सर्व्वतत्त्वविदूराय ब्रह्मरुद्रावतारिणे नीलकण्ठाय पार्व्वतीमनोहरप्रियाय सोमसूर्याग्निलोचनाय भस्मोद्धूलित-विग्रहाय महामणिमुकुटधारणाय माणिक्यभूषणाय सृष्टिस्थितिप्रलयकाल-रौद्रावताराय दक्षाध्वरध्वंसकाय महाकालभेदनाय मूलाधारैकनिलयाय

तत्त्वातीताय गङ्गाधराय सर्वदेवाधिदेवाय षडाश्रयाय वेदान्तसाराय। त्रिवर्गसाधनायानन्तकोटिब्रह्माण्डनायकायानन्तवासुकितक्षककर्कोटकशङ्खकुलिकपद्म महापद्मेत्यष्टमहानागकुलभूषणाय प्रणवस्वरूपाय चिदाकाशायाकाशदिक्स्वरूपाय ग्रहनक्षत्रमालिने सकलाय कलङ्करहिताय सकललोकैककर्त्रे सकललोकैकसंहर्त्रे सकललोकैकगुरवे सकललोकैकसाक्षिणे सकलनिगमगुह्याय सकलवेदान्तपारगाय सकललोकैकवरदप्रदाय सकललोकैकशङ्कराय शशाङ्कशेखराय शाश्वतनिजावासाय निराभासाय निरामयाय निर्म्मलाय निर्ल्लोभाय निर्म्मदाय निश्चिन्ताय निरहङ्काराय निरङ्कुशाय निष्कलङ्काय निर्गुणाय निष्कामाय निरुपप्लवाय निरवद्याय निरन्तराय निष्कारणाय निरातङ्काय निष्प्रपञ्चाय निस्सङ्गाय निर्द्वन्द्वाय निराधाराय निरागाय निष्क्रोधाय निर्म्मलाय निष्पापाय निर्भयाय निर्व्विकल्पाय निर्भेदाय निष्क्रियाय निस्तुलाय निःसंशयाय निरंजनाय निरुपमविभवाय नित्यशुद्धबुद्धिपरिपूर्णसच्चिदानन्दाद्वयाय परमशान्तस्वरूपाय तेजोरूपाय तेजोमयाय जय जय रुद्र महारौद्र महावतार महाभैरव कालभैरव कल्पान्तभैरव कपालमालाधर खट्वाङ्गखड्ग चर्म्म पाशाङ्कुशडमरुशूलचापबाणगदाशक्तिभिन्दिपालतोमरमुसलमुद्गरपाशपरिघभुशुण्डीशतघ्नीचक्राद्यायुधभीषणकर सहस्रमुख दंष्ट्राकरालवदन विकटाट्टहासविस्फारितब्रह्माण्डमण्डल नागेन्द्रकुण्डल नागेन्द्रहार नागेन्द्रवलय नागेन्द्रचर्मधर मृत्युञ्जय त्र्यम्बक त्रिपुरान्तक विश्वरूप विरूपाक्ष विश्वेश्वर वृषवाहन विश्वतोमुख सर्वतोरक्ष रक्ष ज्वल ज्वल महामृत्युभयं मृत्युभयन्नाशय नाशय चौरभयमुत्सादयोत्सादय विषसर्प्पभयं शमय शमय चोरान्मारय मारय मम शत्रूनुच्चाटयोच्चाटय त्रिशूलेन विदारय कुठारेण भिन्धि भिन्धि खड्गेन छिन्धि छिन्धि छिन्धि खट्वाङ्गेन विपोथय विपोथय मुसलेन निष्पेषय निष्पेषय बाणैः सन्ताडय सन्ताडय रक्षांसि भीषय भीषय अशेषभूतानि विद्रावय विद्रावय कूष्माण्ड वेताल मारीगण ब्रह्मराक्षस गणान् सन्त्रासय सन्त्रासय ममाभयङ्कुरु कुरु वित्रस्तम्मामाश्वासयाश्वासय नरकमहाभयान्मामुद्धरोद्धर संजीवय संजीवय क्षुत्तृड्भ्याम्मामाप्यायाप्यायय दुःखातुरम्मामानन्दयानन्दय शिवकवचेन मामाच्छादयाच्छादय मृत्युञ्जय त्र्यम्बक सदा शिव नमस्ते ।

ऋषभ उवाच—

इत्येतत्कवचं शैवंव्वरदंव्याहृतम्मया ।
सर्व्वबाधाप्रशमनं रहस्यं सर्व्वदेहिनाम् ॥ ३० ॥

यः सदा धारयेन्मर्त्यः शैवङ्कवचमुत्तमम् ।
न तस्य जायते क्वापि भयं शम्भोरनुग्रहात् ॥ ३१ ॥

क्षीणायुः प्राप्तमृत्युर्व्वा महारोगहतोऽपि वा ॥
सद्यः सुखमवाप्नोति दीर्घमायुश्च विन्दति ॥ ३२ ॥

सर्व्वदारिद्र्यशमनं सौमङ्गल्यविवर्द्धनम् ।
यो धत्ते कवचं शैवं स देवैरपि पूज्यते ॥ ३३ ॥

महापातकसङ्घातैर्मुच्यते चोपपातकैः ।
देहान्ते मुक्तिमाप्नोति शिववर्म्मानुभावतः ॥ ३४ ॥

त्वमपि श्रद्धया वत्स शैवङ्कवचमुत्तमम् ।
धारयस्व मया दत्तं सद्यः श्रेयो ह्यवाप्स्यसि ॥ ३५ ॥

सूत उवाच

इत्युक्त्वा ऋषभो योगी तस्मै पार्थिवसूनवे ।
ददौ शङ्खम्महारावं खड्गचारिनिषूदनम् ॥ ३६ ॥

पुनश्च भस्म सम्मन्त्र्य तदङ्गम्परितोऽस्पृशत् ।
गजानां षट् सहस्रस्य द्विगुणस्य बलन्ददौ ॥ ३७ ॥

भस्मप्रभावात्सम्प्राप्तबलैश्वर्य्यधृतिस्मृतिः ।
सराजपुत्रः शुशुभे शरदर्क इव श्रिया ॥ ३८ ॥

तमाह प्रांजलिम्भूयः स योगी नृपनन्दनम् ।
एष खड्गो मया दत्तस्तपोमन्त्रानुभावितः ॥ ३९ ॥

शितधारमिमं खड्गं यस्मै दर्शयसे स्फुटम् ।
स सद्यो म्रियते शत्रुः साक्षान्मृत्युरपि स्वयम् ॥ ४० ॥

अस्य शङ्खस्य निर्ह्रादंय्ये शृण्वन्ति तवाहिताः ।
ते मूर्च्छिताः पतिष्यन्ति न्यस्तशस्त्रा विचेतनाः ॥ ४१ ॥

खड्गशङ्खाविमौ दिव्यौ परसैन्यविनाशिनौ ।
आत्मसैन्यस्वपक्षाणां शौर्य्यतेजोविवर्द्धनौ ॥ ४२ ॥

एतयोश्च प्रभावेण शैवेन कवचेन च ।
द्विषट्सहस्रनागानाम्बलेन महतापि च ॥ ४३ ॥

अस्मधारणसामर्थ्याच्छत्रुसैन्यंव्विजेष्यसि ।
प्राप्य सिंहासनम्पित्र्यङ्गोप्ताऽसि पृथिवीमिमाम् ॥ ४४ ॥

इति भद्रायुषं सम्यगनुशास्य समातृकम् ।
ताभ्यां सम्पूजितः सोऽथ योगी स्वैरगतिर्य्ययौ ।

॥ इति शिवकवचं सम्पूर्णम् ॥

आरती शिव शंकर जी की

ओं जय शिव ओंकारा
हर शिव ओंकारा ।
ब्रह्मा विष्णु सदाशिव अर्धांगी धारा ॥
एकानन चतुरानन पंचानन राजे ।
हंसानन गरुड़ासन वृषवाहन साजे ॥
दोय भुज चार भुज दस भुज से सोहे ।
तीनों रूप निरखता त्रिभुवन जन मोहै ॥
श्वेताम्बर पीताम्बर बाघम्बर अंगे ।
सनकादिक भूतादिक मुक्तादिक संगे ।
अक्षयमाला वनमाला मुंडमाला धारी ।
चन्दन मृगमद चन्दा भाले शुभकारी ॥
कर में मध्य कमण्डल चक्र त्रिशूल धर्ता ।
जगहर्ता जगकर्ता जगपोषणकर्ता ॥
ब्रह्मा स्वरूप न जाना ये तीनों एका ।
ब्रह्मा विष्णु महादेव ये सबन एका ॥
त्रिगुण स्वरूप की आरती हितकारी जो कोई गावै ।
कहत शिवानन्द स्वामी सुख सम्पति पावै ॥

ओं नमो शिवाय

5

हनुमत् साधन

75

जब भगवान श्री रामचन्द्र जी महाराज ने पृथ्वी का भार उतारने को अयोध्या में जन्म लिया तब उनकी रक्षा और साथ देने के लिए शंकर जी ने हनुमान जी के रूप में चैत्र शु० पूर्णिमा को जन्म लिया था। उन्हीं के उपलक्ष में मन्वादि पूर्णिमा को हनुमान जयन्ती भी कहते हैं। हनुमान-जयन्ती को हनुमान जी का व्रत रखें और स्नान करके हनुमान जी की मूर्ति को सिंदूर का चोला चढ़ावें, चांदी के वर्क लगावें और उनकी आरती उतारें। फिर हनुमान जी पर लगे सिंदूर में से एक टीका अपने माथे पर लगा लें। फिर वहां बैठकर हनुमान चालीसा का सच्ची आत्मा से सात बार पाठ करें। दिन में बन्दरों को भुने हुए चने खिलायें। हनुमान जी के व्रत से भूत-पिशाच से छुटकारा मिलता है। हनुमान भगवान श्री रामचन्द्र जी महाराज के सेवक होने से हनुमान जी की सेवा भगवान श्री रामचन्द्र जी महाराज की सेवा में पहुंच जाती है जिससे भगवान श्री रामचन्द्र जी महाराज उस मनुष्य को अपने लोक में बुला लेते हैं। हनुमान चालीसा का पाठ करने से सिद्धि प्राप्त होती है। इसलिये महापुरुषों ने कहा है कि हनुमान जयन्ती का व्रत अवश्य करना चाहिये। यह तो है हनुमान जयन्ती के व्रत का वर्णन। अब हम उनके साधन-मन्त्र एवं पूजा प्रणाली का वर्णन करेंगे।

श्री हनुमान जी को सिद्ध करने के लिए निम्न लिखे गये नियमों का पालन करना आवश्यक है। अतः जो सज्जन सिद्धि प्राप्त करना चाहें उनको इन नियमों का पालन अवश्यमेव करना चाहिए। यदि इन नियमों के अनुसार कार्य न किया गया तो फिर साधक को कई प्रकार कष्टों का सामना करना पड़ेगा इस लिये नियमों का पालन करना आवश्यक है।

(1) साधक को ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए। सिद्धि की प्राप्ति के पश्चात् वह केवल एक विवाह कर सकता है। वह भी केवल अपने वंश का नाम चलाने के लिए। साधक को अपनी पत्नी के अतिरिक्त बाकी सब स्त्रियों को अपनी मां-बहिन के समान समझना चाहिए।

(2) साधक को मांस, मदिरा, चर्स आदि बुरी वस्तुओं से परहेज करना चाहिए।

(3) प्रत्येक अवस्था में शुद्ध पवित्र रहना, मन को साफ और मस्तिष्क से बुराई का शब्द बिलकुल निकाल देना चाहिये।

(4) चोरी, काम, क्रोध, लालच, अहंकार, हिंसा, कुदृष्टि सब बातें दूर कर देनी चाहिएँ।

(5) प्रत्येक मंगलवार के दिन व्रत रखना चाहिए और सायं का को केवल एक समय ही भोजन करना चाहिए।

(6) मंगलवार को अपनी पत्नी के साथ सम्भोग न करे।

(7) साधक साधना-काल में अपने मन में किसी प्रकार का कुविचार उत्पन्न न होने दे।

विधि—

जो साधक श्री हनुमान जी को सिद्ध करना चाहे, वह उपरोक्त नियमों का पालन करे और हस्त नक्षत्र के दिन नदी पर जाकर, वहां से शुद्ध और पवित्र मिट्टी लाकर, किसी कुशल कुम्हार से, उसकी, श्री हनुमान जी की मूर्ति निम्न निर्देश के अनुसार निर्माण करवा कर उसे सुखा लेवे।

टिप्पणी—

इस बात को सदा याद रखिये कि किसी भी मूर्ति को आग में नहीं रखना चाहिये। मूर्ति के सूख जाने पर, उस पर, सिन्दूर तथा शुद्ध देशी घी मिलाकर रङ्ग कर देवें। उस मूर्ति के लिये घर में किसी अलग स्थान का चुनाव करें। उस स्थान को हमें श्रीहनुमान जी का मन्दिर कहना चाहिए। उस स्थान को भली प्रकार सुसज्जित करके, उसमें एक चौकी रक्खें और उस

चौकी पर श्री हनुमान जी की मूर्ति रक्खें। जिस कमरे में श्री हनुमान जी का मन्दिर तैयार किया जाये उस कमरे में किसी अपवित्र अथवा गन्दे व्यक्ति को न आने दिया जाये। कोई अपवित्र स्त्री अथवा बच्चा उस कमरे के भीतर न आये और न ही कोई अपवित्र वस्तु उस मन्दिर में लानी चाहिये।

साधक के पूजा-पाठ करने वाले वस्तु तथा पात्र सब के सब अलग होने चाहिएँ। मन्दिर की किसी वस्तु को मन्दिर में से बाहर न निकालो। पूजा-पाठ की प्रत्येक वस्तु वस्त्र आदि सब-के-सब शुद्ध, पवित्र और स्वदेशी होने चाहिएँ पूजा के कार्य के लिए कोई विदेशी वस्तु नहीं वर्तनी चाहिये।

साधक को सायं-प्रात: दोनों समय पूजन करना चाहिए।

विधि—

साधक को चाहिए कि वह ब्रह्ममुहूर्त में शय्या से उठकर स्नान, सन्ध्या वन्दन आदि नित्य-कर्मों से निवृत्त होकर कुएँ के जल से स्नान करे। यदि कुंआ न हो तो नदी का पानी ही ठीक है और स्नान करने के पश्चात्, पूजा के वस्त्र पहन कर पूर्व की ओर मुख करके आसन पर बैठ जाये। एक साफ पानी का लोटा अपने पास रख ले। मन में श्री हनुमान जी की मूर्त्ति का ध्यान करे और मन में उठने वाले अन्य विचारों को दूर कर दे। मन में श्री हनुमान जी का ध्यान और मुख से 'ओं श्रीपवनसुताय नम:' का पाठ करता रहे।

पहले श्री हनुमान जी की मूर्ति को कुएं अथवा नदी या गंगाजल से स्नान कराये। फिर माथे पर सिंदूर, चन्दन, कस्तूरी, केसर इन सब वस्तुओं को घिस कर, तिलक लगाकर फूल मालाएं पहनाये और वस्त्र पहनाये। धूप, कपूर गुग्गुल जलाए। घी की जोत श्री हनुमान जी के आगे जलाये। पान, सुपारी, लौंग, इलायची हनुमान जी के आगे रक्खे। फिर उनको मिठाई का भोग लगाये। फिर उनकी आरती उतारे। फिर उनके पास एक लोटा पानी का भर कर रक्खे। फिर श्री हनुमान जी के आगे प्रार्थना करे और अपनी जो इच्छा हो उसे प्रार्थना में कह दे। इस प्रकार यह काम प्रतिदिन करना चाहिए।

प्रार्थना के पश्चात् श्री रामायण के सुन्दर काण्ड का प्रेम से पाठ करे। फिर श्री हनुमान जी के सामने बैठ कर श्री हनुमान चालीसा तथा संकट मोचन का प्रतिदिन इक्कीस बार पाठ करे। यदि हनुमान चालीसा का पाठ न कर सके तो उस अवस्था में श्री हनुमान जी के मन्त्र का ढाई लाख जप करे। यह जप चालीस दिन में समाप्त करे। प्रतिदिन सवा छः हजार जप करना चाहिए। पूजा पाठ में नागा बिलकुल नहीं करना चाहिए।

मन्त्र

ओं ह्रां ह्रीं ह्रीं श्रीवायुपुत्राय नमः।

प्रतिदिन जप करने के पश्चात् श्री हनुमान जी की आरती करे। फिर सूर्य भगवान को जल दे। फिर नमस्कार करके वस्त्र आदि उतार कर रख दे और अपने काम में लग जाये। साधक को चाहिए कि वह केवल एक समय भोजन करे। नमक का बिल्कुल प्रयोग न करे। केवल मीठा, दही, दूध, घी, आटे की रोटी पकवा कर खाये। या हलुवा बना कर खाये। फिर शाम को केवल हनुमान चालीसा का पाठ करे। पाठ करते समय धूप जला कर दीपक जलाना चाहिये। जो चीजें प्रातः काल मूर्ति पर चढ़ाई थीं, उनको उतार कर अलग रख ले। उनमें से फल स्वयं खा ले। जो जल श्रीहनुमान जी के आगे रक्खा था, उसे अपने प्रयोग में ले आये।

प्रतिदिन बच्चों में मिठाई बांटा करे और फिर चालीस दिन के पश्चात् श्रीहनुमान जी का पाठ करके उपरोक्त मन्त्र का पचास हजार हवन करे। यानी कपूर, गुग्गुल, घी, चम्पापुष्प, श्वेत चन्दन के बूरे की आहुति दे। छोटे-छोटे बच्चों में प्रसाद बाँटे।

पूजा के दिनों में श्रीहनुमान जी कई बार दर्शन देते और साधक की रक्षा करते और उसको हर प्रकार के कष्टों से बचाते हैं।

इस प्रकार श्री हनुमान जी सिद्ध हो जाते हैं। हर मंगलवार को श्री हनुमान जी को सिन्दूर तथा घी का चोला चढ़ाना चाहिये और मिठाई का भोग लगाकर वह मिठाई बच्चों में बाँट देनी चाहिये।

जब साधक श्री हनुमान जी को सिद्ध कर ले तो साधक में बड़ी भारी

शक्ति आ जाती है। यदि, साधक अपने चरित्र को ठीक रक्खे और सदा-सर्वदा हनुमान जी का पूजन तथा पाठ करता रहे तो उसको किसी प्रकार का कष्ट नहीं होगा और धन-धान्य उसके पास अपने आप जमा होता रहेगा।

साधक को चाहिए कि सिद्धि प्राप्ति हो जाने के पश्चात् भी प्रत्येक मंगलवार को व्रत रक्खे। प्रतिदिन श्री हनुमान जी का पूजन करके पाठ करे। बच्चों में मिठाई बाँटे।

और फिर सिद्धि की प्राप्ति के बाद

जब साधक पर कोई संकट आ पड़े तो उसको चाहिये कि वह श्रीहनुमान जी से प्रार्थना करे। संकट टल जायेगा।

श्री हनुमान जी के चरणों का तिलक लगाकर साधक जिसके सामने जायेगा, वह साधक जो कुछ भी कहेगा मान जायेगा। राजदरबार में जाने से सब काम ठीक हो जायेंगे। संकट मिट जायेंगे। विपत्तियाँ दूर हो जायेंगी। व्याधियाँ नष्ट हो जायेंगी।

श्री हनुमान जी का पाठ करके उनके चरणों से फूल लेकर, तथा पहिन कर, जो व्यक्ति, जिसभी काम के लिये जायेगा उसको अवश्य सफलता प्राप्त होगी।

श्री हनुमान जी का चरणामृत जिस रोगी को विश्वास के साथ दिया जायेगा वह अवश्यमेव स्वस्थ हो जायेगा।

श्री हनुमान जी का जल जिस स्थान पर छिड़क दिया जायेगा उस स्थान में से भूत प्रेत आदि सब के सब भाग जायेंगे।

जिस मकान में गर्भवती स्त्री हो उस स्थान पर पाठ करने से प्रेत-आत्माएं, भूत-प्रेत, पिशाच, श्मशानवासिनी, छाया आदि-आदि सबके-सब दूर हो जायेंगे।

संसार में ऐसा कोई भी कठिन कार्य नहीं है जिसको श्री हनुमान जी की कृपा से किया न जा सकता हो।

साधक यदि सत्यवादी तथा सदाचारी हो तो वह श्री हनुमान जी की कृपा

से वर्षों बाद होने वाली बातें पहले बता सकता है। जो कठिनाइयाँ सामने आयें उनको दूर करने के उपाय श्री हनुमान जी स्वप्न में दर्शन देकर बता देते हैं। साधक को प्रत्येक अवस्था में शुद्ध तथा पवित्र रहना चाहिये।

उपरोक्त मन्त्र पाठ करने से सभी संकट मिट जाते हैं।

आरती श्री हनुमान जी की

जाके बल से गिरवर कांपे,
भूत पिशाच निकट नहीं झांके।
आरती कीजे हनुमान लला की,
दुष्ट दलन रघुनाथ कला की।
लंकासी कोट समुद्रसी खाई, जात पवनसुत बार न लाई।
दे बीड़ा रघुनाथ पठाए, लंका जलाय सिया सुधि लाए।
जगमग ज्योति अवधपुर राजा घंटा ताज पखावज बाजा।
शक्ति बाण लगा लक्ष्मण को, लाय संजीवनी लषन जियाये।
बैठ पाताल छोड़ यम कातर, अहिरावण की भुजा उखाड़े।
आरती कीजै जैसी तैसी, ध्रुव प्रह्लाद विभीषण जैसी।
सुरनर मुनिजन आरती उतारें, जय जय जय हनुमान उचारें।
कंचन थाल कपूर सुहाई, आरती करत अंजनी माई।
बांई भुजा से असुर संहारे, दाहिनी भुजा से सब संत उबारे।
लंका जलाय असुर सब मारे, रामचन्द्र के काज संवारे।
अंजनीपुत्र महाबलदायक, देव संत के सदा सहायक।
लंका विध्वंस करी रघुराई, तुलसीदास कपि आरती गाई।
जो हनुमानजी की आरती गावे, बसि बैकुण्ठ अमर पद पावे।

6

दुर्गा साधन

हमारे प्राचीन शास्त्रों के अनुसार दुर्गा देवी नौ रूपों में प्रकट हुई हैं। उन सब रूपों की पृथक्-पृथक् कथा इस प्रकार है :—

१. महाकाली

एक बार जब पूरा संसार प्रलय से ग्रस्त हो गया था और चारों ओर पानी-ही-पानी दिखाई देता था उस समय भगवान् श्रीविष्णु की नाभि से एक कमल उत्पन्न हुआ। उस कमल से ब्रह्मा जी निकले। इसके अलावा श्रीभगवान के कान में से कुछ मैल भी निकला। उस मैल से कैटभ और मधु नाम के दो दैत्य बन गये। जब उन दैत्यों ने चारों तरफ देखा तो श्रीब्रह्मा जी के अलावा उन्हें कुछ भी दिखाई नहीं दिया। श्री ब्रह्मा जी को देखकर वह दोनों दैत्य उनको मारने के लिए दौड़े। तब भयभीत हुए श्री ब्रह्मा जी ने भगवान् श्रीविष्णु जी की स्तुति की। स्तुति से, भगवान् श्री विष्णु की आँख में जो महामाया योग-निद्रा के रूप में निवास करती थी लोप हो गई और विष्णु भगवान् की नींद खुल गई। उनके जागते ही दोनों दैत्य उनके साथ लड़ने लगे। और इस प्रकार पाँच हजार साल तक युद्ध चलता रहा। अन्त में भगवान् की रक्षा के लिये महामाया ने असुरों की बुद्धि को बदल दिया। तब वह असुर भगवान् श्रीविष्णु से कहने लगे—"हम आपके युद्ध से प्रसन्न हैं, जो चाहो सो वर माँग लो।" भगवान् ने मौका देखा और कहने लगे—"यदि हमें वर देना है तो यह वर दो कि दैत्यों का नाश हो।" दैत्यों ने कहा—"ऐसा ही होगा।" ऐसा कहते ही महाबली दैत्यों का नाश हो गया। जिस देवी ने असुरों की बुद्धि को बदला था वह महाकाली थी।

२. महालक्ष्मी

एक समय महिषासुर नाम का एक दैत्य हुआ। उसने समस्त राजाओं को हराकर पृथ्वी और पाताल पर अपना अधिकार कर लिया। जब वह देवताओं से युद्ध करने लगा तो देवता भी उससे युद्ध में हार कर भागने लगे। भागते-भागते वह भगवान् श्रीविष्णु के पास पहुँचे और उस दैत्य से बचने के लिये स्तुति करने लगे। तब भगवान् श्रीविष्णु और भगवान् श्रीसदाशिव के शरीर से एक तेज निकला, जिसने महालक्ष्मी का रूप धारण किया। इन्हीं महालक्ष्मी ने महिषासुर दैत्य को युद्ध में हरा कर देवताओं का कष्ट दूर किया।

३. महासरस्वती या चामुण्डा

एक समय शुम्भ-निशुम्भ नाम के दो दैत्य बहुत बलशाली हुए थे। उनसे युद्ध में मनुष्य तो क्या, देवता तक हार गये। जब देवताओं ने देखा कि अब वह युद्ध में जीत नहीं सकते, तब वह स्वर्ग छोड़कर भगवान् श्री विष्णु की स्तुति करने लगे। उस समय भगवान् के शरीर में से एक ज्योति प्रकट हुई, जो कि महासरस्वती थी। उसका रूप देखकर वह दैत्य मुग्ध हो गये और अपना सुग्रीव नाम का दूत उस देवी के पास अपनी इच्छा प्रकट करते हुए भेजा। उस दूत को देवी ने वापिस कर दिया। तब उन्होंने अपना धूम्राक्ष नामक सेनापति भेजा जो अपनी सेना सहित देवी द्वारा मार दिया गया। फिर चंडमुंड लड़ने आये वह भी मारे गए। उसके बाद रक्तबीज लड़ने आया, जिसकी रक्त की एक बूंद जमीन पर गिरने से एक वीर पैदा होजाता था। उसे भी देवी ने मार गिराया। फिर चामुण्डा से शुम्भनिशुम्भ दोनों लड़ने आये और मारे गये। सब दैत्यों की मृत्यु के बाद देवता बहुत प्रसन्न हुए।

४. योगमाया

जब कंस ने वसुदेव के छः पुत्रों का वध कर दिया था और सातवें गर्भ में शेषनाग बलराम जी आये जो रोहिणी के गर्भ में प्रवेश करके प्रकट हुए तब आठवां जन्म भगवान् श्रीकृष्ण चन्द्र जी महाराज का हुआ। साथ-ही-साथ गोकुल में यशोदा जी के गर्भ से योगमाया का जन्म हुआ जो वसुदेव जी के द्वारा

भगवान् श्रीकृष्ण चन्द्र जी महाराज के बदले मथुरा में लाई गई। जब कंस उस योगमाया कन्या स्वरूप को मारने लगा तो उस योगमाया ने कंस के हाथ से छूटकर आकाश में जाकर देवी रूप धारण कर लिया। इसी योगमाया ने भगवान् श्रीकृष्ण चन्द्र जी महाराज के साथ योगविद्या और महाविद्या बनकर कंस आदि असुरों को मरवाया था।

५. रक्तदन्तिका

एक बार पृथ्वी पर वैप्रचित्त नाम के असुर ने बहुत से कुकर्म किये। उसने मनुष्य और देवताओं को बहुत दुख दिया। उस समय दुर्गा देवी ने रक्तदन्तिका नाम से अवतार लिया और वैप्रचित्त आदि असुरों का संहार किया। इस देवी ने असुरों के खून का पान किया। इसी कारण इस देवी का नाम रक्त-दन्तिका विख्यात हुआ।

६. शाकम्भरी

एक समय पृथ्वी पर सौ वर्ष तक वर्षा नहीं हुई। इस कारण पृथ्वी पर त्राहि-त्राहि होने लगी। उस समय मुनियों ने मिलकर भगवती की आराधना की। तब जगदम्बा ने शाकम्भरी नाम से अवतार लिया और जल वर्षा करके पृथ्वी के समस्त जीवों को जीवन दान दिया।

७. दुर्गा

एक समय भारतवर्ष में दुर्गम नाम का दैत्य हुआ। उसके डर से पृथ्वी, पाताल और स्वर्ग में निवास करने वाले सभी भयभीत रहते थे। उस समय भगवान् की शक्ति ने दुर्गा या दुर्गसेनी नाम से अवतार लिया और दुर्गम दैत्य को मारकर ब्राह्मणों और हरिभक्तों की रक्षा की। दुर्गम दैत्य को मारने के कारण इनका नाम दुर्गा देवी प्रसिद्ध हो गया।

८. भ्रामरी

एक बार एक महान् अत्याचारी अरुण नाम का असुर पैदा हुआ। उसने स्वर्ग में जाकर उपद्रव करना शुरू कर दिया। देवताओं की पत्नियों का सतीत्व

नष्ट करने की कुचेष्टा करने लगा। अपने सतीत्व की रक्षा करने के लिये देवियों ने भैरों का रूप धारण कर लिया। तब उन देव-पत्नियों की रक्षा के लिये देवी दुर्गा ने भ्रामरी का रूप धारण करके उस असुर को उसकी सेना सहित मार कर उनके सतीत्व की रक्षा की।

६. चण्डिका

एक बार पृथ्वी पर चंड और मुण्ड नाम के दो दैत्य पैदा हुए। उन्होंने संसार में अपना राज्य फैलाया, यहाँ तक कि स्वर्ग में जाकर देवताओं को हराकर स्वर्ग पर अपना अधिकार कर लिया। इससे देवता बहुत दुखी हुए तब देवी चण्डिका का जन्म हुआ, जिसने चंड और मुण्ड नाम के दैत्यों को मार कर देवताओं को पुनः स्वर्ग लोक का राज्य दिया।

श्री दुर्गा देवी की पूजा विधि

दुर्गा-पूजा करने वाले साधक को उचित है कि वह स्नानादि से शुद्ध होकर पवित्र आसन पर बैठकर पूर्वाभिमुख होकर पहले आचमन, संकल्प आदि की क्रियायें करे। तत्पश्चात् श्रीदुर्गा देवी के चित्र, मूर्ति अथवा प्रतीक रूप में अन्य जो भी वस्तु रखी गई हो, उसको भगवती दुर्गा का प्रतीक रूप मानकर सर्व प्रथम उसके लिये पाद्य, अर्घ्य एवं आचमन के लिये जल निक्षेप करे। फिर क्रमशः गन्ध, सिन्दूर, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, फल, ताम्बूल (पान), सुपारी आदि से भगवती का यथाविधि एवं यथाशक्ति पूजन करे।

भगवती दुर्गा की पूजा में रोली अथवा गन्ध के स्थान पर लाल चन्दन एवं सिंदूर का उपयोग किया जाता है तथा लौंग के जोड़े को शुद्ध घी में डुबोकर अंगारे पर चढ़ाने का विशेष महत्त्व है। वैसे भी देवी की पूजा में लौंग, सिंदूर नारियल, बताशे तथा लाल वस्त्र का प्रयोग अवश्य करना चाहिये। भगवती दुर्गा के पूजन के लिये लाल रंग के पुष्प सर्वश्रेष्ठ माने गये हैं।

पूजा समाप्त करने के बाद आरती करनी चाहिये। स्तोत्र का पाठ करना चाहिये। जो लोग संस्कृत जानते हैं उन्हें दुर्गा सप्तशती का पाठ भी करना चाहिये।

भगवती दुर्गा के पूजन, ध्यान एवं हवन में प्रयुक्त होने वाले— उच्चारण किये जाने वाले कुछ प्रमुख मन्त्र निम्नलिखित हैं—

दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि ।
दारिद्र्यदुःखभयहारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता ॥ १
सर्वमंगलमंगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ २
शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे ।
सर्वस्यार्तिहरे देव नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ ३
रोगानशेषानपहंसि तुष्टा रुष्टा तु कामान् सकलानभीष्टान् ।
त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति ॥ ४
सर्वबाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि ।
एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरिविनाशनम् ॥ ५
जयन्ती मंगला काली भद्रकाली कपालिनी ।
दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते ॥ ६
जय त्वं देवि चामुण्डे जय भूतार्तिहारिणि ।
जय सर्वगते देवि कालरात्रि नमोऽस्तु ते ॥ ७
गौरी पद्मा शची मेधा सावित्री विजया जया ।
देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातरः ॥ ८
सर्वमंगलमङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि महालक्ष्मि नमोऽस्तु ते ॥ ९
खड्गं चक्रगदेषु चापपरिघाञ्छूलं भुशुण्डीं शिरः
शंखं संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वांगभूषावृताम् ।
नीलाश्मद्युतिमास्यपाददशका षेवे महाकालिकां
यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभम् ॥ १०

अक्षस्रक्परशुं गदेषु कुलिशं पद्मं धनुः कुण्डिकां
दंडं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम् ।
शूलं पाशसुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रसन्नाननां
सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम् ॥ १

घंटां शूलहलानि शङ्खमुसले चक्रं धनुः सायकं
हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम ।
गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महा-
पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजेच्छुम्भादिदैत्यार्दिनीम् ॥ १२

साधक को चालीस दिन तक प्रति दिन पाँच हजार जप करना चाहिये और फिर उसके बाद एक हजार मन्त्र का प्रतिदिन हवन करना चाहिये और इस प्रकार चालीस दिन में दो लाख जाप पूरा करना चाहिये ।

हवन की सामग्री

फुलाही की लकड़ी	नारियल की गिरी
कपूर	बादाम की गिरियाँ
श्वेत तथा लाल चन्दन	खांड
गुग्गुल	मावा
श्वेत सरसों	एलारा
काली मिर्चा	काले तिल
शहद	जौ
शुद्ध देशी घी	

विधि—

इन सब वस्तुओं को लेकर इकट्ठी करके घी में मिला लें । पश्चात् हवन कुण्ड में फुलाही की लकड़ी की आग जलाकर उस पर घी डालें । फिर मन्त्र पढ़कर आहुति डालें । एक हजार आहुति देने के पश्चात् सूर्य भगवान को जल देवें और श्रीदुर्गा देवी को नमस्कार करें ।

सबसे पहले श्री दुर्गा देवी की पूजा करें। उसके पश्चात् हवन करें। और फिर सूर्य को जल देकर सारा सामान सम्भाल करके दूसरे कामों की तरफ ध्यान देवें।

मन्त्र

ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे।

इस मन्त्र का जाप करें और जब हवन करना हो उस समय मन्त्र के अन्त में स्वाहा शब्द कह देवें।

चालीस दिन के पश्चात्, इकतालीसवें दिन बहुत सी कुंवारी कन्याओं को आमन्त्रित करके, उनके पैर धोकर उनके माथे पर तिलक लगायें। उनको दुर्गा का रूप जानकर उनको मिठाई दें और कुछ नकदी सब में बांट कर उनको प्रसन्न करें। फिर उनको हाथ जोड़कर नमस्कार करें और उनको बिदा कर देवें। रात को श्रीदुर्गा देवी की आरती करके नमस्कार करें। रात को भगवती दुर्गा देवी स्वप्न में दर्शन देंगी।

साधक को प्रतिदिन श्रीदुर्गा देवी की पूजा करनी चाहिये। यदि प्रति दिन जप व हवन के लिये समय निकाल सकें तो प्रतिदिन यह कार्य करना चाहिये। साधक को धन का अभाव नहीं रहेगा और उसको किसी प्रकार का भी दुख दर्द नहीं सतायेगा। जब भी कोई काम आ पड़े, भगवती के आगे प्रार्थना करे। भगवती सब कुछ ठीक कर देंगी।

दुर्गा स्तोत्र

पूजन जपादि के उपरान्त दुर्गा-स्तोत्र का पाठ करना चाहिए। यह स्तोत्र समस्त मनोकामनाएँ पूर्ण करने वाला, समस्त सिद्धियों को देने वाला तथा समस्त पापों को नष्ट करने वाला है।

स्तोत्र इस प्रकार है—

"न मन्त्रन्नो यन्त्रन्तदपि च न जाने स्तुतिमहो
न चाह्वानं ध्यानन्तदपि च न जाने स्तुतिकथाः।

न जाने मुद्रास्ते तदपि च न जाने विलपनं
परञ्जाने मातस्त्वदनु शरणं क्लेशहरणम् । १ ।

विधेरज्ञानेन द्रविणविरहेणाऽलसतया
विधेयाशक्यत्वात्तव चरणयोर्य्या च्युतिरभूत् ।
तदेतत्क्षन्तव्यञ्जननि सकलोद्धारिणि शिवे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति । २ ।

पृथिव्याम्पुत्रास्ते जननि बहवः सन्ति सरलाः
परन्तेषाम्मध्ये विरलतरलोऽहं तव सुतः ।
मदीयोयन्त्यागः समुचितमिदन्नो तव शिवे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति । ३ ।

जगन्मातर्म्मातस्तव चरणसेवा न रचिता
न वा दत्तन्देवि द्रविणमपि भूयस्तव मया ।
तथाऽपि त्वं स्नेहं मयि निरुपमंय्यत्प्रकुरुषे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति । ४ ।

परित्यक्त्वा देवान्विविधविधिसेवाकुलतया
मया पञ्चाशीतेरधिकमुपनीते तु वयसि ।
इदानीञ्चेन्मातस्तव यदि कृपा नाऽपि भविता
निरालम्बो लम्बोदर जननि कं यामि शरणम् । ५ ।

श्वपाको जल्पाको भवति मधुपाकोपमगिरा
निरातङ्को रङ्को विहरति चिरङ्कोटिकनकैः ।
तवापर्णे कर्णे विशति मनुजानां फलमिदं-
ञ्जनः को जानीते जननि जपनीयञ्जपविधौ । ६

चिताभस्मालेपो गरलमशनन्दिक्पटधरो
जटाधारी कण्ठे भुजगपतिहारी पशुपतिः ।
कपालीभूतेशो भजति जगदीशैकपदवी-
म्भवानि त्वत्पाणिग्रहणपरिपाटीफलमिदम् । ७ ।

न मोक्षस्याकाङ्क्षा न च विभववाञ्छापि च न मे
न विज्ञानापेक्षा शशिमुखि सुखेच्छापि न पुनः ।
अतस्त्वां सँय्याचे जननि जननं य्यातु मम वै
मृडानी रुद्राणी शिवशिव भवानीति जपतः । ८ ।
नाराधितासि विधिना विविधोपचारैः
किं रूक्षचिन्तनपरैर्न्न कृतंव्वचोभिः ।
श्यामे त्वमेव यदि किञ्चन मय्यनाथे
धत्से कृपामुचितमम्ब परन्तवैव । ९ ।
आपत्सु मग्नः स्मरणन्त्वदीयङ्करोमि दुर्गे करुणार्णवेशि ।
नैतच्छठत्वम्मम भावयेथाः क्षुधा तृषार्त्ता जननीं स्मरन्ति । १० ।
जगदम्ब विचित्रमत्र किम्परिपूर्णा करुणास्ति चेन्मयि ।
अपराधपरम्परावृतन्नहि माता समुपेक्षते सुतम् । ११ ।
मत्समः पातकी नास्ति पापघ्नी त्वत्समा न हि ।
एवं ज्ञात्वा महादेवि यथायोग्यन्तथा कुरु । १२ ।"
। इति स्तोत्रम् ।

दुर्गा-कवच

दुर्गा कवच का पाठ किए बिना मन्त्र का जप निष्फल हो जाता है अतः प्रत्येक साधक को कवच का पाठ अवश्य करना चाहिए ।

यह दुर्गा कवच साधक की समस्त मनोकामनाओं को पूर्ण करने वाला एवं तीनों लोको में रक्षा करने वाला है । इस कवच को अष्ट-गन्ध द्वारा भोज-पत्र पर लिखकर यथाविधि पूजन करके कण्ठ अथवा भुजा में धारण करने से भूत, प्रेत, पिशाच ग्रह, राक्षस आदि के दोषों का नाश होता है तथा हिंस्रजन्तु, शत्रुसङ्कट आदि से रक्षा होती है ।

कवच इस प्रकार है—

"शृणु देवि प्रवक्ष्यामि कवचं सर्व्वसिद्धिदम् ।
पठित्वा पाठयित्वा च नरो मुच्येत सङ्कटात् ॥

अज्ञात्वा कवचन्देवि दुर्गामन्त्रञ्च यो जपेत् ।
स नाप्नोति फलन्तस्य परञ्च नरकम्व्रजेत् ।।

उमादेवी शिरः पातु ललाटे शूलधारिणी ।
चक्षुषी खेचरी पातु कर्णौ चत्वरवासिनी ।।

सुगन्धनासिके पातु वदनं सर्व्वधारिणी ।
जिह्वाञ्च चण्डिका देवी ग्रीवांसौ भद्रिका तथा ।।

अशोकवासिनी चेतो द्वौ बाहू वज्रधारिणी ।
हृदयं ललिता देवी उदरं सिंहवाहिनी ।।

कटिम्भगवती देवी द्वावूरू विन्ध्यवासिनी ।
महाबला च जंघे द्वे पादौ भूतलवासिनी ।।

एवं स्थितासि देवि त्वन्त्रैलोक्ये रक्षणात्मिका ।
रक्ष मां सर्व्वगात्रेषु दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते ।।"

।। इति दुर्गाकवचम् ।।

दुर्गा जी की आरती

जै अम्बे मैया मंगलमूर्ति मैया जै आनन्दकरणी
तुमको निशि दिन ध्यावे हरि ब्रह्मा शिवरी । टेक

मांग सिंदूर विराजत टीको मृग मद को,
उज्ज्वल से दोउ नैना चन्द्रवदन नीको । जय०

कनक समान कलेवर रक्ताम्बर राजे,
रक्तपुष्प गल माला कंठन पर साजे । जय०

केहरी वाहन राजत खड़ग खप्पर धारी,
सुर नर मुनि जन सेवत तिनके दुखहारी । जय०

कानन कुण्डल शोभित नासाग्रे मोती,
कोटिक चन्द्र दिवाकर राजत सम ज्योति । जय०

शुम्भ निशुम्भ विडारे महिषासुर घाती,
धूम्रविलोचन नैना निशि दिन मदमाती । जय०

चौंसठ योगिनी गावत नृत्य करत भैरों,
बाजत ताल मृदंगा अरु बाजत डमरु । जय०

भुजा चार अति शोभित खड्ग खप्परधारी,
मनवांछित फल पावत सेवत नरनारी । जय०

कंचन थाल विराजत अगर कपूर बाती,
श्रीमालकेतु में राजत कोटि रतन ज्योति । जय०

श्रीअम्बे जी की आरती जो कोई नर गावे,
कहत शिवानन्द स्वामी सुख सम्पति पावे । जय०

7

काली साधन

काली मन्त्र

कालीकवच समस्त मनोकामनाओं को पूर्ण करने वाला, समस्त पापों को नष्ट करने वाला तथा समस्त सिद्धियों को देने वाला कहा गया है।

इस कवच का पाठ किए बिना भगवती काली का कोई भी मन्त्र दस लाख की संख्या में जपने पर भी सिद्ध नहीं होता ऐसी अनुश्रुति है। अस्तु, काली उपासकों को इस कवच का पाठ अवश्य करना चाहिए।

कहा गया है कि जो व्यक्ति इस कवच को अष्ट गन्ध द्वारा भोजपत्र के ऊपर लिखकर धूप, दीप आदि से पूजन करने के बाद ताबीज में मढ़कर कण्ठ अथवा भुजा में धारण करता है वह तीनों लोकों को मोहित कर लेता है।

कवच इस प्रकार है—

भैरव्युवाच

कालीपूजा श्रुता नाथ भावाश्च विविधाः प्रभो !
इदानीं श्रोतुमिच्छामि कवचम्पूर्व्वसूचितम् ॥ १
त्वमेव स्रष्टा पाता च संहर्ता च त्वमेव हि ।
त्वमेव शरणं नाथ त्राहि मां दुःखसङ्कटात् ॥ २

भैरव उवाच

रहस्यं शृणु वक्ष्यामि भैरवि प्राणवल्लभे ।
श्रीजगन्मंगलन्नाम कवचम्मन्त्रविग्रहम् ॥ ३

पठित्वा धारयित्वा च त्रैलोक्यम्मोहयेत्क्षणात्
नारायणोपि तद्धृत्वा नारी भूत्वा महेश्वरम् ।। ४
योगिनं क्षोभमनयज्जप्त्वा चेमं रघूत्तमः,
वरतृप्तो जघानैव रावणादीन् निशाचरान् ।। ५
यस्य प्रसादादीशोऽहं त्रैलोक्यविजयी भुवः
धनाधिपः कुबेरोपि सुरेशोऽभूच्छचीपतिः ।। ६
एवं हि सकला देवास्सर्वसिद्धीश्वराः प्रिय ।
श्रीजगन्मङ्गलस्यास्य कवचस्य ऋषिः शिवः ।। ७
छन्दोऽनुष्टुब्देवता च कालिका दक्षिणेरिता ।
जगताम्मोहने दुष्टविजये भुक्तिमुक्तिषु ।। ८
योषिदाकर्षणे चैव विनियोगः प्रकीर्तितः ।
शिरो मे कालिका पातु क्रीङ्कारैकाक्षरी परा ।। ९
क्रीं क्रीं क्रीं मे ललाटञ्च कालिका खड्गधारिणी
हूँ हूँ पातु नेत्रयुगं ह्रीं ह्रीं पातु श्रुती मम ।।१०
दक्षिणे कालिका पातु घ्राणयुग्मम्महेश्वरी
क्रीं क्रीं क्रीं रसनाम्पातु हूँ हूँ पातु कपोलकम् ।। ११
वदनं सकलम्पातु ह्रीं ह्रीं स्वाहास्वरूपिणी
द्वाविंशत्यक्षरी स्कन्धौ महाविद्या सुखप्रदा ।। १२
खड्गमुण्डधरा काली सर्व्वाङ्गमभितोवतु
क्रीं हूँ ह्रीं त्र्यक्षरी पातु चामुण्डा हृदयम्मम ।। १३
ऐं हूँ ओं ऐं स्तनद्वयं फट् स्वाहा ककुत्स्थलम् ।
अष्टाक्षरी महाविद्या भुजौ पातु सकर्तृका । १४
क्लीं क्रीं हूँ हूँ ह्रों ह्रौं कारी पातु षडक्षरी मम
क्रीं नाभिम्मध्यदेशञ्च दक्षिणे कालिकावतु ।। १५
क्रीं स्वाहा पातु पृष्ठञ्च कालिका सा दशाक्षरी
क्रीं मे गुह्यं सदा पातु कालिकायै नमस्ततः ।। १६

सप्ताक्षरी महाविद्या सर्वतन्त्रेषु गोपिता ।
ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके हूं हूं पातु कटिद्वयम् ।। १७
काली दशाक्षरी विद्या स्वाहा मामुरुयुग्मकम् ।
ओं क्रीं क्रीं मे स्वाहा पातु कालिका जानुनी सदा ।। १८
काली हृन्नाम विद्यं यञ्चतुर्व्वर्गफलप्रदा ।
क्रीं ह्रीं पातु सा मे गुल्फन्दक्षिणे कालिकावतु ।। १९
क्रीं हूं ह्रीं स्वाहापदम्पातु चतुर्दशाक्षरी मम
खड्गमुण्डधरा काली वरदाभयधारिणी ।। २०
विद्याभिस्सकलाभिः सा सर्व्वाङ्गमभितोवतु
काली कपालिनी कुल्लकुरुकुल्लाविरोधिनी । २१
विप्रचित्ता तथोग्राभा प्रभादीप्ता घनत्विषा ।
नीला घना बलाका च मात्रा मुद्रामिता च माम् ।। २२
एतास्सर्व्वाः खड्गधरा मुण्डमालाविभूषिताः
रक्षन्तु दिग्विदिक्षु मां ब्राह्मी नारायणी तथा ।। २३
माहेश्वरी च चामुण्डी कौमारी चापराजिता ।
वाराही नारसिंहा च सर्व्वाश्चामितभूषणाः ।। २४
रक्षन्तु स्वायुधैर्दिक्षु विदिक्षु मां यथा तथा ।
इति ते कथितन्दिव्यङ्कवचम्परमाद्भुतम् ।। २५
श्रीजगन्मङ्गलन्नाम महाविद्युत्परिग्रहम् ।
त्रैलोक्याकर्षणम्ब्रह्मकवचं च मयोदितम् ।। २६
गुरुपूजां विधायाथ विधिवत्तु पठेत्ततः ।
कवचन्त्रिस्सकृद्वापि यावज्जीवञ्च वा पुनः ।। २७
एतच्छतार्द्धमावृत्य त्रैलोक्यविजयी भवेत् ।
पुष्पाञ्जली कालिकायै मूलेनैवार्पयेत् सकृत् ।। २८
शतवर्षसहस्राणाम्पूजायाः फलमाप्नुयात् ।
भूर्जे विलिखितञ्चैव स्वर्णस्थन्धारयेद्यदि ।। ३०

त्रैलोक्यम्मोहयेत्क्रोधात्त्रैलोक्यञ्चूर्णयेत् क्षणात्
पुत्रबान्धववान्श्रीमान्नानाविद्यानिधिर्भवेत् ।। ३१
ब्रह्मास्त्रादीनि शस्त्राणि तद्गात्रस्पर्शनात्ततः ।
नाशमायान्ति या नार्ता वन्ध्या वा मृतपुत्रिणी ।। ३२
बह्वपत्या जीवतोका भवत्येव न संशयः ।
न देयम्परशिष्येभ्यो ह्यभक्तेभ्यो विशेषतः ।। ३३
शिष्येभ्यो भक्तियुक्तेभ्यो ह्यन्यथा मृत्युमाप्नुयात् ।
मृद्वीभूयास्य कमला वाग्देवी मन्दिरे सुखे ।। ३४
पौत्रान्तस्थैर्य्यमास्थाय निवसत्येव निश्चितम् ।
इदङ्कवचमज्ञात्वा यो भजेद्वारदक्षिणाम् ।। ३5
शतलक्षम्प्रजप्त्वापि तस्य विद्या न सिध्यति
सहस्रधा तमाप्नोति सोऽचिरान्मृत्युमाप्नुयात् ।। ३६
।। इति श्रीजगन्मंगलनामकालीकवचम् ।।

भावार्थ—श्री भैरवी ने कहा—हे प्रभो ! आपने काली पूजा की विधि तो कही, अब आप मुझे काली-कवच सुनाने की कृपा करें।

श्री भैरव बोले—हे देवि ! भगवती काली के जगन्मंगल नामक कवच को सुनो। इस कवच का पाठ करने अथवा धारण करने वाला व्यक्ति तीनों लोकों को मोहित कर लेता है। इसी कवच का पाठ करके विष्णु, शिव आदि ने उच्च पद पाया है और वे त्रैलोक्यविजयी हुए हैं। इसी कवच के प्रभाव से कुबेर ने धनाधिप का तथा इन्द्र ने इन्द्राणीपति का पद प्राप्त किया था।

इस जगन्मंगल कवच के ऋषि शिव हैं। छन्द अनुष्टुप् है। भगवती दक्षिण कालिका देवता है। संसार को मोहित करने, दुष्टों पर विजय प्राप्त करने, भुक्ति-मुक्ति एवं स्त्रियों को आकर्षित करने में इस कवच का विनियोग है।

इस कवच में देवी के विभिन्न मन्त्र, नाम एवं रूपों के द्वारा अपने शरीर के सभी अंगों की रक्षा की प्रार्थना की गई है।

हे देवि ! यह परम अद्भुत कवच ब्रह्मा के मुख से निकला हुआ तथा तीनों लोकों को आकर्षित करने वाला है। गुरु का पूजन करने के पश्चात् इस कवच का विधिवत् पाठ करना चाहिए। इस कवच का पाठ करने वाला व्यक्ति त्रैलोक्यविजयी हो जाता है। वह महाकवि तथा समस्त सिद्धियों का स्वामी बनता है। जो व्यक्ति इस कवच को भोजपत्र पर लिखकर तथा स्वर्ण के तावीज में भरकर अपने कंठ अथवा भुजा में धारण करता है वह तीनों लोकों को मोहित कर लेता है तथा पुत्र, बन्धु, बान्धव एवं अनेक प्रकार की विद्याओं को प्राप्त करता है। जिस स्त्री के सन्तान न होती हो अथवा होकर मर जाती हो वह यदि इस कवच को धारण करे तो दीर्घजीवी सन्तान को प्राप्त करती है।

भगवती दक्षिण कालिका का यह कवच परम गुप्त है। यह पराये शिष्य तथा अभक्तों को नहीं देना चाहिए। इस कवच का पाठ किए बिना यदि एक करोड़ मन्त्रों का जप किया जाय तो भी सिद्धि प्राप्त नहीं होती।

अपने अपराधों की क्षमा याचना के लिये प्रत्येक काली उपासक को "श्री देव्यपराधक्षमापनस्तोत्र" का पाठ अवश्य करना चाहिए। स्तोत्र इस प्रकार है।

न मन्त्रं नो यन्त्रं तदपि च न जाने स्तुतिमहो
न चाह्वानं ध्यानं तदपि च न जाने स्तुतिकथाः।
न जाने मुद्रास्ते तदपि च न जाने विलपनं
परं जाने मातस्त्वदनुसरणक्लेशहरणम् ॥

भावार्थ—हे माता ! मैं आपके मन्त्र, यन्त्र, स्तुति, आवाहन, ध्यान, स्तुतिकथा 'मुद्रा' तथा विलाप सबसे अनभिज्ञ हूँ। फिर भी मैं आपका अनुसरण करना ही जानता हूँ जो कि हर प्रकार के क्लेशों को दूर करने वाला है॥ १

विधेरज्ञानेन द्रविणविरहेणालसतया
विधेयाशक्यत्वात्तव चरणयोर्या च्युतिरभूत्।

तदेतत्क्षन्तव्यं जननि सकलोद्धारिणि शिवे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥ २

भावार्थ—हे सब का उद्धार करने वाली कल्याणमयी माता ! आपकी पूजा विधि न जानने के कारण धनाभाव से आलस्य से तथा अन्य विधियों को भलीभांति न जानने के कारण मुझ से आपके चरणों की सेवा करने में जो भूल हुई हो उसे आप क्षमा कर दें क्योंकि पुत्र तो कुपुत्र हो जाता है परन्तु माता कभी कुमाता नहीं होती ॥ २

पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि बहवः सन्ति सरलाः
परं तेषां मध्ये विरलतरलोऽहं तव सुतः ।
त्वदीयोऽयं त्यागः समुचितमिदं नो तव शिवे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥ ३

भावार्थ—हे माता ! भूमण्डल में तुम्हारे अनेकों सरल पुत्र हैं, परन्तु उनमें अकेला मैं ही परम चंचल हूँ । फिर भी, हे शिवे! मुझे त्याग देना आपके लिए उचित नहीं है क्योंकि पुत्र तो कुपुत्र हो जाता है, परन्तु माता कभी कुमाता नहीं होती ॥ ३

जगन्मातर्मातस्तव चरणसेवा न रचिता
न वा दत्तं देवि द्रविणमपि भूयस्तव मया ।
तथापि त्वं स्नेह मयि निरुपमं यत्प्रकुरुषे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥ ४

भावार्थ—हे जगन्माता ! मैंने आपके चरणों की सेवा नहीं की और आपकी सेवा में प्रचुर धन भी समर्पित नहीं किया फिर भी जो आप मेरे ऊपर ऐसे अनुपम स्नेह रखती हैं उसका यही कारण है कि पुत्र तो कुपुत्र होता है परन्तु माता कभी कुमाता नहीं होती ॥ ४

परित्यक्ता देवा विविधविधिसेवाकुलतया
मया पञ्चाशीतेरधिकमपनीते तु वयसि ।
इदानीं चेन्मातस्तव यदि कृपा नापि भविता
निरालम्बो लम्बोदरजननि कं यामि शरणम् ॥

भावार्थ—हे गणपतिजननी ! मैंने अपनी पचासी वर्ष से अधिक आयु हो जाने पर, पूजा करने की विविध विधियों से घबरा कर अन्य सभी देवताओं को छोड़ दिया है। इस समय यदि मुझे तुम्हारी कृपा न होगी तो मैं निरालम्ब होकर किसकी शरण में जाऊँगा ।। ५

श्वपाको जल्पाको भवति मधुपाकोपमगिरा
निरातङ्को रङ्को विहरति चिरं कोटिकनकैः ।
तवापर्णे कर्णे विशति मनुवर्णे फलमिदं
जनः को जानीते जननि जपनीयं जपविधौ ।।६

भावर्थ—हे अपर्णे माता ! आपके मन्त्राक्षरों के कान में पड़ते ही चाण्डाल भी सुमधुर वाणी का वक्ता बन जाता है तथा महादरिद्री व्यक्ति भी करोड़ों सुवर्ण मुद्राओं से युक्त होकर चिरकाल तक निर्भय बना रहता है। उस मन्त्र के जप के अनुष्ठान का जो फल है, उसे कौन जान सकता है ?

चिता भस्मालेपो गरलमशनं दिक्पटधरो
जटाधारी कण्ठे भुजगपतिहारी पशुपतिः ।
कपाली भूतेशो भजति जगदीशैकपदवीं
भवानि त्वत्पाणिग्रहणपरिपाटीफलमिदम् ।।७

भावार्थ—हे भवानि ! चिता की भस्म को रमाने वाले, विष खाने वाले, नंगे रहने वाले, जटाजूट धारण करने वाले, सर्पों की माला पहनने वाले, खप्पर धारण करने वाले तथा भूतों के स्वामी पशुपति महादेवजी ने जो एकमात्र जगदीश्वर का पद प्राप्त किया है वह सब आपके साथ विवाह होने का ही परिणाम है ।। ७

न मोक्षस्याकांक्षा भवविभववाञ्छापि च न मे
न विज्ञानापेक्षा शशिमुखि सुखेच्छापि न पुनः ।
अहं त्वां संयाचे जननि जननं यातु मम वै
मृडानी रुद्राणी शिवशिव भवानीति जपतः ।। ८

भावार्थ—हे शशिमुखी माँ ! मुझे मोक्ष की आकांक्षा नहीं है तथा सांसारिक वैभव, विज्ञान और सुख की लालसा भी नहीं है। मैं तो आपसे यही भीख माँगता हूँ कि मेरी संपूर्ण आयु मृडानी रुद्राणी शिवशिव भवानी आदि नामों का जप करते हुए ही व्यतीत हो ।। ८

नाराधितासि विधिना विविधोपचारैः
किं नेष्टचिन्तनपरैर्न कृतं वचोभिः ।
श्यामे त्वमेव यदि किञ्चन मय्यनाथे
धत्से कृपामुचितमम्ब परं तवैव ।। ९

भावार्थ—हे श्यामा ! मैंने विविध उपचारों से आपकी सेवा नहीं की। अनिष्ट चिन्तन में तत्पर बने रहकर मैंने अपने वचनों द्वारा क्या नहीं किया ? फिर भी आप मुझ अनाथ पर जो कुछ कृपा रखती हैं, वह आपके लिए उचित ही है, क्योंकि आप मेरा माता हैं ।। ९

आपत्सु मग्नः स्मरण त्वदीयं
करोमि दुर्गे करुणार्णवेशे ।
नैतच्छाठ्यं मम भावयेथाः
क्षुधातृषार्ता जननीं स्मरन्ति ।। १०

भावार्थ—हे दुर्गे ! हे करुणामयी महेश्वरी! जब कभी मैं किसी विपत्ति में पड़ता हूँ, तभी आपका स्मरण कर पाता हूँ, इस कारण आप मुझे शठ न समझें क्योंकि भूख-प्यास लगने पर ही बालक अपनी माता का स्मरण करता है ।। १०

जगदम्ब विचित्रमत्र किं
परिपूर्णा करुणास्ति चेन्मयि ।
अपराधपरम्परावृतं
नहि माता समुपेक्षते सुतम् ।। ११

भावार्थ—हे जगदम्बे ! मेरे ऊपर जो आपकी पूर्ण कृपा है इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है क्योंकि माता अनेक अपराध करने वाले अपने पुत्रों को कभी नहीं त्यागती है ।। ११

मत्समः पातकी नास्ति
पापघ्ना त्वत्समा नहि ।
एवं ज्ञात्वा महादेवि
यथायोग्यं तथा कुरु ॥ १२

भावार्थ—हे महादेवि ! मेरे समान पापी और कोई नहीं है तथा आपके समान पाप का नाश करने वाली भी कोई नहीं है । यह जान कर आप जो उचित समझें वह करें ॥ १२

॥ इति श्रीदेव्यपराधक्षमापनस्तोत्रम् ॥

भगवती महाकाली पार्वती का ही एक तामसी रूप है । विभिन्न तन्त्र ग्रन्थों में काली देवी की साधना एवं ध्यान सम्बंधी विभिन्न मन्त्रों एवं विधियों का वर्णन किया गया है ।

काली उपासकों की जानकारी के लिए यहाँ पर भगवती काली के विभिन्न स्वरूपों के विभिन्न मन्त्रों से संक्षिप्त पूजा विधि एवं स्तोत्र कवच आदि का उल्लेख किया जा रहा है ।

भगवती काली की साधना में अधिक शारीरिक श्रम करने की आवश्यकता नहीं होती । कालिका देवी के मन्त्रों को ग्रहण करने में मन्त्रशुद्धि आदि तथा नित्यादि दोष का विचार भी नहीं करना पड़ता । भगवती काली के मन्त्र सामान्य श्रम एवं विधियों से ही सिद्ध होकर साधक को अभीप्सित फल प्रदान करते हैं ।

भगवती महाकाली की उपासना के विविध मन्त्र इस प्रकार हैं—

श्यामा साधन मन्त्र

क्रीं क्रीं क्रीं हूँ हूँ ह्रीं दक्षिणकालिके क्रीं क्रीं हूं हूं श्रीं ह्रीं स्वाहा ।

यह मन्त्र सब मन्त्रों में प्रधान माना जाता है । इस मन्त्र का दो लाख की संख्या में जप करना चाहिए ।

दक्षिण कालिका के एकासन मन्त्र

(१) क्रीं
(२) ह्रीं

उक्त दोनों मन्त्र एकाक्षरी हैं। इनमें से किसी भी मन्त्र द्वारा देवी की आराधना करने पर साधक को सम्पूर्ण शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त होता है। इन मन्त्रों की जपसंख्या एक लाख बताई गई है।

दक्षिण कालिका के मंत्र

विभिन्न तन्त्र ग्रन्थों में भगवती दक्षिण कालिका के विभिन्न मन्त्रों का उल्लेख किया गया है। वे मन्त्र इस प्रकार हैं।

(१) ओं ह्रीं ह्रीं हूं हूं क्रीं क्रीं क्री दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं।

इस एकविंशत्यक्षर मन्त्र की जप संख्या एक लाख बताई गई है। इस मन्त्र के अन्त में स्वाहा जोड़ देने पर तेईस अक्षर का मन्त्र बनता है, यथा—

(२) ओं ह्रीं ह्रीं हूं हूं क्रीं क्रीं क्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

उक्त तेईस अक्षर वाले मन्त्र के आदि में प्रणव (ओं) हटा देने पर बाईस अक्षर का मन्त्र बनता है तथा आदि का प्रणव (ओं) और अन्त का स्वाहा पद हटा देने से बीस अक्षर का मन्त्र बनता है।

इन सब मन्त्रों की जप संख्या एक लाख ही है।

(३) क्लीं क्लीं हूं।

यह तीन अक्षर का मन्त्र चामुण्डा कालिका की साधना में प्रशस्त कहा गया है।

(४) ओं ह्रीं क्रीं मे स्वाहा।

इस मन्त्र का वर्णन काली हृदय में किया गया है यह मन्त्र भी अत्यन्त प्रभावशाली है। इसकी जप संख्या २१ हजार बताई गई है।

(५) क्रीं ह्रीं ह्रीं।

(६) क्रीं क्रीं क्रीं स्वाहा।

(७) क्रीं क्रीं क्रीं फट् स्वाहा ।

(८) क्रीं क्रीं क्रीं हूं ह्रीं क्रीं क्रीं क्रीं हूं ह्रीं स्वाहा ।

(९) ऐं नमः क्रीं ऐं नमः क्रीं कालिकायै स्वाहा ।

इन मन्त्रों की जप संख्या २ लाख कही गई है ।

(१०) क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके स्वाहा ।

(११) क्रीं हूं दक्षिणकालिके फट् ।

(१२) क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं दक्षिणकालिके क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।

(१३) क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।

(१४) क्रीं हूं ह्रीं स्वाहा ।

(१५) क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।

(१६) क्रीं दक्षिणकालिके स्वाहा ।

(१७) क्रीं हूं हूं ह्रीं हूं हूं क्रीं स्वाहा ।

(१८) क्रीं क्रीं हूं ह्रीं ह्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।

(१९) नमः ऐं क्रां क्रीं कालिकायै स्वाहा ।

(२०) नमः आं आं क्रों क्रों फट् स्वाहा कालिके हूं ।

इन सब मन्त्रों का १ लाख की संख्या में जप करने से पुरश्चरण होता है ।

(२१) क्रीं क्रीं क्रीं स्वाहा ।

(२२) क्रीं क्रीं फट् स्वाहा ।

(२३) क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं स्वाहा ।

(२४) ऐं नमः क्रीं क्रीं कालिकायै स्वाहा ।

इन मन्त्रों की जप संख्या २ लाख कही गई है ।

(२५) क्रीं ह्रीं ह्रीं दक्षिणकालिके स्वाहा ।

(२६) क्रीं हूं ह्रीं दक्षिणकालिके स्वाहा ।

(२७) क्रीं स्वाहा ।

(२८) क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।

(२९) क्रीं हूँ ह्रीं स्वाहा ।

(३०) क्रीं क्रीं हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।

(३१) क्रीं दक्षिणकालिके स्वाहा ।

(३२) क्रीं हूँ ह्रीं क्रीं हूँ ह्रीं स्वाहा ।

(३३) क्रीं क्रीं हूं हूँ ह्रीं ह्रीं क्रीं क्रीं हूँ हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।

(३४) क्रीं क्रीं क्रीं हूँ हूं ह्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं हूँ हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।

(३५) नमः ऐं क्रीं क्रीं कालिकायै स्वाहा ।

(३६) नमः आं क्रां आं क्रों फट् स्वाहा कालि कालिके ।

इन सब मन्त्रों का एक लाख की संख्या में जप करने से पुरश्चरण होता है ।

गुह्य काली का मन्त्र

यह महाविद्या त्रिभुवन में अत्यन्त दुर्लभ तथा धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को देने वाली महापापी को नष्ट करने वाली, सर्व-सिद्धिदायिनी सनातनी एवं भोग देने वाली प्रसिद्ध है ।

गुह्यकाली—उपासना के मन्त्र निम्नलिखित हैं ।

१—क्रीं क्रीं क्रीं हूँ हूं ह्रीं ह्रीं गुह्यकालिके क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।

२—क्रीं हूँ ह्रीं गुह्ये कालिके क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।

३—क्रीं हूं ह्रीं गुह्ये कालिके हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।

४—हूं ह्रीं गुह्ये कालिके क्रीं क्रीं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।

५—क्रीं गुह्ये कालिके क्रीं स्वाहा ।

इन मन्त्रों को २ लाख की संख्या में जपने से पुरश्चरण होता है ।

भद्रकाली मन्त्र

भद्रकाली की उपासना का मन्त्र इस प्रकार है—

क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं भद्रकाल्यै क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

यह मन्त्र साधक को धर्म, काम तथा मोक्ष प्रदान करता है।

श्मशान काली मन्त्र

श्मशान काली की उपासना का मन्त्र इस प्रकार है :

क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं श्मशानकालि क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

महाकाली का मन्त्र

महाकाली की उपासना का मन्त्र इस प्रकार है—

क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं महाकालि, क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

भद्रकाली श्मशानकाली तथा महाकाली के मन्त्रों का जप दो लाख की संख्या में करने से पुरश्चरण होता है।

पूजाविधि

दक्षिण कालिका की संक्षिप्त पूजा विधि निम्नानुसार है। इसी प्रकार प्रत्येक काली-मन्त्र का जप करते समय पूजा कृत्य करना चाहिए।

सर्वप्रथम अपने बाईं ओर चतुष्कोण का निर्माण करके वहाँ पर निम्नलिखित मन्त्र का उच्चारण करते हुए अर्घ्य-पात्र को स्थापित करे।

ओ३म् हः सामान्यार्घ्यं स्थापयामि।

इसके बाद इस मन्त्र का उच्चारण करते हुए अर्घ्य-पात्र में जल भरे। उस जल में सूर्य मण्डल अंकुश मुद्रा से तीर्थों का आवाहन करे। मन्त्र इस प्रकार है—

(ओं) गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिंधु कावेरि जलेस्मिन्सन्निधिं कुरु।।

ओं ब्रह्माण्डोदरतीर्थानि करैः स्पृष्टानि ते रवे ।
तेन सत्येन मे देव तीर्थंदोहं दिवाकर ।।

इस प्रकार तीर्थों का आवाहन करके—

ओं गंगादिसकलतीर्थेभ्यो नमः ।

इस मन्त्र का उच्चारण करते हुए पुष्प, अक्षत आदि से पूजन करे, फिर—

ओं अर्कमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः ।

ओं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः ।

ओं सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः ।

इन मन्त्रों का उच्चारण करते हुए सूर्य, अग्नि तथा चन्द्र इन तीनों मण्डलों का पूजन करे । फिर 'ओं खड्गेभ्यो नमः' कहकर खड्ग पूजन अस्त्र से संरक्षण तथा कवच से अवगुण्ठन करके वं कह कर धेनु मुद्रा द्वारा अमृतीकरण करके मत्स्य मुद्रा से आच्छादित करके प्रणव ओंकार का दस बार उच्चारण करे । फिर शंख मुद्रा को प्रदर्शित करके वेनुमुद्रा तथा योनिमुद्रा को प्रदर्शित करे ।

इसके बाद ऋष्यादि न्यास नीचे लिखे अनुसार करे—

ऋष्यादि न्यास

शिरसि भैरवाय ऋषये नमः ।
मुखे उष्णिक्छन्दसे नमः ।
हृदये ओं दक्षिणकालिकायै नमः ।
गुह्ये क्लीं बीजाय नमः ।
पादयोः हूँ शक्तये नमः ।
सर्वाङ्गे क्लीं कीलकाय नमः ।

इसके बाद नीचे लिखे अनुसार षडंग न्यास करे—

षडंग न्यास

क्रां हृदयाय नमः।
क्रीं शिरसे स्वाहा।
क्रूं शिखायै वषट्।
क्रूं कवचाय हुम्।
क्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्।
क्रः अस्त्राय फट्।
इसके बाद निम्नानुसार करन्यास करे—

करन्यास

क्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः।
क्रीं तर्जनीभ्यां नमः।
क्रूं मध्यमाभ्यां नमः।
क्रैं अनामिकाभ्यां नमः।
क्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

इस प्रकार न्यास करके चार, आठ अथवा सोलह वार मूल मन्त्र का जप करते हुए प्राणायाम करे। तत्पश्चात् दक्षिण काली का ध्यान करके आवाहन करे। ध्यान तथा आवाहन के मन्त्र आगे दिए गए हैं। ध्यान तथा आवाहन के पश्चात् देवी को पुष्पांजलि समर्पित करे। उसके पश्चात् निम्नलिखित माला मन्त्र का उच्चारण करते हुए हाथ में माला लेकर मन्त्र का जप आरम्भ करे।

माला मन्त्र

(ओं) माले माले महामाये सर्वशक्तिस्वरूपिणि।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव॥

मंत्र जप के बाद स्तोत्र कवच आदि का पाठ करना चाहिए। काली पूजा की यही संक्षिप्त विधि है।

महाकाली

'मंगल' की सेवा, सुन मेरी देवा !
हाथ जोड़ तेरे द्वार खड़े ।
पान सुपारी, ध्वजा-नारियल ले ज्वाला तेरी भेंट धरे।
सुन जगदम्बे न कर विलम्बे सन्तन के भण्डार भरे।
सन्तन प्रतिपाली सदा खुशहाली जै काली,
कल्याण करे ॥ १

'बुद्धि' विधाता तू जग माता मेरा कारज सिद्ध करे।
चरण कमल का लिया आसरा शरण तुम्हारी आन परे
जब २ भीड़ पड़े भक्तन पर तब २ आय सहाय करे ॥ २

'गुरु' के वार सकल जग मोह्या, तरुणी रूप अनूप धरे।
माता होकर पुत्र खिलावे, कहीं भार्या भोग करे।
'शुक्र' सुखदाई सदा सहाई, सन्त खड़े जयकार करे ॥ ३

ब्रह्मा विष्णु महेश फल लिये भेंट देन तेरे द्वार खड़े ।
अटल सिंहासन बैठी माता, सिर सोने का छत्र फिरे ।
वार 'शनिश्चर' कुंकुम वरणी, जब भक्तन पर
हुकम करे ॥ ४

खड्ग खप्पर त्रिशूल लिये, रक्तबीज कूं भस्म करे।
शुम्भ निशुम्भ क्षणहिं में मारे, महिषासुर को पकड़ दले ।
'आदित' वारी आदि भवानी जन अपने का कष्ट हरे ॥ ५

कुपित होकर दानव मारे चण्ड-मुण्ड सब चूर करे।
जब तुम देखो दया रूप हो, पल में संकट दूर करे।
'सोम' स्वभाव धरयो मेरी माता जन की अर्जे
कबूल करे ॥ ६

सात वार की महिमा, गुण कौन बखान करे ।
सिंह पीठ पर चढ़ी भवानी अटल भवन में राज्य करे ।
दर्शन पावें मंगल गावें सिद्ध साधक तेरी भेंट धरें ।। ७

ब्रह्मा वेद पढ़े तेरे द्वारे शिवशङ्कर हरि ध्यान करे ।
इन्द्र कृष्ण तेरी करें आरती चँवर कुबेर डुलाय रहे ।
जय जननी जय मातु भवानी,
अचल भवन में राज्य करे ।
सन्तन प्रतिपाली सदा खुशहाली,
जय काली कल्याण करे ।। ८

8

लक्ष्मी साधन

लक्ष्मी मंत्र

विष्णु-पत्नी भगवती लक्ष्मी की उपासना से धन-धान्य तथा ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है। लक्ष्मी जी की उपासना का प्रमुख मन्त्र निम्नलिखित है—

ओं श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्या वहो रात्रे: पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्। इष्णन्निषाण मम इषाण सर्वलोकमिषाण। लक्ष्म्यै नमः॥

लक्ष्मी-पूजन विधि

लक्ष्मी पूजन की सामान्य विधि इस प्रकार है—

सर्वप्रथम स्नानादि से निवृत्त होकर, स्वच्छ वस्त्र धारण कर पवित्र आसन पर बैठकर आचमन प्राणायाम करके संकल्प वाक्य का उच्चारण करे। संकल्प वाक्य इस प्रकार है—

ओं श्री: विष्णु:। अथ श्रीब्रह्मणो द्वितीये परार्धे श्वेतवाराहकल्पे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे आर्यावर्त्तान्तर्गत देशैकदेशे अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकनामा अमुकगोत्रोत्पन्नोह स्थिरलक्ष्मीप्रीत्यर्थं श्रीमहालक्ष्मीप्रीत्यर्थं सर्वारिष्टनियतिपूर्वकसर्वाभीष्टफलप्राप्त्यर्थम् आयुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्धयर्थं राज्ये व्यापारे लाभार्थञ्च श्रीमहालक्ष्मीपूजनं करिष्ये।

उक्त संकल्प में जहाँ-जहाँ अमुक शब्द आया है वहाँ क्रमशः संवत्सर, मास, पक्ष, तिथि, वार अपना नाम तथा अपने गोत्र के नाम का उच्चारण करना चाहिए।

संकल्पोपरांत श्री गणेश आदि देवताओं का पूजन करके नीचे लिखी विधि से श्री लक्ष्मी जी का ध्यान करके पूजन क्रिया आरम्भ करनी चाहिए।

ध्यान के मन्त्र

या सा पद्मासनस्था विपुलकटितटी पद्मपत्रायताक्षी
गम्भीरावर्त्तनाभिः स्तनभरनमिता शुभ्रवस्त्रोत्तरीया ।
या लक्ष्मीर्दिव्यरूपैर्मणिगणखचितैः स्नायति हेमकुम्भैः
सा नित्यं पद्महस्ता मम वसतु गृहे सर्वमङ्गल्ययुक्ता ।। १

अरुणकमलसंस्था तद्रजःपूर्णवर्णा
करकमलधृतेष्टाभीतियुग्माम्बुजा च ।
मणिकटकविचित्राऽऽलंकृता कल्पजातैः
सकलभुवनमाता सन्ततं श्री श्रियै नः ।।२

ध्यायेल्लक्ष्मीं प्रहसितमुखीं राजसिंहासनस्थां
मुद्राशक्तिसकलविनतां सर्वसंसेव्यमाना ।
अर्घ्यैः पूजामखिलजननीं हेमवर्णां हिरण्यां
भाग्योपेतां भुवनसुखदां भार्गवीं भूतधात्रीम् ।। ३

पद्मासने पद्मिनि पद्मपत्रे
पद्मप्रिये पद्मदलायताक्षि !
विश्वप्रिये विश्वमनोऽनुकूले
त्वत्पादपद्मं मयि सन्निधत्स्व ।।४

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ।। ५

ध्यानोपरान्त निम्नलिखित मन्त्र से आवाहन करना चाहिए ।

आवाहन का मन्त्र

सर्वलोकस्य जननीं शूलहस्तां त्रिलोचनाम् ।
सर्वदेवमयीमीशां देवीमावाहयाम्यहम् ।।
ओं महालक्ष्म्यै नमः । आवाहनं समर्पयामि ।।

आवाहन के पश्चात् निम्नलिखित मन्त्र से आसन प्रदान करे ।

आसन का मन्त्र

तप्तकांचनवर्णाभं मुक्तामणिविराजितम् ।
अमलं कमलदिव्यमासनं प्रतिगृह्यताम् ।।

आसनोपरांत निम्नलिखित मन्त्र से आसन प्रदान करे ।

पाद्य का मन्त्र

ओं गङ्गादितीर्थसम्भूतं गन्धपुष्पादिभियुतम् ।
पाद्यं ददाम्यहं देवि गृहाणाशु नमोऽस्तु ते ।।

पाद्य के उपरांत निम्नलिखित मन्त्र से अर्घ्य प्रदान करना चाहिए ।

अर्घ्य का मन्त्र

ओं अष्टगंधसमायुक्तं स्वर्णपात्रप्रपूरितम् ।
अर्घ्यं गृहाण मद्दत्तं महालक्ष्मै नमोऽस्तु ते ।।

अर्घ्य के उपरान्त निम्नलिखित मन्त्र से आचमन प्रदान करना चाहिए ।

आचमन का मन्त्र

ओं सर्वलोकस्य या शक्तिर्विष्णुब्रह्मादिभि: कृता ।
ददाम्याचमनं तस्यै महालक्ष्मै मनोहरम् ।।

आचमन के उपरान्त निम्नलिखित मंत्र से स्नान करना चाहिए ।

स्नान का मन्त्र

ओं मन्दाकिन्या: समानीतैर्हेमाम्भोरुहवासितै: ।
स्नानं कुरुष्व देवेशि सलिलैश्च सुगन्धिभि: ।।

स्नानोपरांत निम्नलिखित मंत्र से पंचामृत स्नान करना चाहिए ।

पंचामृत स्नान का मंत्र

(ओं) पञ्चामृतसमायुक्तं जाह्नवीसलिलं शुभम् ।
गृहाण विश्वजननि स्नानार्थं भक्तवत्सले ।।

पंचामृत स्नान के उपरान्त निम्नलिखित मन्त्र से शुद्धोदक स्नान कराना चाहिए ।

शुद्धोदक स्नान का मंत्र

ओ३म् तोयं तव महादेवि कर्पूरागरुवासितम् ।
तीर्थेभ्यः सुसमानीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥

शुद्धोदक स्नान के उपरान्त निम्नलिखित मंत्र से गंगोदक स्नान करना चाहिए।

गंगोदक स्नान का मन्त्र

आदित्यवर्णस्तपसोऽधिजातो
वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथ विल्वः ।
तस्य फलानि तपसा नुदन्तु
मायान्तरायाश्च वाह्या अलक्ष्मीः ॥

गंगोदक स्नान के उपरान्त निम्नलिखित मन्त्र से वस्त्र प्रदान करे।

वस्त्र का मंत्र

ओं दिव्याम्बरं नूतनं हि क्षौमं त्वतिमनोहरम् ।
दीयमानं मया देवि गृहाण जगदम्बिके ॥

वस्त्र के उपरान्त निम्नलिखित मंत्र से उपवस्त्र (कंचुक) प्रदान करे।

उपवस्त्र का मंत्र

ओं कंचुकमुपवस्त्रं च नानारत्नैः समन्वितम् ।
गृहाण त्व मया दत्तं मङ्गले जगदीश्वर ॥

उपवस्त्र के उपरान्त निम्नलिखित मन्त्र से मधुपर्क प्रदान करे।

मधुपर्क का मंत्र

ओं कपिलोदधिकुन्देन्दुधवलं मधुसंयुतम् ।
स्वर्णपात्रस्थितं देवि मधुपर्कं गृहाण भोः ॥

मधुपर्क के उपरान्त निम्नलिखित मन्त्र से आभूषण प्रदान करे।

आभूषण का मंत्र

ओं स्वभावसुन्दराङ्गि नानादेवतोद्गाये शुभे ।
भूषणानि विचित्राणि कल्पयाम्यमरार्चिते ॥

आभूषण के उपरान्त निम्नलिखित मंत्र से गंध प्रदान करे।

गंध का मंत्र

ओं श्रीखण्डागरुकर्पूरमृगनाभिसमन्वितम्।
विलेपनं गृहाणाशु नमोऽस्तु भक्तवत्सले॥

गंध के उपरान्त निम्नलिखित मंत्र से रक्त चन्दन प्रदान करे

रक्त चन्दन का मन्त्र

ओं रक्तचन्दनसम्मिश्रं पारिजातसमुद्भवम्।
मया दत्तं गृहाणाशु चन्दनं गन्धसंयुतम्॥

रक्त चंदन के उपरांत निम्नलिखित मन्त्र से सिंदूर प्रदान करे।

सिंदूर का मन्त्र

ओं सिन्दूररक्तवर्णे सिन्दूरतिलकप्रिये।
भक्त्या दत्तं मया देवि सिन्दूरं प्रतिगृह्यताम्॥

सिंदूर के उपरांत निम्नलिखित मन्त्र से कुंकुम प्रदान करे।

कुंकुम का मंत्र

कुंकुमं कामदं द्रव्यं कुंकुमं कामरूपिणम्।
अखण्डकामसौभाग्यं कुंकुमं प्रतिगृह्यताम्॥

कुंकुम के उपरांत निम्नलिखित मन्त्र से सुगंधित तैल प्रदान करे

सुगंधित तैल का मंत्र

ओं तैलानि च सुगन्धानि पुष्पाणि विविधानि च।
मया दत्तानि लेपार्थं गृहाण परमेश्वरि॥

सुगंधित तैल के उपरांत निम्नलिखित मन्त्र से अक्षत प्रदान करे।

अक्षत (चावल) का मंत्र

ओं अक्षतान्निर्मलान् शुद्धान् मुक्तामणिसमन्वितान्।
गृहाण त्वं महादेवि देहि मे निर्मलां धियम्॥

अक्षतोपरांत निम्नलिखित मन्त्र से पुष्प प्रदान करे।

पुष्प का मन्त्र

ओं मन्दारपारिजाताद्यान् पाटलीं केतकीं तथा ।
मरुवामोगरांश्चैव गृहाणाशु नमो नमः ॥

पुष्प के उपरांत निम्नलिखित मन्त्र से पुष्पमाला प्रदान करे ।

पुष्पमाला का मंत्र

ओं पद्मशंखजपापुष्पैः शतपत्रैर्विचित्रिताम् ।
पुष्पमालां प्रयच्छामि गृहाण त्वं सुरेश्वरि ॥

पुष्पमाला के पश्चात् निम्नलिखित मन्त्र से दूर्वा प्रदान करे ।

दूर्वा का मंत्र

ओं विष्ण्वादिसर्वदेवानां प्रियां सर्वसुशोभनाम् ।
क्षीरसागरसम्भूतं दूर्वां स्वीकुरु सर्वदा ॥

दूर्वा के उपरान्त निम्नलिखित मन्त्र से अबीर-गुलाल प्रदान करे ।

अबीर-गुलाल का मंत्र

ओं अबीरं च गुलालं च चोवाचन्दनमेव च ।
अबीरेणार्चिते देवि ह्यतः कामान् प्रयच्छ मे ॥

अबीर-गुलाल समर्पित करने के पश्चात् निम्नलिखित से अंग पूजा करनी चाहिए ।

अथाङ्गपूजा

ओं चपलायै नमः ।	पादौ पूजयामि ।
ओं चञ्चलायै नमः ।	जङ्घे पूजयामि ।
ओं कमलायै नमः ।	कटिं पूजयामि ।
ओं कात्यायिन्यै नमः ।	नाभिं पूजयामि ।
ओं जगद्योन्यै नमः ।	जठरं पूजयामि ।
ओं विश्ववल्लभायै नमः ।	वक्षःस्थलं पूजयामि ।
ओं कमलवासिन्यै नमः ।	भुजां पूजयामि ।

श्रों पद्मकमलायै नमः । मुखं पूजयामि ।
श्रों कमलपत्राक्ष्यै नमः । नेत्रत्रयं पूजयामि ।
श्रों श्रियै नमः । शिरः पूजयामि ।

अष्टसिद्धि पूजा

अंगपूजा के पश्चात् पूर्वादि क्रम से अष्टसिद्धियों का पूजन नीचे लिखे मंत्रों से करना चाहिए ।

श्रों अणिम्ने नमः । श्रों महिम्ने नमः ।
श्रों गरिम्णे नमः । श्रों लघिम्ने नमः ।
श्रों प्राप्त्यै नमः । श्रों प्राकाम्यै नमः ।
श्रों ईशितायै नमः । श्रों वशितायै नमः ।

अष्टलक्ष्मीपूजा

इसके पश्चात् पूर्वादि क्रम से अष्ट लक्ष्मियों का निम्नलिखित मंत्रों से पूजन करना चाहिए ।

श्रों आद्यलक्ष्म्यै नमः । श्रों विद्यालक्ष्म्यै नमः ।
श्रों सौभाग्यलक्ष्म्यै नमः । श्रों अमृतलक्ष्म्यै नमः ।
श्रों काम्यलक्ष्म्यै नमः । श्रों सत्यलक्ष्म्यै नमः ।
श्रों भोगलक्ष्म्यै नमः । श्रों योगलक्ष्म्यै नमः ।

इसके पश्चात् श्रों महाकाल्यै नमः इस मंत्र से मसिपात्र (दावात) का पूजन करना चाहिए ।

आवरण पूजा

इसके पश्चात् आवाहन आदि करके गंधादि से पूजन कर निम्नलिखित मंत्रों से आवरण पूजा करनी चाहिए ।

श्रों काल्यै नमः । श्रों कपालिन्यै नमः ।
श्रों फुल्लायै नमः । श्रों कुलकुलायै नमः ।
... विरोधिन्यै नमः । श्रों विप्रचित्तायै नमः ।

ओं उग्रप्रदत्तायै नमः। ओं दिव्यायै नमः।
ओं नीलायै नमः। ओं घनायै नमः।
ओं वलाकायै नमः। ओं मात्रायै नमः।
ओं मुदायै नमः।

इसके पश्चात् निम्नलिखित मंत्र से भगवती महालक्ष्मी को धूप प्रदान करे।

धूप का मंत्र

ओं वनस्पतिरसोत्पन्नो गंधाढ्यः सुमनोहरः।
आधेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥

धूप के पश्चात् निम्नलिखित मंत्र से दीपक प्रदर्शित करे।

दीपक का मंत्र

ओं कार्पासवर्तिसंयुक्तं घृतयुक्तं मनोहरम्।
तमोनाशकरं दीपं गृहाण परमेश्वरि ॥

दीपक के पश्चात् निम्नलिखित मंत्र से नैवेद्य समर्पित करे।

नैवेद्य का मंत्र

ओं नैवेद्यं गृह्यतां देवि भक्ष्यभोजसमन्वितम्।
षड्रसैरन्वितं दिव्यं लक्ष्मि देवि नमोऽस्तु ते ॥

नैवेद्य के उपरांत निम्नलिखित मंत्र से ऋतुफल प्रदान करे।

ऋतु फल का मंत्र

ओं फलेन फलितं देवी त्रैलोक्यं सचराचरम्।
तस्मात्फलप्रदानेन पूर्णाः सन्तु मनोरथाः ॥

ऋतु फल के उपरांत निम्नलिखित मंत्र से आचमन प्रदान करे।

आचमन का मंत्र

ओं शीतलं निर्मलं तोयं कर्पूरेण सुवासितम्।
आचम्यतामिदं देवि प्रसीद त्वं सुरेश्वरि ॥

आचमन के पश्चात् नीचे लिखे मंत्र से ताम्बूल प्रदान करे।

ताम्बूल का मंत्र

एलालवङ्गकर्पूर नागपात्रादिभिर्युतम् ।
पूगीफलेन संयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् ।।

तांबूल के उपरांत नीचे लिखे मंत्र से नीराजन करे ।

नीराजन का मंत्र

ओं चक्षुर्दं सर्वलोकानां तिमिरस्य निवारणम् ।
आर्तिक्यं कल्पितं भक्त्या गृहाण परमेश्वरि ।।

नीराजन (आरती) के उपरांत नीचे लिखे मंत्र से दक्षिणा समर्पित करे ।

दक्षिणा का मंत्र

ओं हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः ।
अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ।।

दक्षिणा के बाद नीचे लिखे मंत्र का उच्चारण करते हुए प्रदक्षिणा करे ।

प्रदक्षिणा का मंत्र

ओं यानि कानि च पापानि ब्रह्महत्यासमानि च ।
तानि तानि विनश्यन्ति प्रदक्षिणापदेपदे ।।

प्रदक्षिणा के बाद नीचे लिखे मंत्र का उच्चारण करते हुए नमस्कार करे ।

नमस्कार का मंत्र

ओं मंत्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरि ।
यत्पूजितं मया देवि परिपूर्णं तदस्तु मे ।।

नमस्कार के पश्चात् नीचे लिखे मंत्र से पुष्पांजलि समर्पित करे ।

पुष्पांजलि का मंत्र

ओं केतकीजातिकुसुमे मल्लिकामालतीभवे ।
पुष्पांजलिर्मया दत्तस्तव प्रीत्या नमोऽस्तु ते ।।

पुष्पांजलि के पश्चात् नीचे लिखे मंत्रों का उच्चारण करते हुए प्रार्थना करे ।

प्रार्थनामंत्र

सुरासुरेन्द्रादि[illegible]क्तकै-
र्नतं सदा यत्तव पादपङ्कजम् ।
परावरं पातु वरं सुमंगल
नमामि भक्त्या तव कामसिद्धये ।। १
भवानि त्वं महालक्ष्मीः सर्वकामप्रदायिनी ।
सुपूजिता प्रसन्ना स्या महालक्ष्मि नमोऽस्तु ते ।।२
नमस्ते सर्वभूतानां वरदासि हरिप्रिये ।
या गतिस्त्वत्प्रपन्नानां सा मे भूयात् त्वदर्चनात् ।।३
धनदायै नमस्तुभ्यं नित्यं पद्मालये रमे ।
भवन्तु त्वत्प्रसादान्मे धनधान्यादिसम्पदः ।।४

इति महालक्ष्मी-पूजाविधिः

दीपावली के अवसर पर महालक्ष्मी का पूजन विशेष रूप से किया जाता है। महालक्ष्मी के साथ ही गणेश जी का तथा काली सरस्वती एवं कुबेर का पूजन भी किया जाता है।

गणेश जी का पूजन करने की विधि इसी पुस्तक के आरम्भ में देखनी चाहिए।

महालक्ष्मी पूजन के अवसर पर दावात को महाकाली का तथा लेखनी को भगवती सरस्वती का प्रतीक मानकर उनका पूजन किया जाता है। तिजोरी गल्ला अथवा रुपयों की थैली की पूजा कुबेर के प्रतीक के रूप में की जाती है।

काली, सरस्वती तथा कुबेर का षोडशोपचार पूजन, आसन, पाद्य, अर्घ्य, आचमन, स्नान, गंध, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप, फल, मिष्टान्न आदि से करना चाहिए। इनके पूजन के अवसर पर ध्यान के विशेष मंत्र नीचे लिखे अनुसार हैं।

पूजन करने से पूर्व दावात कलम आदि पर कलावा पीली लपेट देने तथा रोली सिंदूर आदि लगा देने की परंपरा है।

श्रीमहाकाली के ध्यान के मंत्र

सद्यश्छिन्नशिरःकृपाणमभयं हस्तैर्वरं बिभ्रतीं
घोरास्यां शिरसास्रजं सुरुचये प्रोन्मुक्तकेशावलिम् ।
सृक्कासृक्प्रवहां श्मशाननिलयां मृत्योः शवालङ्कृतिम्
पूर्याङ्गीं कृतमेखलां शववरैर्देवीं भजे कालिकाम् ॥१

या कालिका रोगहरा सुवंद्या
वैश्यैः समस्तैर्व्यवहारदक्षैः ।
जनैर्जनानां भयहारिणी च
सा देवमाता मयि सौख्यदात्री ॥२

महाकालि महादेवि देहि बुद्धिं त्वदाश्रितः ।
सर्वदा कार्यसिद्धिः स्यात् क्षमस्व परमेश्वरि ॥३
शवारूढां महाभीमां घोरदंष्ट्रां हसन्मुखीम्
चतुर्भुजां खड्गमुण्डकराभयकरां शिवाम् ।
मुण्डमालाधरां देवीं ललज्जिह्वां दिगम्बराम्
एवं सञ्चिन्तयेत्कालीं श्मशानालयवासिनीम् ॥४

सरस्वती के ध्यान के मंत्र

शुक्लां ब्रह्मविचारसारपरमामाद्यां जगद्व्यापिनीं
वीणापुस्तकधारिणीमभयदां जाड्यान्धकारापहाम् ।
हस्ते स्फाटिकमालिकां विदधतीं पद्मासने चास्थितां
वन्दे तां परमेश्वरीं भगवतीं बुद्धिप्रदां शारदाम् ॥१

या कुन्देन्दुतुषारहारधवला या शुभ्रवस्त्रावृता
या वीणावरदण्डमण्डितकरा या श्वेतपद्मासना ।
या ब्रह्माच्युतशंकरप्रभृतिभिर्देवैः सदा वन्दिता
सा मां पातु सरस्वती भगवती निःशेषजाड्यापहा ॥२

शारदे शारदाम्भोजवदने वदनाम्बुजे ।
सर्वदा सर्वदास्माकं सन्निधिं सन्निधिं कुरु ॥३

तरुणशकलमिन्दोर्बिभ्रती शुभ्रकान्तिः
कुचभरनमिताङ्गी सन्निषण्णा सिताब्जैः ।
निजकरकमलोद्यतलेखनी पुस्तकश्रीः
सकलविभवसिद्ध्यै पातु वाग्देवता नः ॥४
या नीलाम्बुदसन्निभा भगवती संसारतापान्वितान्
सद्यश्चञ्चलदृष्टिकीर्णकिरणैरालोक्य गर्जद्गिरा ।
कारुण्यामृतधारया विदधती मोदान्वितान् प्राणिनो
भक्तत्राणपरायणा विजयते जाग्रत्प्रभावा शिवा ॥५॥

लेखनी प्रार्थना मंत्र

कृष्णानने कृष्णजिह्वे चित्रगुप्तशयस्थिते ।
पुष्पाञ्जलिं गृहाण त्वं सदैव वरदा भव ॥

कुबेरप्रार्थनामंत्र

देवपुर्यश्च नाथस्त्वं कोषाध्यक्ष महामते ।
ध्यायेऽहं त्वां प्रभुश्रेष्ठ कुबेर धनदायक ॥१

क्षमस्व मम दौरात्म्यं कृपासिंधो सुरप्रिय ।
धनदोऽसि धनं देहि अपराधांश्च नाशय ॥2

महाराजकुबेराय भूयो भूयो नमाम्यहम् ।
दीनोऽपि दयया यस्य जायते वै महाधनः ॥३

तुला मंत्र

दीपावली पर कुछ स्थानों पर तुला (तराजू) एवं मानदण्ड गज या पैमाना पूजन करने की प्रथा है। तुला (तराजू) के पूजन के समय नीचे लिखे मंत्र का उच्चारण करना चाहिए ।

ब्रह्मसम्पादिते देवि तुले तुभ्यं नमो नमः ।
कल्याणि सर्वभूतानां साक्षिभूते सनातनि ।।

मानदण्ड मंत्र

मानदण्ड (गज या पैमाना) के पूजन के समय नीचे लिखे मंत्र का उच्चारण करना चाहिए ।

ब्रह्मदण्ड त्वमेवासि ब्रह्मणा निर्मितः पुरा ।
तस्मात् तदर्पये तुभ्यं मानदण्ड नमोऽस्तु ते ।।

अन्य वस्तुओं का पूजन करते समय नीचे लिखे मंत्र का उच्चारण करना चाहिए ।

अन्य वस्तुओं का मंत्र

त्वमेव सर्वभूतानां साक्षिभूतं च यस्त्वसि ।
तस्मात् तुभ्यं नमः सद्यो ब्रह्मविष्णुशिवात्मक ।।

9

भैरव साधना

भैरव के ध्यान का स्वरूप

श्री भैरव जी को देवाधिदेव भूत भावन भगवान शंकर का अवतार कहा जाता है। श्री भैरव जी के अनेक स्वरूप हैं। तथा—

(१) असितांगभैरव (२) रुरुभैरव
(३) चण्डभैरव (४) क्रोधभैरव
(५) उन्मत्तभैरव (६) कपालिभैरव
(७) भीषणभैरव (८) संहारभैरव
(९) बटुकभैरव

इन नौ में से बटुक भैरव की ही उपासना की जाती है। बटुक भैरव का पूजन सामान्य देवताओं की भाँति ही किया जाता है।

गन्ध, अक्षत, पुष्प, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल, पूगी फल आदि से बटुक भैरव की पूजा की जाती है। पूजा में लाल रंग के पुष्प तथा लाल चन्दन होना जरूरी है।

बटुक भैरव की पूजा के मन्त्र निम्नलिखित हैं—

बटुक भैरव मन्त्र

ओं ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारं कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं।

दूसरा मन्त्र इस प्रकार है—

ह्रीं बटुकाय कष्टोद्धारं कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं स्वाहा।

उक्त दोनों मन्त्रों में से किसी एक द्वारा बटुक भैरव की उपासना की जा सकती है।

श्री भैरव के ध्यान के स्वरूप

भैरव के ध्यान के तीन रूप हैं--

(१) सात्त्विक (२) राजस और (३) तामस

सात्त्विक ध्यान से अकाल मृत्यु का नाश, आयु की वृद्धि, आरोग्य एवं मोक्ष की प्राप्ति होती है।

राजस ध्यान से शत्रुकृत एवं भूतावेश जनित रोगों का नाश होता है।

साधक की जैसी कामना है उसी के अनुसार श्री बटुक भैरव के स्वरूप का ध्यान होता है। ध्यान के मंत्र नीचे दिये जा रहे हैं।

सात्त्विक ध्यान

वन्दे बालं स्फटिकसदृशं कुण्डलोद्भासिवक्त्रं
दिव्याकल्पैर्नवमणिमयैः किंकिणीनूपुराद्यैः।
दीप्ताकारं विशदवसनं सुप्रसन्नं त्रिनेत्रं
हस्ताब्जाभ्यां बटुकमनिशं शूलदण्डौ दधानम्॥

राजस ध्यान

उद्यद्भास्करसन्निभं त्रिनयनं रक्तांगरागस्रजं
स्मेरास्यं वरदं कपालमभयं शूलं दधानं करैः।
नीलग्रीवमुदारभूषणगतं शीतांशुचण्डोज्ज्वलं
बन्धूकारुणवाससं भयहरं देवं सदा भावये॥

तामस ध्यान

ध्यायेन्नीलाद्रिकान्ति शशिशकलधरं मुण्डमालामहेशं
दिग्वस्त्रं पिंगलाक्षं डमरुसृणिधरं खड्गशूलाभयानि।
नागं घण्टां कपालं करसरसिरुहैर्बिभ्रतं भीमदंष्ट्रं
कापालिकं त्रिनेत्रं मणिमयविलसत्किंकिणिनू पुराढ्यम्॥

श्री बटुक भैरव के ध्यान का सामान्य मन्त्र निम्नलिखित है—

सामान्य ध्यान

करकलितकपालः कुण्डली दण्डपाणि-
स्तरुणतिमिरनीलो व्यालयज्ञोपवीतः ।
क्रतसमयसपर्य्याविघ्नविच्छेदहेतु-
र्जयति वटुकनाथः सिद्धिदः साधकानाम् ॥

भैरव का भोग, हवन तथा हवन सामग्री

भैरव के भोगों के लिये निम्नलिखित वस्तुएँ लिखी गयी हैं—

(१) तेल में तले हुए उड़द के वड़े ।

(२) दही (३) गुड़ और

(४) मद्य ।

कुछ व्यक्ति अग्नि पर भुनी हुई मछली का भोग लगाते हैं लेकिन कुछ सात्विकी वृत्ति के व्यक्ति मछली अथवा मद्य का भोग बिलकुल नहीं लगाते ।

अतः इस सिलसिले में भक्त मण्डल को अपनी रुचि के अनुसार श्रीभैरव जी को भोग लगाना चाहिये ।

पूजन तथा भोग लगाने के पश्चात १००० की संख्या में मंत्र का जप करना चाहिये । जप की समाप्ति पर घृत तथा शहद की पूरी १०० आहुतियाँ डालनी चाहिएँ ।

इस प्रकार ग्यारह दिन तक जप, पूजन तथा हवन करने के पश्चात् भैरव साधन पूरा होता है । इस प्रकार तीन बार साधन कर लेने पर साधक की हरेक इच्छा पूर्ण हो जाती है । ऐसा ग्रन्थों में देखने में आया है ।

पूजन, जप तथा हवन के पश्चात् श्री बटुक भैरव स्तोत्र, सहस्रनाम आदि का पाठ करना चाहिये ।

एक बात और भी है और यह बात सबसे जरूरी है वह यह कि साधन-काल में साधक को ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना चाहिये । जप व हवनादि के लिये बैठने से पूर्व साधक को शौच-स्नानादि द्वारा शरीर को पवित्र कर लेना

चाहिये तथा शुद्ध व पवित्र, यदि सम्भव हो तो दो रेशमी वस्त्र पहनने चाहिये। चित्तवृत्तियों को शुद्ध रखना चाहिये। भैरव की मूर्ति को भी लाल टीका लगाना चाहिये और स्वयं भी लाल टीका लगाना चाहिये। भैरव की मूर्ति पर सिंदूर चढ़ाना चाहिये।

बटुक भैरव सहस्रनाम स्तोत्र

भैरव तन्त्र में वर्णित श्री बटुक भैरव सहस्रनाम स्तोत्र यहां दिया जा रहा है। जो भक्तजन इस दुर्लभ सहस्रनाम स्तोत्र का पाठ करते हैं, भगवान् बटुक भैरव प्रसन्न होकर उन्हें वांछित फल प्रदान करते हैं।

इस स्तोत्र का पाठ करने के लिए किसी प्रकार के न्यास अथवा पूजन की आवश्यकता नहीं है। शरीर को कष्ट दिए बिना एवं धन खर्च किए बिना ही यह स्तोत्र समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाला कहा गया है।

स्तोत्र

ईश्वर उवाच—

देवेशि भक्तिसुलभे देवनायकवन्दिते ।
भक्तानां कार्यसिद्ध्यर्थं निदानं ब्रूहि तत्त्वतः ॥
विनैव न्यासजालेन पूजनेन विना भवेत् ।
विना कायादिक्लेशेन वित्तव्ययं विनेश्वरि ॥

भावार्थ—श्री शंकर भगवान ने कहा—"हे देवपूजिते देवि न्यास एवं पूजनादि क्रिया के बिना ही तथा शरीर को कष्ट दिये बिना ही भक्तों की कामना जिससे सिद्ध हो जाए, ऐसा उपाय कहिये।

ओं अस्य श्रीबटुकभैरवसहस्रनामस्तोत्रमन्त्रस्य ब्रह्मानन्दभैरव ऋषिः त्रिष्टुप् छन्दः बटुकभैरवो देवता वं बीजम् ह्रीं शक्तिः सर्वाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

भावार्थ—देवी ने कहा—इस बटुक भैरव सहस्रनाम स्तोत्र मन्त्र के ब्रह्मानन्द भैरव ऋषि हैं, त्रिष्टुप् छन्द, बटुक भैरव देवता, वं बीज तथा ह्रीं शक्ति है। समस्त कामनाओं की पूर्ति में इसका विनियोग है।

अथ न्यासः—

ओं ह्रीं बां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ।

ओं ह्रीं बीं तर्जनीभ्यां नमः ।

ओं ह्रीं बूं मध्यमाभ्यां नमः ।

ओं ह्रैं बैं अनामिकाभ्यां नम ।

ओं ह्रौं बौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः !

एवं हृदयादि ।

भावार्थ—पूर्वोक्त प्रकार से कर न्यास एवं हृदयादिन्यास करना चाहिये ।

अथ ध्यानम्—

उद्यद्भास्करसन्निभं त्रिनयनं रक्ताङ्गरागस्रजं
स्मेरास्यं वरदं कपालभयदं शूलं दधान करैः ।
नीलग्रीवमुदारकौस्तुभधरं शीतांशुचूडोज्ज्वलं
वंधूकारुणवाससं भयहर देव सदा भावये ॥

भावार्थ—पूर्वोक्त प्रकार से श्रीबटुक भैरव का ध्यान करना चाहिये । अब बटुकभैरव के सहस्र नामों का वर्णन किया जाता है । (क्योंकि इन श्लोकों में श्रीबटुक भैरव के १००० नाम आये हैं और वह अलग-अलग स्पष्ट हैं, अतः उनकी अलग से टीका नहीं दी जा रही ।

अथ सहस्रनामानि

ओं ह्रीं बटुकः कामदो नाथोऽनाथप्रियप्रभाकरः ।
भैरवो भीतिहा दर्पः कंदर्पो मीनकेतनः ॥१
रुद्रो बटुकभूतेशो भूतनाथः प्रजापतिः ।
दयालुः क्रूर ईशानो जनेशो लोकवल्लभः ॥२
देवो दैत्येश्वरो वीरो वीरवन्द्यो दिवाकरः ।
बलिप्रियः सुरश्रेष्ठः कनिष्ठो नैष्ठिकः शिशुः ॥३
महाबलिर्महातेजा वित्तजा द्युतिवर्द्धनः ।
तेजस्वी वीर्यवान्वृद्धो त्रिवृद्धो भूतनायकः ॥४

बालकः पालकः कामो विकामः काममर्दनः ।
कालिकारमणः कालीनायकः कालिकाप्रियः ॥५
कालीशः कालिकाकान्तः कालिकानन्दवर्धनः ।
कालिकाहृदयज्ञानी कालिकातनयो नमः ॥६
खगेशः खेचरः खेटो विशिष्टो खेटकप्रियः ।
कुमारः क्रोधनः कालिप्रियः पर्वतरक्षकः ॥७
गणेज्यो गणपो गूढो गूढप्रायो गणेश्वरः ।
गणनाथो गणश्रेष्ठो गणमुख्यो गणप्रियः ॥८
घोरनादो घनश्यामो घनस्वामी घनान्तकः ।
चम्पकाभश्चिरंजीवी चारुवेषश्चराचरः ॥९
चिन्त्योऽचिन्त्यगुणो धीमान्सुचित्तस्थश्चितीश्वरः ।
छत्री छद्मतिश्छत्ता छिन्ननाशा मनःप्रियः १०
छिन्नभश्छिन्नसन्तापश्छद्दीशश्छदिनान्तकः ।
जेता जिष्णुर्जह्नीशानो जनानन्दो जनेश्वरः ॥११
जनको जनसन्तोषो जयजायविनाशनः ।
जालन्धरो जनाराध्यो जनाध्यक्षो जनप्रियः ॥१२
जीवद्या जीवदो जन्तुर्जीवनाथो जलेश्वरः ।
जयदो जित्वरो जिह्मो जयश्रीर्जयवर्धनः ॥१३
जयभूमिर्जयकारो जयहेतुर्जयेश्वरः ।
झंकारकृदनन्तात्मा झंकारहेतुरात्मभूः ॥१४
झञ्जेश्वरो हरोभर्ता बिभर्त्ता मृत्यकेश्वरः ।
सीत्कारहृदयेशात्मा टङ्केशः टङ्कनायकः ॥१५
ठकारभूठरवीशो गिरिपुष्टांकुरः पतिः ।
ढुंढिर्डकप्रियः पांथो ढुंढिराजो निरंतकः ॥ १६
ताम्रस्तमीश्वरस्तोता तीर्थराजस्तडित्प्रभः ।
त्रिग्रक्षस्त्र्यक्षकस्तंभस्तक्षकस्थो महेश्वरः ॥१७

स्थालस्थः स्थावरस्थाता स्थिरबुद्धिः स्थिरेन्द्रियः ।
स्थिरज्ञानी स्थिरप्रीतिः स्थिरस्थितिः स्थिराशयः ॥१८

दाम दामोदरो दम्भो दाडिमीकुसुमप्रियः ।
दारिद्र्यहा दयी दिव्यो दिव्यदेहो दिनप्रभः ॥१९

दिनकरो दिवानाथो दिवसेशो दिवाकरः ।
दीर्घश्चरो दलज्योतिर्दलेशो दलसुन्दरः ॥२०

दलप्रियो दलाभासो दलपूज्यो दलप्रभुः ।
दलकांतिर्दलाकारो दलसेव्यो दलार्चितः ॥२१

दीर्घबाहुर्दलश्रेष्ठो दललुब्धो दलाकृतिः ।
दानवश्यो दयासिन्धुर्दयालुर्दीनवल्लभः ॥२२

धनेशो धनदो धर्मी धनराजो धनप्रभुः ।
धनप्रदो धनाध्यक्षो धनमान्यो धनञ्जयः । २३

धीवरो धातुको धाता ध्रुवो धूमलवर्धनः ।
धनिष्ठो धवलच्छत्री धनकाम्यो धनेश्वरः ॥२४

धीरो धीरतरो धेनुर्धीरेशो धरणीप्रभुः ।
धराधीशो धरानाथो धरणीनायको धरः ॥२५

धराकान्तो धरापालो धरणीजनवल्लभः ।
धराधरो धरो धृष्टो धृतराष्ट्रो धनीश्वरः ॥२६

नारदो नीरदो नेता नीतिपूज्यो नयप्रियः ।
नीतिलभ्यो नतीशानो नीतिलब्धो व्रतीश्वरः ॥२७

पार्थिवः पार्थसंपूज्यः पार्षदः प्रणतः पृथुः ।
पृथिवीशः पृथासूनुः पृथिवीभृत्य ईश्वरः ॥२८

पुराणः पारदः पांथः पांचालीपावकः प्रभुः ।
पूर्वः सुरपतिः श्रेयान्प्रीतिदः प्रीतिवर्द्धनः ॥२९

पार्वतीशः परेशानः पार्वतीहृदयप्रियः ।
पार्वतीरमणः पूतः पवित्रः पापनाशनः ॥३०

पात्री पत्रालिसन्तुष्टः परितुष्टः पुमान्प्रियः ।
पर्वेशः पर्वताधीशः पर्वतो नायकात्मजः ॥३१

फाल्गुनस्तु फणानाथः फणीशः फणरक्षकः ।
फणीपतिः फणीशानः फणराजः फणाकृतिः ॥३२

बलभद्रो बली बालो बलधीर्बलवर्द्धनः ।
बलप्राणो बलाधीशो बलिदानप्रियंकरः ॥३३

बलिराजो बलिप्राणो बलिनाथो बलप्रियः ।
बलो वरश्च बालेशो बालकः प्रियदर्शनः ॥३४

भद्रो भद्रपदो भीमो भीमसेनो भयंकरः ।
भवानीशो भवेशानो भवानीनायकोर्भकः ॥३५

मकारो माधवो मीनो मीनकेतुर्महेश्वरः ।
महेशुर्मदनो मन्थो मिथुनेशोऽमराधिपः ॥३६

मरीचिर्मंजुलो मोह्रो मोहहा मोहमर्दनः ।
मोहको मोहनो मेधाप्रियो मोहविनायकः ॥३७

महीपतिर्महीशानो महीराजो मनोहरः ।
महीश्वरो महीपालो महीनाथो महीप्रियः ॥३८

महीधरो महादेवो मनुराजो मनुप्रियः ।
मौनी मौनधरो मेघो मन्दारो मतिवर्द्धनः ॥३९

मतिदो मन्थरो मन्त्रो मन्त्रीशो मन्त्रनायकः ।
मेधावी मानदो मानी मानहा मानमर्दनः ॥४०

मीनगो मकराधीशो मधुरो मणिरञ्जितः ।
मणिरम्यो मणिभ्राता मणिमण्डनमण्डितः ॥४१

मंत्रेशो मंत्रदो मुग्धो मोक्षदो मोक्षवल्लभः ।
मल्लो मल्लप्रियो मञ्चो मल्लको मेलनप्रभु: ।।४२

मल्लिको मल्लिकागंधी मल्लिकाकुसुमप्रियः ।
मालतीशो मघानाथोऽमोघमूर्तिर्मघेश्वर: ।।४३

मूलाभो मूलहा मूलो मूलदो मूलमत्सर: ।
माणिक्यरोचि: स मुग्धो मणिकूटो मणिप्रियः ।।४४

मुकुन्दो मदनो मंदो मंदवंद्यो मनुप्रभु: ।
मन: स्थो मेनकाधीशो मेनकाप्रियदर्शन: ।।४५

यामो यामो यमी देवो यादवो यदुनायक: ।
याचको याज्ञिको यज्ञो यज्ञेशो यज्ञवर्धन: ।।४६

रमापती रमाधीशो रमेशो रामवल्लभ: ।
रमापती रमानाथो रमाकान्तो रमेश्वर: ।।४७

रेवतीरमणो रामो रमेशो रामनन्दन: ।
रमामूर्ती रतीशानो राकाया नायको रविः ।।४८

लक्ष्मीधरो ललज्जिह्वो लक्ष्मीबीजजपे रत: ।
लंपटो लंबराजेशो लंबोदरो लकारभू: ।।४९

वामनो वल्लभो वंद्यो वनमाली वनेश्वर: ।
वनस्थो वनगो विंध्यो विंध्यराजो वनाह्वय: ।।५०

वनेचरो वनाधीशो वनमालाविभूषणः ।
वेणुप्रियो वनाकारो वनाराध्यो वनप्रभु: ।।५१

शंभु: शङ्करसन्तुष्टः शंबरारि: शरासन: ।
शबरीप्रणत: शाल: शिलीमुखध्वनिप्रिय: ।।५२

शकुल: शल्लक: शीत: शीतरश्मि: सितांशुक: ।
शीलद: शीकर: शील: शीलशीलो शनैश्चरः ।।५३

सिद्धसिद्धिकरः साध्यः सिद्धिभूः सिद्धिभावनः ।
सिद्धान्तवल्लभः सिन्धुः सिन्धुतीरनिषेवितः ॥५४

सिंधुपतिः सरो धीरः सरसीरुहलोचनः ।
सरित्पतिः सरित्संस्थः सरः सिन्धुः सरोवरः ॥५५

सखा वीरपतिः सूतः सचेतः सत्पतिः सितः ।
सिन्धुराजः सदाभूतः सदाशिव सतां पतिः ॥५६

सदीशः सदनः सूरिः सेव्यमानः सतीपतिः ।
सूर्यः सूर्यपतिः सेव्यः सेवाप्रियसनातनः ॥५७

सतीशः सरसीनाथः सतीराजः सतीश्वरः ।
सतीप्राणः सतीनाथः सतीसेव्यः सतांपतिः ॥५८

सिद्धराजः सतीतुष्टः सचिवः सव्यवाहनः ।
सतीनायकसन्तुष्टः सव्यसाची सुमन्तकः ॥५९

सच्चित्तः सर्वसन्तोषी सर्वारामः सुसिद्धिदः ।
सर्वाराध्यः सचिवाख्यः सतीपतिसुसेवितः ॥६०

सागरः सगरः सार्थः समुद्रः समुद्रप्रियः ।
समुद्रतीरः सन्तुष्टः समुद्रप्रियदर्शनः ॥६१

समुद्रेशः सरोनाथः सरसिजविलोचनः ।
सरसीजलदाकारः सरसीजलदार्चितः ॥६२

समुद्रिकः समुद्रात्मा साध्यमानः सुरेश्वरः ।
सुरसेव्यः सुरेशानः सुरनाथः सुरार्चितः ॥६३

सुराध्यक्षः सुराराध्यः सुरवंद्यः विशारदः ।
सुरगुरुयः सुरप्रायः सुरसिंधुनिवासवान् ॥६४

सुधाप्रियः सुधाधीशः सुधाराध्यः सुधांपतिः ।
सुधानाथः सुधाभूतः सुधासागरसेवितः ॥६५

हारको हीरको हंता हरिकस्य रुचिः प्रभुः ।
हव्यवाही हरिद्राभो हरिद्वारसमर्दनः ॥६६

हेतुहेतुर्हरित्राता हरिनाथो हरिप्रियः ।
हरिपूज्यो हरिप्राणो हरिहृष्टो हरीन्द्रकः ॥६७

हरीशो हंतृको हीरो हरिनामपरायणः ।
हरिमुग्धो हरिज्योऽथ हरदासो हरीश्वरः ॥६८

हरो हरिपतिर्हारो रोहिणीचित्तहारकः ।
हरहितो हरप्राणो हरिवाहनशोभनः ॥६९

हासो हासप्रियो हूहूर्हुतभुग् हुतवाहनः ।
हुताशनो हली हक्को हालाहलहलायुधः ॥७०

हलाकारो हलीशानो हलिज्योऽथ हलिप्रियः ।
हरपुत्रो हरोत्साहो हरसूनुर्हरात्मजः ॥७१

हरवंद्यो हराधीशो हरातंको हराकृतिः ।
हरमान्यो हरांकस्थो हरवैरिविनाशनः ॥७२

हरशत्रुर्हरावर्षोऽहंकारो हरिणीप्रियः ।
हाटकेशो हरेशानो हाटकप्रियदर्शनः ॥७३

हाटको हाटकप्राणो हाटभूषणभूषितः ।
हेतिको हतको हमो हसगतिर्हराह्वयः ॥७४

हंसीपतिर्हरोन्मत्तो हंसीशो हरवल्लभः ।
हरपुष्पप्रभो हंसीप्रियो हंसविलासकः ॥७५

हरबीजरतो हारी हुरितो हरितांपतिः ।
हरित्प्रभुर्हरित्पालो हरिरंतरनायकः ॥७६

हरिद्विशो हरित्प्राणो हरिन्नियप्रियो हरिः ।
हेरंबो हुंकृतिक्रुद्धो हेरम्बनन्दनो हली ॥७७

हेरंबप्राणसंहर्ता हेरंबहृदयप्रियः ।
क्षमापतिः क्षणः क्षांतः क्षुरधारः क्षितीश्वरः ॥७८

क्षितीशः क्षितिपः क्षीणः क्षितिपालः क्षितिप्रभुः ।
क्षितीशानः क्षितिप्राणः क्षितिनायकसत्प्रियः ॥७९

क्षितिराजः क्षणाधीशः क्षणपतिः क्षणेश्वरः ।
क्षणप्रियः क्षमानाथः क्षणदानायकः प्रियः ॥८०

क्षणिकः क्षणदाधीशः क्षणदाप्राणदः क्षमी ।
क्षमः क्षोणिपतिः क्षोभः क्षोभकारी क्षमाप्रियः ॥८१

क्षमाशीलः क्षमारूपः क्षमामंडनमंडितः ।
क्षेमानाथः क्षमाधारः क्षमाकारी क्षमाकरः ॥८२

क्षेमः क्षीणरजाः क्षुद्रः क्षुद्रपानविशारदः ।
क्षुद्रेशानः क्षमाकारः क्षीरपानकतत्परः ॥८३

क्षीरशायी क्षणेशानः क्षोणिभृत्क्षणदोत्सवः ।
क्षेमंकरः क्षमालुब्धः क्षमाशास्त्रविशारदः ॥८४

क्षभीश्वरः क्षमाकामः क्षमाहृदयमण्डनः ।
नीलाद्रिः सधराधीशो नीलपर्वतसन्निभः ॥८५

नीलमणिप्रभारम्यः शशिभूषणभूषितः ।
शशधरः शरीभूतो मुण्डमालाविभूषितः ॥८६

मुण्डस्थो मुण्डसंतुष्टो मुण्डमालाधरोऽनघः ।
दिग्वासा विदिगाकारो दिगंबरवरप्रदः ॥८७

दिगंबरीश आनन्दो दिगंबरतनूद्भवः ।
पिंगलैकजटो धृष्टो डमरुवादनप्रियः ॥८८

सृणीकरः सृणीशानः खड्गधृक् खड्गपालकः
शूलहस्तो मतंगाभो मातंगोत्सवसुन्दरः ॥८९

अभयकर ऊर्ध्वगो लंकापतिविनाशनः ।
नगशायी नगेशानो नागमडनमंडितः । ९०

नगाकारो नगाधीशो नगशायी नगप्रियः
घटोत्सवो घटाकारो घंटावाद्यविशारदः ॥९१

कपालपाणिरम्बेशः कपालासनसादनः ।
पद्मपाणिकपालश्च त्रिनेत्रो नागवल्लभः ॥९२

किंकणीजालसन्तुष्टो जलप्रायो जलाकरः ।
अपमृत्युहरो मायामोहमूलविनाशनः ॥९३

आयुर्धः कमलानाथः कमलाकांतवल्लभः ।
राज्यदो राजराजेशो राजीवपट्टशोभनः ॥९४

डाकिनीनायको नित्यो नित्यधर्मपरायणः ।
डाकिनीहृदयज्ञानो डाकिनीदेहनाशकः ॥९५

डाकिनीप्राणदः शुद्धः श्रद्धं यचरितो विभुः ।
हेमप्रभो हिमेशानो हिमार्नाप्रियदर्शनः ॥९६

हेमदो मर्मदो नामी नामधेयो नभात्मजः ।
वैकुण्ठो वासुकीप्राणो वासुकिकंठभूषणः ॥९७

कुण्डलीशो मखध्वंसी मखराजो मखेश्वरः ।
मखाकारो मखाधीशो मखमालाविभूषणः ॥९८

अम्बिकावल्लभो वाणीपतिर्वाणीविशारदः ।
वाणीशो वाचप्राणश्च वचःस्थो वचनप्रियः ॥९९

वेसाधरो दिशामीशो दिङ्नागो हि दिगीश्वरः ।
दूर्वाप्रियो दुराराध्यो दारिद्र्य भयभंजनः ॥१००

तर्कस्तर्कप्रियस्तर्क्यो वितर्कस्तर्कवल्लभः ।
तर्कसिद्धोतिसिद्धात्मा सिद्धदेहो गुहाशयः ॥१०१

ग्रहगर्भो ग्रहेशानो गंधगंधी विशारदः ।
मंगलो मंगलाकारो मंगलवाद्यवादकः ॥१०२
मंगलीशो विमानस्थो विमानो नैकनायकः ।
बुधेशो बिबुधाधीशो बुधवरो बुधाकरः ॥१०३
बुधनाथो बुधप्रीतो बुधवंद्यो बुधाधिपः ।
बुधसिंहो बुधप्राणो बुधवुद्धो बुधप्रियः ॥१०४
सोमप्रभो मनःसिद्धो मनोजप्राणनाशनः ।
सोमेशो मशकाकारः सोमपाः सोमनायकः ॥१०५
कामगः कामहा बोद्धः कामनाफलदीक्षितः ।
त्रिदशो दशरात्रेशो दशाननविनाशनः ॥१०६
लक्ष्मणो लक्ष्यसंभर्त्ता लक्ष्यसंख्यो मनःप्रियः ।
विभावसुर्नलेशानो नायको नगजाप्रियः ॥१०७
नलकांतिर्नलोत्साहो नरदेवो नराकृतिः ।
नरपतिर्नरेशानो नारायणनरेश्वरः ॥१०८
अनिलो मारुतो मांसो मांसैककरसेवितः ।
मरीचिरमरेशानो मागधो मगधप्रभुः ॥१०९
सुन्दरीसेदकोद्धारी द्वारदेशनिवासनः ।
देवकीगर्भसंजातो देवकीसेवकः कुहूः ॥११०
वृहस्पतिः कविः शुक्रः शारदासाधकप्रियः ।
शारदासाधकः प्राणः शारदासेवकोत्सुकः ।।१११
शारदासाधकः श्रेष्ठो वीतरागो गजप्रभुः ।
मांसप्रियो मधुप्राणो मधुमांसमहोत्सवः ॥११२
मधुपो मधुपश्रेष्ठो मधुपानसदारतिः ।
मोदकादानसंप्रीतो मोदकामोदमोदितः ॥११३
आमोदो मोदितानंदो नंदिकेशो नदेश्वरः ।
नदीप्रियो नदीनाथो नदीतीररुहस्तपाः ॥११४

तपनस्तापनस्तापत्रतापहास्तापकारकः ।
पतंगो गोमुखो गौरो गोपालो गोपवर्द्धनः ॥११५
गोपतिर्गोपसंहर्ता गोवृन्दैकप्रियोतिगः ।
गविष्ठो गुणरम्यश्च गुणसिन्धुर्गुरुप्रियः ॥११६
गुणपूज्यो गुणोपेतो गुणवंद्यो गुणोत्सुकः ।
गुणीशः केवलो गर्भ. सुगर्भो गर्भरक्षकः ॥११७
गांभीर्यधारको धर्ता विधर्ता धर्मपालकः ।
जगदीशो जगन्मित्रो जगत्त्राता जगत्प्रभुः ॥११८
जगद्धाता जगद्भोक्ता जगज्जाप्यविनाशनः ।
जगत्कर्ता जगद्धर्ता जगज्जीवनजीवनः ॥११९
मालतीपुष्पसुप्रीतो मालतीकुसुमोत्सवः ।
मालतीकुसुमाकारो मालतीकुसुमप्रभुः ॥१२०
रसालमञ्जरीरम्यो रस न्धनिषेवितः ।
रसालमञ्जरीलुब्धो रसालतरुवल्लभः ॥१२१
रसालतरुवासी वै रसालफलसुन्दरः ।
रसालरससंतुष्टो रसालरसलालसः ॥१२२
केतकीपुष्पसंतुष्टो केतकीगर्भसंभवः ।
केतकीपत्रसंकाश· केतकीप्राणनाशनः ॥१२३
गर्त्तस्थो गर्त्तगंभीरो गर्त्तेशो गर्त्तनायकः ।
गर्त्तगेशोतिगर्त्तस्थो गर्त्तक्षीरनिवासकः ॥१२४
गणसेव्यो गणाध्यक्षो गणराजो गणाह्वयः ।
आनन्दभैरवो भारुर्भैरवेशो सरुभंगः ॥१२५
सुब्रह्मभैरवो वामभैरवो भूतभावनः ।
भैरवीतनयो देवीपुत्र. पर्वतसम्भवः ॥१२६

यहाँ तक श्री बटुकभैरव के सहस्र नाम कहे गये हैं। इसके पश्चात् श्री

बटुक भैरव सहस्रनाम के स्तोत्र के पाठ का फल कहा जाता है—

नाम्नामेतत्सहस्रेण स्तुत्वा बटुकभैरवम् ।
लभते ह्यतुलां लक्ष्मीं देवानामपि दुर्लभाम् ।।१२७

उपदेशं गुरोर्लब्ध्वा योगे त्रिमंगली भवेत् ।
अष्टम्यां वा चतुर्दश्यां वासरे भूमिसंभवे ।।१२८

शुक्रे वा रविसंक्रांतौ योगोयमुत्तमः प्रभो ।
तस्मिन्योगे महेशानि सर्वसिद्धिमवाप्नुयात् ।।१२९

लक्ष्यमावर्त्तयेन्मंत्रं मन्त्रराजं नगेश्वरि ।
नित्यकर्मसुसिद्ध्यर्थं तत्फलं लभते ध्रुवम् ।।१३०

स्तवमेनं पठेन्मंत्री पाठयन्वा यथाविधि ।
दुर्लभां लभते सिद्धिं सर्वदेवनमस्कृताम् ।।१३१

न प्रकाश्यं च पुत्रेषु भ्रष्टेषु तु कदाचन ।
अन्यथासिद्धिरोधः स्याद्वातुलो वा गवेत्प्रिय: ।।१३२

स्तवस्यास्य प्रसादेन देवनायकवत्प्रियः ।
संग्रामे विजयंच्छत्रून्मातंगानिव केसरी ।।१३३

राजानं वशयेत्सद्यो देवानपि वशं नयेत् ।
किंवा परं फलं नाथ स्तवराजस्य कथ्यगम् ।।१३४

यद्यन्मनसि संकल्पस्तवमेनमुदीरयन् ।
तत्तदाप्नोति देवेश बटुकस्य प्रसादतः ।।१३५

आपदां हि विनाशाय कारणं कांतदुर्लभम् ।
देवासुररणे घोरं देवानामुपकारकम् ।।१३६

प्रकाशितं मया नाथ तन्त्रे भैरवदीपके ।
अपुत्रो लभते पुत्रं षण्मासान्निरतो नरः ।।१३७

पठित्वा पाठयित्वाऽपि स्तवराजमनुत्तमम् ।
दरिद्रो लभते लक्ष्मीमीप्सितामपि निश्चलाम् ।।१३८

कन्यार्थी लभते कन्यां सर्वरूपसमन्विताम् ।
प्रदीपे बलिदाने च वशयेदखिलं जगत् ॥१३९

वटे वा बिल्वमूले वा रम्भायां विपिनेऽपि वा ।
पूजयेत्तु तिलैर्माषैर्दुग्धैर्मांसैर्भक्षैस्तथा ॥१४०

वर्णलक्षं जपेद्वापि दिङ्मात्रं हि प्रदर्शितम् ।
जपेत्स एकलक्षं च मन्त्रराजस्य सिद्धये ॥१४१

घृतपक्वान्नतो वापि जेमनै रससंकुलैः ।
पूजयेद्धारयेद्वापि स्तवमेनं सुसाधकः ॥१४२

पठेद्वा पाठयेद्वापि यथाविधि सुरप्रिये ।
शत्रुतो न भयं तस्य नाग्निचौरास्त्रवज्रजम् ॥१४३

ज्वरादिसम्भवं वापि सत्यं सत्यं महेश्वरि ।
भैरवाराधनाशक्तो यो भवेत्साधकः प्रभो ॥
सदाशिवः स विज्ञेयो भैरवेणेति भाषितम् ॥१४४

श्रीमद्भैरवराजसेवनविधौ वैय्यग्रमासेदुषः
पुंसः पञ्चविधा भवन्ति नवधा ह्यष्टौ तथा सिद्धयः ।
क्षोणीपालकिरीटकोटिमणिसन्मालाभरैर्भूयशो
मौग्ध्य पादपयोजयोर्विजयते मूर्ध्नि प्रभोश्छत्रताम् । १४५

इस बटुकभैरवसहस्रनाम के बारे में इतना ही कहना है कि जो कोई श्रद्धा व प्रेम सहित इस स्तोत्र का पाठ करता है, वह दुर्लभ सिद्धि भी प्राप्त कर लेता है। यह स्तोत्र कुपात्र को न तो बतलाना और न सुनाना चाहिये।

वट, बिल्व या केले के पेड़ के नीचे बैठकर अथवा वन में जाकर इस स्तोत्र का एक लाख की संख्या में जप करने से विश्वस्त रूप से कार्यसिद्धि हो जाती है और समस्त कामनाएं पूर्ण हो जाती हैं।

10

गायत्रीसाधन

ओ३म् भू र्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य
धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् ।

हे प्राण दुख हर्ता और व्यापक आनन्द देने वाले प्रभो ! आप सर्वज्ञ और सकल जगत् के उत्पादक हैं। हम आपके पूजनीयतम पाप नाशक स्वरूप तेज का ध्यान करते हैं जो हमारी बुद्धियों को प्रकाशित करता है। हे पिता ! आपसे हमारी बुद्धि कदापि विमुख न हो। आप हमारी बुद्धि को सत्कर्मों में प्रेरित करते रहें यही हमारी प्रार्थना है।

व्याख्या

भू—का अर्थ है प्राणरक्षक। प्राण की रक्षा होती है अग्नि-जल तथा वायु से। यह तीनों वस्तुएँ सविता सूर्य की सहायता से उत्पन्न होती हैं। परन्तु उपासक जब भू के द्वारा प्रभु की उपासना करे तो उसको ऐसा स्वरूप स्मरण करना चाहिये जो कि सविता रूप हो ताकि सविता शक्ति द्वारा उसकी रक्षा हो सके।

भुवः—का अर्थ है दुःख विनाशक। दुख भी कई प्रकार का है और उसकी चिकित्सा तथा उपाय भी अनेक हैं जिनकी चिकित्सा औषधि, आग, बिजली, जल, पृथ्वी आदि द्वारा की जाती है यद्यपि वह सब प्रभु को उत्पन्न की हुई हैं। जब रोगी स्वस्थ हो जाता है तो वह औषधि अथवा चिकित्सक की प्रशंसा करता है। प्रभु का नाम नाममात्र ही लिया जाता है। जहां संकल्प अथवा मन्त्रों द्वारा चिकित्सा की जाती है वहाँ भी उस मनुष्य के गुण गाये जाते हैं जिसने मन्त्रों द्वारा रोगी की चिकित्सा की होती है। और बजाय

प्रभु के यहां और वहाँ सब जगह उस तान्त्रिक तथा ओझा की ही प्रशंसा की जाती है। मगर आप यह भली भांति समझ लें कि रोगी की चिकित्सा वह प्रभु ही अपनी प्रेरणा द्वारा करते हैं।

स्वः—का अर्थ है सुखरूप। सुख भी अनेक प्रकार का है। जो मनुष्य निर्धन हो और फिर अपनी मेहनत से धनवान बन जाये। घर, महल गाड़ी, अटारी, मोटर गाड़ी, आदि रखने वाला बन जाये तो वह भी यही कहता है कि मैंने सब काम किया और उससे धन पैदा किया। किसी भी साधन द्वारा यदि किसी को रुपया मिल जाये तो वह प्रभु का नाम बस योंही ले लेता है। यदि, कोई किसी धनवान के यहाँ पैदा होकर सुख पाता है, तो वह अपने बाप-दादा का नाम लेता है। लेकिन यदि किसी को सुख की प्राप्ति का विचार न हो, और न ही किसी दूसरे के मन में यह विचार उठे कि उसको सुख होगा तो उसे यदि अकस्मात् ही धन की प्राप्ति हो जाये तो फिर सब यही कहते हैं कि यह प्रभु की लीला है।

वरेण्यम्—शब्द का अर्थ है 'वरने योग्य'। श्रेष्ठ करण वह शक्ति है जो पाप से बचाती है या छिपकर रक्षा करती है और न्याय करती है।

सवितुः—सविता का निज स्वरूप बड़ा ही विचित्र है। सारी सृष्टि को किस प्रकार कन्ट्रोल करता है, किस प्रकार से भक्तों की रक्षा करता है यह सब रहस्य की बातें हैं। इस एक सविता शब्द पर बड़े-बड़े ग्रन्थ लिखे जा सकते हैं। यहां हम स्थानागत को दृष्टिगोचर रखते हुए केवल इतना ही लिख सकते हैं कि सविता सम्पूर्ण पदार्थों पर शासन करता है और जितने भी पदार्थ दृष्टिगोचर हो रहे हैं, इन सबका वही ईश्वर, शुभ प्रेरणा करने वाला है, वही सविता देव सब बुराइयों को हमसे दूर करके कल्याणकारी पदार्थ हमें देता है।

भर्ग—शब्द के अर्थ अनगिनत हैं, मगर अन्य सब अर्थों को छोड़ कर जिस उद्देश्य के लिये यह शब्द इस मन्त्र में आया है वही मनुष्य का यथार्थ अभीष्ट है "भर्गो देवस्य धीमहि" हम भर्ग को धारण करें। अथवा भर्ग का ध्यान

करें। मनुष्य का जन्म मृत्यु से छुटकारा करने वाली भर्ग शक्ति है जो भ-भय र-प्रकाश, ग-गति करने वाली है। यह मृत्यु-लोक भयलोक है। इसमें जन्म मरण का सदा भय बना रहता है। मोह आदि विषयों के कारण तथा पाप के कारण।

(१) भर्ग क्या है ?

भर्ग वह शक्ति है जो उपासक को भयभीत करने वाले लोकों अथवा (काम-क्रोध आदि) शत्रुओं से अपने प्रकाश से गतिशील कराकर सुरक्षित कर देती है या संसार के भयभीत हुए प्राणी जिसकी प्रार्थना करते हैं। जो यह सविता के अन्तर्गत भर्ग है उसको मुमुक्षु जन्म मृत्यु और दैहिक (देहसम्बन्धी) दैविक और भौतिक दुख नाश करने के निमित्त ध्यान करते हैं। अर्थात् दुखों को दूर करने के लिए यदि प्रभु की किसी शक्ति का ध्यान किया जाता है तो वह भर्ग शक्ति है।

(२) भर्ग

पाठकों को भर्ग को विशेष रूप से जानने का प्रयत्न करना चाहिये कि किस प्रकार का यह भर्ग है जो कि भू आदि सात लोकों में व्याप्त हो रहा है अर्थात् भूः (भूमि), भुवः (अन्तरिक्ष), स्वः (स्वर्लोक), महः (महर्लोक), जनः (जनलोक), तपः (तपोलोक) और सत्यम् (सत्यलोक) इस प्रकार क्रम से लोकों को व्याप्त करके वह भर्ग इन सात लोकों को, दीपक के समान प्रकाश करता है अर्थात् भर्ग ईश्वर का तेज स्वरूप सर्वतः परिपूर्ण है।

(३) भर्ग का अर्थ भग

भर्ग का अर्थ भग भी होता है। इस सारे संसार में ३३ प्रकार का है। विस्तार देखिये। ऋषि ग्रन्थों में भी इस वीर्य अथवा ऐश्वर्य का विस्तार उत्तम रूप से दर्शाया गया है।

(४) भर्ग तेज है

योगी जब अन्तर्ध्यान होता है तो स्वांस बाहर की बजाय भीतर सुषुम्ना के द्वारा ऊपर की ओर गति करते हैं। जब वह भृकुटि में पहुँचते हैं, तो एक प्रकाश होता है। इस प्रकाश को वह निरन्तर ध्यान में रखते हैं। इस प्रकाश या तेज का काम है, बुद्धि के दर्पण पर जो आवरण है उस को फाड़ देना— और जब यह उसको फाड़ देता है तो प्रत्येक वस्तु का यथार्थ ज्ञान होता है। जिनके वासना संस्कार जन्म जन्मान्तर के हैं, जिनका मनुष्य को पता ही नहीं वह सामने प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होने लगते हैं, और क्योंकि उस प्रकाश में यथार्थ ज्ञान हो गया है, इसलिये योगी वासनाओं अथवा संस्कारों का नाश कर देता है। पहले-पहल क्षणिक प्रकाश होता है। ज्यों ज्यों ध्यानावस्था परिपक्व होती जाती है त्यों-त्यों उसका पर्दा फटता जाता है।

गृहस्थी सावधान

गृहस्थ सज्जन दिन भर मन्त्र को यन्त्रवत् जपते रहते हैं। जैसे कि यन्त्र झूमता रहता और मालिक का सब काम कर डालता है और मालिक को पता भी नहीं रहता, इसी प्रकार गृहस्थी का जप होता है। उसका गृहस्थी को स्वयं भी पता नहीं रहता।

जप मानसिक ध्यान से होना चाहिये। इस अवस्था में उसे मन्त्र-योग अथवा भक्ति-योग अथवा ध्यान-योग कहते हैं। इस जप में अर्थात् मानसिक जप में वृत्तिलय हो जाता है। अपनी सुध नहीं रहती। समाधि लग जाती है। प्रकाश हो जाता है।

प्राण—अपान कब होते हैं ?

जब तक चित्त एकाग्र न हो जाये प्राण अपान एक नहीं होते। बाहर ही आते जाते रहते हैं। इसमें संख्या का जप नहीं होता। कुछ मन्त्र ही हो सकते हैं।

परमात्मा अपनी कृपा साधक पर कैसे करते हैं। इसका बड़ा सुन्दर चित्र महर्षि दयानन्द ने ऋग्वेदादि भाष्य-भूमिका में चित्रित किया है। आसन विषय

में यजुर्वेद अध्याय ११ के मन्त्रों की व्याख्या करते हुए महर्षि लिखते हैं—

योग को करने वाले मनुष्य तत्वज्ञान अर्थात् ब्रह्मज्ञान के लिये अपने मन को पहले परमेश्वर से युक्त करते हैं, तब सविता परमेश्वर उनकी बुद्धि को अपनी कृपा से, अपने में युक्त कर लेता है। फिर वह परमेश्वर के प्रकाश को निश्चय करके यथावत् धारण करते हैं। पृथ्वी के बीच में योगी का यही प्रसिद्ध लक्षण है।"

सारांश यह कि भर्ग वह तेज या प्रकाश है जो मोह आदि अंधकार (अज्ञान) जन्य पाप का नाश कर देता है। परमार्थ चिन्ता में भर्ग शक्ति 'उपासक के मस्तिष्क में प्रेरणा करती है। पापों से बचाती और धर्म में प्रवृत्ति तथा अधर्म से निवृत्ति की ओर ले जाती है। संसार मार्ग से इसका सम्बन्ध नहीं है। धन, ऐश्वर्य, सब प्राकृतिक पदार्थों की तथा सुख-दुख के नाश की प्रेरणा स्वयं सविता देव करते हैं। किन्तु भर्ग का सम्बन्ध आध्यात्मिक होता है निज उपासकों के लिए वह प्रत्येक प्रकार की जिम्मेदारी लेता है।

देवस्य—भर्ग देव और धीमहि का सम्बन्ध मनुष्य योनि के साथ है। अन्य योनियों में भी जीव है लेकिन लक्षण में भेद है। जीव तो वृक्षों में, पशुओं में भी है। किन्तु वृक्षों में केवल देह का विकास होता है और पशुओं में देह और प्राण दोनों का। एक मनुष्य है जिसके विकास का ध्येय मन और बुद्धि का विकास है। पहली दो प्रकार की योनियों में मन और बुद्धि गुप्त होती हैं। मनुष्य में वह जाग्रत हो सकती हैं जिसके द्वारा मनुष्य कर्म करता है।

कर्म करने के लिये ज्ञान भी आवश्यक है और ज्ञान देने वाले को देव कहते हैं।

देव का दूसरा अर्थ दाता

दाता—देने वाला। प्रत्येक प्राणी सुख का अभिलाषी है और सुख मिलता है भोग से। विविध प्रकार के भोग देवों से मिलते हैं। इसलिये देव—दाता देने वाले को भी कहते हैं।

वह देव क्या देता है ?

वह देव हमें क्या देता है ?—वह देता है सुख तथा ज्ञान । समस्त योनियों में शारीरिक सुख की आवश्यकता है। उनकी तृप्ति भौतिक देवों से होती है। चन्द्रमा, पृथ्वी, जल, अग्नि, अन्न आदि सब देव सुख को देने वाले हैं। मनुष्य को शारीरिक सुख के अतिरिक्त आत्मिक शान्ति की भी इच्छा है। उसके लिये चेतन देवों की आवश्यकता होती है। चेतन देव पाँच हैं—माता, पिता, आचार्य अतिथि और परमेश्वर—इन सबके द्वारा ज्ञान मिलता है।

इस मन्त्र में सविता के साथ देव क्यों जोड़ा गया है ?

यह उपासकों को भी जानने की आवश्यकता है। सविता के अर्थों में हम पीछे बता आये हैं, कि उसमें सब देव आ जाते हैं, जो कि प्राणियों को शारीरिक सुख पहुँचाते हैं। मगर गुप्त प्रेरक होने के कारण उसके साथ देव शब्द जोड़ा गया है।

भर्गो देवस्य धीमहि—अर्थात् वह सविता चैतन्य देव जिसकी शक्ति भर्गः है। सविता का अर्थ सूर्य है। सूर्य भी अन्नादि औषधियों तथा वनस्पतियों को पकाता है और भौतिक रोग आदि का नाश करता है, उन्हें भून डालता है। मगर सूर्य में मनुष्य के पाप भ्रम को नाश करने तथा पुण्य सत्य कर्मों को पकाने की शक्ति नहीं है। इस देव शब्द के साथ भर्गः का सम्बन्ध केवल मनुष्य योनि के साथ ही है जो धी अर्थात् मन तथा बुद्धि में सत्कर्म के लिये प्रेरणा करती है।

ज्ञान दो प्रकार का है—एक प्राकृतिक दूसरा आत्मिक

प्राकृतिक ज्ञान से मनुष्य अपने शारीरिक सुख का सामना अर्थात् भौतिक उन्नति, अपने परिश्रम से अधिक से अधिक कर सकता है। भौतिक देवताओं को भी अपने अधिकार में कर लेता है। रेल, तार, ग्रामोफोन, रेडियो, टेलीविजन, वायुयान का आविष्कार आग, जल, वायु आदि देवताओं को अपने अधिकार में करने वाली बात है। यह ज्ञान भी सात्त्विक वृत्ति की सत्य साधना से प्राप्त होता है। किन्तु यह सात्त्विक वृत्ति निम्न प्रकृति में

रहने वाली है और इससे विज्ञान लोक में प्रकाश मिलता है। इससे संसार को पीड़ा भी पहुँचती है। इस ज्ञान की जितनी उन्नति होती है, उतना ही अभिमान, राग-दोष, भय भी बढ़ता है, प्राकृतिक ज्ञान में मिथ्या ज्ञान छिपा रहता है। इस मिथ्या ज्ञान के कारण संसार में दुख, ताप और जन्म मरण का चक्कर बना रहता है। इससे निकलने के लिए ऐसे देव की शरण में जाने की आवश्यकता है जो मनुष्य की बुद्धि को निश्चयात्मक ज्ञान प्राप्त करवायें. वह है भर्गः। निश्चयात्मक ज्ञान से मनुष्य पाप, भ्रम, संशय आदि समस्त विकारों से बचता तथा अपने आपको पहचानता है।

बाह्य तथा आन्तरिक तह का भेद

वाह्य से सूर्य के द्वारा नेत्र में प्रकाश होता है। जैसा बुद्धि देखती है, वैसा ही आत्मा को ज्ञान होता है और "भर्गः देवस्य" इस प्रकाश स्वरूप देव की भर्ग शक्ति का प्रकाश बुद्धि पर पड़ता है जिसको कि आत्मा देखती है।

सूंघने से घी की ऊपर की तह पर प्रभाव पड़ता है। समझने से निचली तह पर प्रभाव पड़ता है। इस समझने को साक्षात् कहते हैं।

सविता और देव की एक-गति

जिस प्रकार हम ऊपर दिखा चुके हैं कि सविता किस प्रकार गायत्री के भिन्न-भिन्न रूपों में प्रकट होता है ठीक उसी प्रकार देव शब्द भी कहीं सविता के रूप में, कही स्वयं अपने रूप में सम्बन्धित अथवा असम्बन्धित दोनों तरह से घी में प्रकाश करता है। वरुण का भी घी के साथ सम्बन्ध बन जाता है। वरुण का एक अर्थ है निवारण करने वाला—रोकने वाला (पाप से रोकने वाला)। भगवान की ओर चित्तवृत्ति लगाकर रखने वाले सत्पुरुषों के हृदयों में इस समय भी, भगवान्, कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य का प्रकाश करके उन्हें पाप मार्ग से बचाते हैं। फिर हमारे पाप कर्मों का फल दुख देकर भी भगवान् हमें पापमार्ग से रोकने का प्रयत्न करते हैं।

भजन साधन रहस्य

बिना रंजिश का काम केवल प्रभु का भजन ही है

(१) जाप विधि तथा स्थान

मानसिक जप सबसे श्रेष्ठ है, दूसरे दर्जे में धीरे-धीरे जाप होता है। तीन बार कर सकें तो और भी अच्छा है। शुद्धता के साथ होना चाहिये। भीतर बाहर स्थान से मतलब यह है कि गरमी के दिन होने की वजह से सम्भव है शाम को या किसी समय भीतर न बैठ सकें, बाहर बैठने में सुविधा हो तो दोनों जगह बन्दोबस्त कर सकते हैं।

(२) माला के लाभ

अभी माला द्वारा भजन करते रहते जब कभी माला फेरते फेरते चित्त ऐसा हो जाये कि माला फेरने को मन न करे तो वैसे ही भजन करें। तब माला बन्द करें। बिना माला के मन से करते रहो। जब कुछ देर पीछे संकल्प आने लगे और बन्द न हो तब फिर माला को ही फेरिये—इसी तरह से करते रहें।

कभी-कभी मन ध्यान में या मानसिक जप में नहीं लगता तब माला से, हृदय से, संख्या नियत करके मन को जाप में रखना अच्छा है।

(३) दीर्घ काल तक संतोष तथा ईश्वर अनुग्रह पर निर्भर होकर साधन करना चाहिये तभी सफलता होती है।

जैसा कुछ करते हो यथाशक्ति करते जाओ। उसका असर देखने पर आगे कुछ कहा जा सकता है। औषधि जो दी जाती है उसका प्रभाव देखकर आगे औषधि दी जाती है। यदि, पहिले ही औषधि अनुमान सहित न सेवन की जाय तो वह अपना पूरा प्रभाव नहीं दिखाती। ऐसी हालत में वैद्य आगे की औषधि नहीं दे सकता। कभी-कभी लगातार औषधि सेवन करते करते दूसरी औषधियों का लाभ हो जाता है। यह सब प्रभु की माया है। उसके निकट सब कुछ आसान है। मनुष्य अल्पज्ञ है। उसको जो कुछ पता है वह तुच्छ है और अधूरा है। परन्तु जब ईश्वर पर भार डालकर उनके भरोसे कुछ किया जाता है तब वह आप ही सफलता प्रदान करते हैं। इसलिए सन्तोष रखते हुए चले चलो।

(४) भजन विधि

लेट कर भजन करने में कुछ हर्ज नही है। परन्तु यदि कभी नींद आ जाये तो घबराना नहीं चाहिये, जब नींद खुल जाये और समय हो तो फिर लेटे-लेटे ध्यान करें।

(५) प्राणों की तेजी के समय सावधानी रखिये

जब प्राणों की विशेष तेजी हो जाती है, तब जो अवस्था बदलती है, उस को देखकर डरने की कोई बात नहीं है। जब उच्च स्वर से जाप अथवा कीर्तन करते समय जबान बन्द होने लगती है तो कुछ सैकण्ड के वास्ते रुक जाइये तब अवस्था ठीक हो जायेगी। यदि जाप अथवा कीर्तन के समय तेज न बोला जाये तो अच्छा रहेगा। मौके-मौके पर जबान को कुछ समय के लिए आराम देते जायें तो गड़बड़ नहीं होगी।

गायत्री साधन

(तन्त्र शास्त्र के अनुसार)

इस परिच्छेद में हम गायत्री देवी के साधन मन्त्र एवं पूजा प्रणाली का वर्णन तन्त्र-शास्त्र के अनुसार करेंगे।

गायत्री का प्रचार दिन प्रति दिन बढ़ रहा है। हमारे देश में लाखों परिवार ऐसे हैं जो प्रतिदिन नियमित रूप से श्रीगायत्री देवी का पूजन करते हैं। गायत्री देवी के सम्बन्ध में मुझे यहां इतना ही कहना है कि इनकी जितनी प्रशंसा की जाये थोड़ी है। यह महादेवी हैं। इनको सिद्ध करने से, साधक के सब काम स्वयमेव ठीक होने लगते हैं। केवल एक गायत्री मन्त्र से हरेक प्रकार के भूत-प्रेत पिशाच आदि दूर हो जाते हैं। यदि किसी ने मकान में जादू-टोना आदि कर दिया हो तो केवल दो दिन के गायत्री पाठ तथा जल छिड़कने से जादू- टोना का प्रभाव दूर हो जाता है। यह अनुभूत है। गायत्री मन्त्र समस्त सम्पत्तियों को देने वाला, समस्त शत्रुओं को नष्ट करने वाला तथा ग्रहपीड़ा, ज्वर, गुह्यकादि के दोष दूर करने वाला है।

जिस मनुष्य ने किसी देवता को सिद्ध करना हो, पहले उसको गायत्री

माता सिद्ध कर लेनी चाहिए। ऐसा करने से साधन-काल में किसी प्रकार का विघ्न निकट नहीं आ पाता।

हमारे प्राचीन ऋषियों ने इसी मन्त्र को सिद्ध करके समस्त सिद्धियां प्राप्त की थीं।

इस मन्त्र को सिद्ध करने के लिए साधक को शुद्ध-पवित्र रहना पड़ता है। उसको प्रत्येक प्रकार की मादक वस्तुओं जैसे मदिरा, चर्स, मांस तथा गर्म वस्तुओं से पूर्ण रूपेण परहेज करना चाहिए। केवल दूध-भात सेवन करना चाहिए। दूसरों से बातचीत नहीं करनी चाहिए। सारा दिन साधना में ही लगे रहना चाहिए। प्रत्येक प्रकार के कुविचारों को मन से निकाल कर काम क्रोध, लोभ, मोह, अहङ्कार नहीं करना चाहिए। किसी प्रकार का छल, कपट नहीं करना चाहिए। गायत्री देवी को सिद्ध करने के लिए, जमीन के नीचे, एक तिकोना स्थान बनाना चाहिए। यदि जमीन के नीचे ऐसी व्यवस्था न हो सके तो उस अवस्था में कोई एकान्त स्थान ढूंढना चाहिए जहां पर दिन रात रहने की व्यवस्था हो सके। साधक को चाहिए कि वह चारपाई पर न सोकर जमीन पर सोये। जमीन पर नर्म घास का बिस्तर बिछाये। केवल दिन में एक बार दूध-चावल का भोजन करे। किसी भी गलत किस्म के आदमी को साधना वाले कमरे में न आने दे। जब तक साधन किया जाये हजामत नहीं बनवानी चाहिए और न ही कोई दुर्गन्ध वाली वस्तु अपने पास रखे। मतलब यह है कि साधक को प्रत्येक प्रकार से शुद्ध एवं पवित्र रहना चाहिए।

जप प्रतिदिन करना चाहिये या जितना भी प्रतिदिन सुगमता पूर्वक किया जा सके उतना करना चाहिए। जितना जप पहले दिन किया था उतना ही प्रतिदिन करना चाहिये। जप में नंगा बिलकुल नहीं होना चाहिए।

पाठ के समय दिन में शुद्ध देशी घी की जोत, अपने पास जलानी चाहिये और रात को सरसों के तेल का दीपक जलाकर अपने पास रखना चाहिये।

पूजन-विधि—

गायत्री देवी की मूर्ति बनाकर उसको अपने सम्मुख रखिये। बल्कि गायत्री

देवी का एक छोटा-सा मन्दिर बनाकर मूर्ति को उसमें स्थापित कीजिये। मूर्ति को स्नान करवाइये। फिर चन्दन का तिलक लगाकर उस पर फूल चढ़ाइये और वस्त्र आदि पहनाकर देवी के आगे धूप जलायें। फिर शुद्ध देशी घी की जोत जलाकर देवी के सामने रखिये। आरती कीजिए। मन में गायत्री देवी का विचार कीजिए और मुख से गायत्री मन्त्र का उच्चारण कीजिए।

ध्यान—

गायत्री माता समस्त सुखों को देने वाली, समस्त शत्रुओं को नष्ट करने वाली तथा ग्रह पीड़ा, ज्वर रोग, गुह्यकादि दोष को दूर करने वाली है। सर्वव्यापक, चारों वेद जिन्होंने अपनी जिह्वा पर चढ़ाए हुए हैं, श्वेत मुख और सदा-सदैव आनन्द प्रदान करने वाली जगत् की माता हैं। ऐसी श्री गायत्री माता को नमस्कार हो। इस प्रकार का ध्यान साधक को करना चाहिये। ध्यान के पश्चात् साधक गायत्री माता को अपने मन मन्दिर में बिठाकर जप करना प्रारम्भ कर दे। जप मुंह से न करे बल्कि ध्यान श्री गायत्री जी के चरणों में रखे। इस विधि से जप करे। जब जप समाप्त हो जाये तब श्री सूर्य नारायण को अर्घ दे, और फिर नतमस्तक होकर और हाथ जोड़कर नमस्कार करे। पश्चात् श्री गायत्री माता के मन्दिर के आगे कपड़ा तान दे और उसके बाद अपने घर के काम काज में लग जाये।

जब जप पूर्ण-रूपेण सम्पूर्ण हो जाये तब अपने बनाये हुए श्री गायत्री माता के मन्दिर के सामने एक कुण्ड निर्माण करके 32 हजार गायत्री मन्त्र का हवन करे। हवन की सामग्री निम्नलिखित है—

हवन-द्रव्य निरूपण

(१) गुग्गुल	(२) घृत	(३) गेन्दा-पुष्प	(४) श्वेत सरसों
(५) लाल-चन्दन	(६) श्वेत-चन्दन	(७) फुलाही की लकड़ी	(८) मेवा
(९) खांड	(१०) नारियल	(११) कपूर	(१२) काली मिर्च
(१३) शहद	(१४) बालछड़	(१५) अगर	(१६) तगर

इन सब चीजों को लेकर बारीक कर ले और फिर घी में मिलाकर एक जगह रखदे और अपने पास रखकर हवन करे।

होम व्यवस्था—

हवन कुण्ड के ऊपर लाल रङ्ग की रेखा खींचकर उसे सुन्दर बना ले। फिर किसी ब्राह्मण से गणेश, ओंकार, गौरी, सूर्य, चन्द्रमा आदि की पूजा करवा कर हवन कुण्ड में लकड़ी रखकर, कपूर रख दे। और फिर "ओं अग्नये स्वाहा" यह मन्त्र पढ़कर एक आहुति डाले उसके बाद "इन्द्राय नमः" "देवाय नमः" "महादेवाय नमः" "वासुदेवाय नमः" इतनी आहुतियाँ डालकर फिर गायत्री मन्त्र पढ़कर "स्वाहा" शब्द कहकर आहुति डाले।

हवन की समाप्ति पर यह सारी सामग्री अग्नि में डालकर प्रार्थना करे। फिर ब्राह्मण को भोजन करवाकर दक्षिणा दे। फिर देवी से आज्ञा लेकर स्वयं भोजन करे।

केवल एक ही बार, विधिपूर्वक उपरोक्त जप करने से माता गायत्री देवी सिद्ध हो जाती हैं। और रात्रि को स्वप्न में आकर दर्शन देती हैं और वर देती हैं।

साधक यदि इस मन्त्र का दस बार जप करके किसी रोगी पर दम करे तो उसके समस्त रोग मिट जाते हैं।

इसके अतिरिक्त जब भी कोई काम करना हो, इस मन्त्र का जप करने से वह काम सुगमता पूर्वक हो जायेगा। साधक जिसके सामने जायेगा वह उसे देखकर प्रसन्न होगा और उसके साथ बड़े अच्छे ढंग से बातचीत करेगा। साधक जिस काम के बारे में सोचेगा वह काम शीघ्रातिशीघ्र हो जायेगा। किसी अधिकारी के सामने जाने पर, वह भी बड़े अच्छे ढंग से बातचीत करेगा।

साधक को, गायत्री देवी सिद्ध करने के पश्चात् किसी प्रकार का भय नहीं रहेगा : सब लोग उसका सम्मान करेंगे।

भूत-प्रेत दूर हों—

जिस स्थान में भूत-प्रेत पिशाच आदि आत्माओं का निवास हो, वहाँ प्रतिदिन गायत्री मन्त्र का जाप करके जल छिड़कने से प्रत्येक प्रकार के भूत आदि दूर हो जाते हैं।

मन्त्र सिद्ध करना—

जिस व्यक्ति ने मन्त्र आदि सिद्ध करना हो और वह दूसरों के आक्रमण से भी सुरक्षित रहना चाहता हो, तो उसको चाहिए कि पहले गायत्री मन्त्र पढ़कर एक रेखा खींच ले और उस रेखा के अन्दर बैठकर जप करे तब उसे किसी तरह के भूत आदि का भय न रहेगा।

11

देवी देवता सिद्धि

गुरुं श्रीगायत्रीं गजवदनमानन्दसदनं
कपीशं रुद्रांशं समुदितदिनेशाभसदृशम् ।
प्रणम्य स्वान्तेऽहं सकलजनप्रीत्यै हनुमतः
प्रकुर्वे मन्त्राढ्यां सरलमनुगां पद्धतिमिमाम् ।।

तत्राऽऽदौ साधको ब्राह्मे मुहूर्ते शयनादुत्थाय मानसिकस्नानं कुर्यात् ।

अपने गुरु, श्री गायत्री, आनन्दभवन श्रीगणपति, उदय होते हुए सूर्य की आभा के समान विशुद्ध रक्त वर्ण वाले श्री हनुमान जी को हृदय में प्रणाम करके मैं सब लोगों के कल्याणार्थ, पटल के अनुसार मन्त्रपूर्वक हनुमन्त पूजा पद्धति का निर्माण कर रहा हूं ।। १ ।।

साधक सर्वप्रथम ब्रह्ममुहूर्त में शयन से उठकर मानस में धारण किये हुए, शान्त, दिव्य वस्त्रों से सुशोभित, उत्तम गंधों से युक्त वामांग में विराजमान अपनी शक्ति को धारण किये हुए, मन्द मन्द स्मित वाले अपने गुरु का ध्यान करे, फिर आवाहनपूर्वक पंचोपचार से पूजन करे । पश्चात्—

ततः गुरूपदिष्टमार्गेण पादुकां गुरुत्रयमन्त्रांश्च दशधा त्रिधा च जपित्वा नमेत्

नमोऽस्तु गुरवे तस्मै स्वेष्टदेवस्वरूपिणे ।
यस्य वाक् सकलं हन्ति विषं संसारसंज्ञकम् ।। १ ।।
गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वरः ।
गुरुर्देवः परं ब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।२।।

अखण्ड-मण्डलाकारं व्याप्तं येन चराऽचरम् ।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ ३ ॥
अज्ञान-तिमिरान्धस्य ज्ञानाऽञ्जन-शलाकया ।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ ४ ॥

गुरु के उपदेशानुसार पादुका तथा गुरु के तीन मन्त्रों को दस बार, फिर तीन बार जप करके, निम्नलिखित श्लोकों से उनकी प्रार्थना करे—

अपनी इष्ट देवता स्वरूप हम उन गुरु को नमस्कार करते हैं जिनके दिए हुए उपदेशात्मक वाक्य संसार के समस्त विषयों का विनाश करते हैं।

गुरु ही ब्रह्मा है, गुरु ही विष्णु है, गुरु ही महेश्वर है तथा गुरु ही परब्रह्म है। उस गुरु को नमस्कार करता हूं।

जिसने ज्ञानांजनशलाका से अज्ञानरूपी अंधकार से अंधी आंखों में दिव्य दृष्टि प्रदान की उस श्रीगुरु को मैं नमस्कार करता हूं।

एभिः श्लोकैः प्रणम्य पुनः स्तुवति—
नमस्ते नाथ ! भगवन् ! शिवाय गुरुरूपिणे ।
विद्यावतारसंसिद्ध्यै स्वीकृताऽनेकविग्रह ॥ १ ॥
नवाय नवरूपाय परमार्थैकरूपिणे ।
सर्वाज्ञानतमोभेदभानवे चिद्घनाय ते ॥ २
स्वतन्त्रतायै भक्तानां भव्यानां भव्यरूपिणे
विवेकिनां विवेकाय विमर्शाय विमर्शिणाम् ।
प्रकाशिनां प्रकाशाय ज्ञानिनां ध्यानरूपिणे ॥ ३ ॥
इन श्लोकों से प्रणाम करे। फिर स्तुति करे—

हे नाथ ! हे भगवन् ! आपको नमस्कार है। आप गुरु के रूप में साक्षात् शिव हो। हे प्रभो ! आप विद्या के अवतार हो तथा सिद्धि के लिए आप अनेक स्वरूप धारण करते हो।

आप सदैव नूतन तथा नूतन रूप वाले हो, मुक्ति के तो मानो आप स्वरूप ही हो। सम्पूर्ण अज्ञान रूपी अंधकार को नष्ट करने के लिये आप सूर्य स्वरूप हो। आप साक्षात् चिद्घन हो।

आप स्वतन्त्र हैं, आपने संसारी प्राणियों पर दया करके शरीर धारण किया है। आप साक्षात् शिव हैं। आप भक्तों के परतन्त्र हैं और भव्यों में भव्य स्वरूप हैं।

आप विवेकियों में विवेक हैं और विचारशीलों में विचार हैं। प्रकाश करने वालों में प्रकाश हैं, तथा ज्ञानियों में ज्ञान हैं।

पुरस्तात् पार्श्वयोः पृष्ठे नमस्कुर्यादुपर्यधः।
सदा मच्चित्तभावेन विधेहि भवदासनम्।
त्वत्प्रसादादहं देव! कृतकृत्योस्मि सर्वतः।
मायामृत्युमहापाशाद् विमुक्तोऽस्मि शिवोऽस्म्यहम्॥
प्रातः प्रभृति सायान्तं सायादि-प्रातरन्ततः।
यत्करोमि जगन्नाथ! तदस्तु तव पूजनम्॥

इति क्षमाप्य ध्यायेत्—
मूलादि-ब्रह्मरन्ध्रान्तं सर्वतेजोमयीं पराम्।
कोटिसूर्य-प्रतीकाशां चन्द्रकोटिसुशीतलाम्॥

मैं अपने आगे-पीछे, पार्श्व-पृष्ठ, ऊपर-नीचे विराजमान आपको नमस्कार करता हूं। हे प्रभो! मेरे चित्त की भावना के अनुसार आप आसन ग्रहण करें॥

हे प्रभो! आपकी प्रसन्नता से मैं सफल मनोरथ हूं। तथा आपके प्रसाद से माया-मृत्यु के महापाश से विमुक्त हूं तथा साक्षात् शिवस्वरूप हूं॥

प्रातःकाल से सायंकाल तक तथा सायंकाल से प्रातःकाल तक हे जगन्नाथ! मैं जो भी कार्य करता हूं उसमें आपकी पूजा हो॥

इस प्रकार गुरु से क्षमा प्रार्थना कर, कुण्डलिनी का ध्यान करे, कुण्डलिनी का स्वरूप इस प्रकार है—

नाभिमूल से आरम्भ कर ब्रह्मरन्ध्र पर्यन्त, करोड़ों सूर्य के समान दिव्य तेज रूप तथा करोड़ों चन्द्रमा के समान सुशीतल होते हुए सूर्य के समान है॥

उद्यद्हिमकरधौतां यावच्छ्वासनासीनाम् ।।

इति ध्यात्वा तत्प्रभापटलव्याप्तं स्वदेहं विचिन्त्य, वक्ष्यमाणमूलमन्त्र-रूपादिकं करं षडङ्गं कृत्य ध्यात्वा, मानसोपचारैः सम्पूज्य मुद्राः प्रदर्श्य, विसृजेत् । ततः स्वगुरु-देवताऽऽत्मना तदैक्यं विभाव्य, देवं स्तुत्वा,

प्रातः प्रभृति सायान्ते सायादि प्रातरन्ततः ।।

इति निजकृत्यं समापयेत्

अथ सहजसिद्धं गुरूपदेशेन ज्ञात-जपाजप कुर्यात् । इसके उपरान्त

तेजस्विनी, साक्षात् परस्वरूपा कुण्डलिनी का ध्यान दृढ़ आसन से प्रत्येक श्वास में करे ।

इस प्रकार ध्यान कर कुण्डलिनी के तेज से मेरा शरीर व्याप्त है, ऐसी भावना कर आगे कहे जाने वाले मन्त्र से ऋष्यादि कर न्यास तथा अष्टांगन्यास कर ध्यान करे । फिर, मानसोपचार से कुण्डलिनी का पूजन कर, मुद्रा प्रदर्शित करे और मूल मन्त्र का दस हजार बार जप करे ।

फिर अपने गुरु तथा इष्ट देवता में एकता की भावना कर इष्ट देवता की स्तुति करे ।

स्तुति का स्वरूप इस प्रकार है ।

"हे प्रभो ! प्रातःकाल से सायंकालपर्यन्त तथा सायंकाल से प्रातःकाल पर्यन्त मैं जो भी कृत्य करता हूं उससे आपकी पूजा हो ।"

ऐसा कहकर अपना कृत्य भगवान को समर्पण करे । फिर गुरु के द्वारा उपदिष्ट सहज सिद्ध अजपाजप करे। उसका प्रकार अथवा विनियोग यह है—

ओं अस्य श्री अजपा-मन्त्रस्य हंस ऋषिः अव्यक्ता गायत्री छन्दः हंसो देवता, हं बीजम् सः शक्तिः सोऽहं कीलकं मोक्षार्थे जपे विनियोगः ।

ऋष्यादिकं कृत्वा हंसीं सूर्यात्मने अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ।

हंसीं सोमात्मने तर्जनीभ्यां स्वाहा ।। हंसीं निरञ्जनात्मने अनामिकाभ्यां

हुम् । हंसीं अनन्तात्मने करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् । एवं हृदयादिषु विन्यस्य, ओं भूर्भुवः स्वरोम् इति दिग्बन्धनं कृत्वा ध्यायेत् ।

विनियोग—इस अजपाजप रूप मन्त्र का "हंस" ऋषि है, अव्यक्त गायत्री छन्द है, "हंस" देवता है, "हं" बीज है, 'सः' शक्ति तथा "सोऽहं" कीलक है, मैं मोक्ष की इच्छा से इसका जप करता हूं । पश्चात् ऋष्यादिक न्यास करे । "हंसीं सोमात्मने अगुष्ठाभ्यां नमः" इस मन्त्र से दोनों अंगूठों का "हंसीं सोमात्मने तर्जनीभ्यां स्वाहा" इस मन्त्र से दोनों तर्जनियों का "हं खूं निरञ्जनात्मने अनामिकाभ्यां हुम्", इस मन्त्र से दोनों अनामिकाओं का हंसीं अव्यक्तात्मने कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्" इस मन्त्र से दोनों कनिष्ठिकाओं का तथा हंसः अनात्मने करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् इस मन्त्र से दोनों करतल तथा करपृष्ठों का स्पर्श करे । इसी प्रकार पूर्वोक्त मन्त्रों से क्रमशः हृदय, सिर, दोनों बाहु, दोनों नेत्र "अस्त्राय फट्" से चारों ओर थपोड़ी बजाता हुआ "ओं भूर्भुवः स्वरोम्, से अपने चारों ओर की रक्षा के लिए पीली सरसों का विकरण करता हुआ नीचे लिखे मन्त्रों से ध्यान करे ।

अग्नीषोमगुरुद्वयप्रणवकं विन्दुत्रिनेत्रोज्ज्वलं
भास्वद्रूपमुखं शिवाङ्घ्रियुगलं पार्श्वस्थसूर्यानिलम् ।
उद्यद्भास्करकोटि-कोटसदृश हंसं जगद्व्यापिनं
शब्दब्रह्ममयं हृदम्बुजपटे नीडे सदा संहरेत् ।।

इस प्रकार ध्यान करके

"ओं हं हंसः सोऽहं स्वाहा" "हंसहंसाय विद्महे सोऽहं हंसाय धीमहि । तन्नो हंसः प्रचोदयात्" इस मन्त्र का "ओं ह्रीं हंसः सोऽहं स्वाहा" इस आत्मा के आठ अक्षरों का तथा "हंसहंसाय" इत्यादि गायत्री का यथाशक्ति जप करके पूर्व दिन के जपाजप का निवेदन करे ।

फिर पूर्व दिन के समान प्रातःकाल सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक श्वासोच्छ्वासरूप से श्वासोच्छ्वासरूपेणास पादाधिकमेकविंशत्सहस्रकं जपन् तत्तद्देवताभ्यो निवेदयिष्ये ।" इति सङ्कल्पं समर्पयेत् ।

व-श-ष-स दलयुक्ते सम्यगाधारपद्मे
तरुणमरुणवर्णं वारुणास्यं दिनेशम् ।
अभय- वरदहस्तं चारुपाशाङ्कुशाढ्यं
करयुगलमनन्यं चिन्तयेद् विघ्नराजम् ॥ १ ॥

इति ध्यात्वा,

सम्पूज्य वं नमः हंसः सोऽहं, शं नमः हंसः सोऽहं, षं नमः हंसः सोऽहं, सं नमः हंसः सोऽहं, पूर्वदिनकृतमजपाजपमाधारपटलस्थितगणपतयेऽहं

इति समर्प्य

२१६०० जप का तद् तद् देवता को निवेदन करने का संकल्प कर, उस दिन के कुल २१६०० श्वास रूप मन्त्र का निवेदन करे।

आधार पद्म के "व श ष स" रूप दल पर अत्यन्त रक्त वर्ण वाले हाथी के समान मुख वाले, दो नेत्र वाले अभय तथा वर रूप में दोनों हाथों में सुन्दर पाश तथा अंकुश को धारण करने वाले विघ्नराज गणेश का ध्यान करे॥ १ ॥

इस प्रकार गणेश का ध्यान करके मानसोपचार से विघ्नराज गणेश का पूजन करे। "वं नमः हंसः सोऽहं वं नमः हंसः सोऽहं" इस प्रकार दिन के पूर्व भाग में किये हुए अजपाजप को आधार पटल में स्थित गणपति को निवेदन करता हूं। ऐसा कहकर निवेदन करे। तदनन्तर

ब भ-म-य-र-ल संज्ञैरक्षरैर्दीप्तिपद्मे
सरुचिरतरवेषं चिन्तयेत् पद्मयोनिम् ।
अभयवरदहस्तं चारु रम्याऽक्षमाला-
विकासितकरपद्मं सृष्टिकृद्विश्वमूर्तिम् ॥ २ ॥

इस प्रकार अपने हृदय स्थान पर ब्रह्मा का ध्यान कर मानसोपचार से उनका पूजन करे "बं नमः हंसः सोऽहं" से लेकर "लं नमः हंसः सोऽहं" तक दिन के पूर्व भाग में छह हजार (६०००) अजपा का जप करे। फिर 'स्वाधिष्ठान स्थित ब्रह्मणेऽहं षट्सहस्रम् अजपाजपं निवेदयामि, कहकर जप का निवेदन करे—

"ड" अक्षर से आरम्भ कर "फ" अक्षर पर्यन्त दलों से निर्मित पटल पर बैठे हुए श्री हरि का ध्यान करे, जिनका शरीर सूर्य के समान देदीप्यमान हो रहा है, जो अज शरीर पुरुष तथा नारायण रूप से विख्यात हैं, जो लक्ष्मी से युक्त हैं, तथा जिनके हाथ में शंख, चक्र, गदा है।

हस्ताम्भोजगदादिशङ्खममलं पीताम्बरं कौस्तुभ-
ग्रैवेयाङ्गद-लाट- नूपुरयुतं नाभौ मुदा चिन्तयेत् ।। ३ ।।

इति नाभौ विष्णुं ध्यात्वा, हंसं मानसोपचारैः सम्पूज्य "ढं नमः हंसः सोऽहं, ढं नमः हंसः सोऽहं" इत्यादि "फं नमः सोऽहम्" इत्यन्तं पूर्वदिनकृत-षट्सहस्रमजपाजपं मणिपूरस्थविष्णवेऽहं निवेदयामि इति समर्प्य ।

वागोष्ठान्तगतैः प्रकल्पितदले पद्मे निविष्टं शिवम्
एकं नामकमण्डलप्ररुचिरं त्र्यक्षं कपर्दोज्ज्वलम् ।
शान्तं टङ्कामृगमदयुतैर्युक्तं करैः सर्वतः
ग्रैवेयाऽङ्गदहारनूपुरयुतं चर्माम्बरं चिन्तयेत् ॥ ४ ॥

जिनके हाथ में कमल, गदा, शंख विराज रहे हैं, जो शुद्ध पीताम्बर कौस्तुभ ग्रैवेय भुजापट, हार तथा नूपर को धारण किये हुए हैं, इस प्रकार के स्वरूप वाले भगवान् विष्णु को नाभि स्थान में ध्यान करना चाहिये ॥ ३ ॥

इस प्रकार नाभि-स्थान से विष्णु का ध्यान करके मानसोपचार से उनकी पूजा करे। फिर "डं नमः हंसः सोऽहं" इत्यादि क्रम से "फं नमः हंसः सोऽहम्" पर्यन्त दिन के पूर्व भाग में किये गये छः हजार (६०००) अजपाजप को "मणिपूरस्थविष्णवेऽहं निवेदयामि" कहकर विष्णु को निवेदन करे। फिर "क" से लेकर "ठ" तक के अक्षर रूप दलों से बने हुए कमल दल पर बैठे हुए शिव का ध्यान करे जो शरत् पूर्ण चन्द्रमा की कान्ति के समान देदीप्यमान हैं, जिनके तीन नेत्र हैं, जो जटाजूट से सुशोभित हैं, जिनका स्वरूप अतिशान्त है, जो हाथों में टंक, मृगमद तथा अभयमुद्रा को धारण किये हुए हैं। इस प्रकार शिव स्वरूप का हृदयस्थान में ध्यान करे।

इति हृदि शिवं ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य "कं नमः हंसः सोऽहम्" इत्यन्तमुच्चार्य पूर्वदिनकृत-षट्सहस्र मजपाजपमनाहतस्थितशम्भवेऽहं निवेदयामि इति समर्प्य

प्रत्यङ्गानुनिविष्टमङ्गरहितं व्याप्तं जगत्कारणं
सूक्ष्मात्सूक्ष्मतरं गुणाऽगुणमयं वैराग्यसम्मिश्रितम् ।
साक्षात्षोडशवर्णपत्रकमले जीवं पर चिन्तयेत् ॥ ५ ॥
इति कण्ठे जीवं ध्यात्वा, मानसोपचारैः सम्पूज्य "अं नमः हंसः
सोऽहम्," इत्यादि "अः नमः हंसः सोऽहम्," इत्युक्त्वा ॥ ४ ॥

पश्चात्, मानसोपचार से उनका पूजन करे, फिर "कं नमः हंसः सोऽहम्" से आरम्भ कर "ठं नमः हंसः सोऽहं" पर्यन्त अक्षरों के द्वारा पूर्व दिन में किये गये ६००० संख्यक अजपाजप को 'अनाहतस्थितशम्भवेऽहं निवेदयामि" कहकर समर्पित करे । तदनन्तर ।

"अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, लृ लॄ ए ऐ ओ, औ, अं, अः इन षोडश वर्ण रूप दलों से बने हुए कमल पर निराकार रूप से विराजमान जगत् में व्याप्त हो कर भी जगत् के कारण स्वरूप, सूक्ष्म से भी सूक्ष्मतम, वैराग्य मिश्रित सगुण तथा निर्गुण स्वरूप मूर्त एवं अमूर्तस्वरूप, स्वच्छ ज्योति से जगमगाते हुए जीव का ध्यान करना चाहिये ।

इस प्रकार कण्ठ-स्थान पर जीव का ध्यान करता हुआ "अं नमः हंसः सोऽहम्" से आरम्भ कर "अः नमः"

पूर्वदिनकृत-सहस्रमजपाजपं विशुद्धस्थितिजीवायाऽहं निवेदयामि इति पठित्वा, समर्पयेत् ।

हक्षाभ्या परिक्लृप्त-पत्ररचिते पद्मं जगत्कारणं
विश्वोत्तीर्णमनेक-देहनिलयं विद्युद्विलासं पदम् ।
तत्तद्योग्यतया स्वदेशिकतनुं सम्प्राप्तरूपं परं
प्रत्यक्षरविग्रहगुरुपदं ध्यायेत् परं दैवतम् ॥ ६ ॥

इति भ्रूमध्ये श्रीगुरुपदं ध्यात्वा, मानसोपचारैः सम्पूज्य नमः हंसः सोऽहं क्षं नमः हंसः सोऽहम् पूर्वदिनकृत-सहस्रमजपाजपमाज्ञाचक्रस्थगुरवेऽह निवेदयामि इति समर्प्य ।

हंसः सोऽहं पर्यन्त अक्षरों से किये गये एवं पूर्व दिन कृत १००० संख्याक अजपाजप को "विश्वस्थित- जीवायाऽहं निवेदयामि" कह कर जीव स्वरूप परमात्मा को निवेदित करे । तदनन्तर—

"ह" से लेकर "क्ष" पर्यन्त अक्षर-रूप दलों से बने हुए कमल पर विराजमान परब्रह्मस्वरूप गुरु का ध्यान करे, जिनका विग्रह प्रत्यक्ष अक्षर स्वरूप है, तथा जो अनेक शरीरों से जगत् में व्याप्त हैं, जिनके शरीर की कान्ति विद्युत् के समान जगमगा रही है, मन्त्र की तत्तद् योग्यता से जो साक्षात् परमेश्वर स्वरूप हैं ।। ६ ।।

इस प्रकार भ्रू के मध्य श्रीगुरु का ध्यान करे और मानसोपचार से पूजन कर, "हं नमः हंसः सोऽहं सः" "क्षं नमः हंसः सोऽहं" पर्यन्त अक्षरों से किये हुए अजपाजप को 'आज्ञाचक्रस्थगुरवेऽहं निवेदयामि" कहकर निवेदन करे । तदनन्तर

विश्वस्यादिमनादिमेककमलं नित्यं परं निष्कलं
नित्योद्बुद्धप्रशस्तनैकयुतिभिः संवित्स्फुरद्देहिनम् ।
स्मृत्वाऽऽत्मानमनेक-विश्वनिलयं स्वच्छं जगत्सर्वतः ।

इति ब्रह्मरन्ध्रे परमात्मानं ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य 'अं नमः हंसः सोऽहम्" इत्यादि 'क्षं नमः हंसः सोऽहम्" इत्यंतम् आदाक्षिण्येन विन्यस्य "पूर्वदिन-कृतसहस्रमजपाजपं ब्रह्मरन्ध्रस्थितपरमात्मनेऽहं निवेदयामि" इति समर्प्य ध्यायेत् —

हंसो गणेशो विधिरेव हंसो
हंसो हरिर्हंसमयश्च शम्भुः ।
हंसो हि जातो गुरुदेवहंसो
हंसो ममाऽऽत्मा परमात्महंसः ।।

फिर सहस्रदल के कमल पर प्रणव से युक्त आत्मा का ध्यान करे, जो विश्व का आदि किन्तु स्वयं अनादि है, जो एक स्वच्छ नित्य मायारहित है।

जो जाग्रत, स्वप्न तथा सुषुप्ति से परे है, तुरीयावस्था में विद्यमान है, जो नित्यानन्द स्वरूप मुनियों के जानने के योग्य तथा अन्तःकरण में स्फुरित हो रहा है, जो जगत् में बाहर और भीतर विराजमान है ॥

इस प्रकार ब्रह्मरन्ध्र में परमात्मा का ध्यान करके मानसोपचार से उनका पूजन करे।

“ओं नमः हंसः सोऽहं” पर्यन्त तक किये गये जप को दायें से न्यास कर दिन के पूर्व भाग में—

“ब्रह्मरन्ध्रस्थितपरमात्मनेऽहं निवेदयामि” कहकर समर्पित करे। फिर निम्न प्रकार से ध्यान करे---

गणेश हंस है, ब्रह्मा हंस है, श्रीहरि हंस है, शम्भु हंस है, जाति भी हंस है, गुरु भी हंस है, यह हमारी आत्मा भी हंस है ॥

देहो देवालयः प्रोक्तः जीवो नाम सदाशिवः ।

त्यजेदज्ञाननिर्माल्यं सोऽहंभावेन पूजयेत् ॥

इति ध्यात्वा जीवात्मपरमात्मनोरैक्यं विभाव्य, सङ्कल्पं कुर्यात्। ओं अद्य सूर्योदयादारभ्य श्वः सूर्योदयपर्यन्तं जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिषु नासापुटनिःश्वासोच्छ्वासाभ्यां सोऽहंरूपाभ्यां षट्शतोत्तरमेकविंशसहस्रसंख्याऽजपागायत्रीमन्त्र जपमहं करिष्ये इति संकल्प्य देवं प्रार्थयेत।

त्रैलोक्यचैतन्य आदिदेव

कपीश शम्भो! भवदाज्ञयैव।

प्रातः समुत्थाय तव प्रियार्थं

संसारयात्रामनुवर्तयिष्ये ॥

यह शरीर मन्दिर है तथा इसमें निवास करने वाला जीव सदाशिव स्वरूप है। इसलिए इनकी पूजा में अज्ञान स्वरूप निर्माल्य का मैं त्याग करता हूँ। केवल “सोऽहं” भावना से पूजा करनी चाहिए ॥

इस प्रकार ध्यान करके जीवात्मा तथा परमात्मा की एकता का ध्यान करता हुआ नीचे लिखा हुआ संकल्प करे। देशकाल का संकीर्तन करे। आज के सूर्योदय से आरम्भ करके कल सूर्योदय पर्यन्त जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति अवस्था में नासापुट के श्वास तथा उच्छ्वास से निकले हुए सोऽहं रूप मन्त्र का २१६०० संख्या में अजपाजप गायत्री का जप करूँगा इस प्रकार संकल्प कर निर्विघ्नता के लिए देवता की प्रार्थना करे।

हे त्रैलोक्यचैतन्यमय ! हे आदिदेव ! हे कपीश ! हे शम्भो ! आपकी आज्ञा से प्रातःकाल उठकर संसार यात्रा के लिये कार्य रहा हूं ॥१०॥

अहं देवो न चाऽन्योऽस्मि ब्रह्मैवाऽहं न शोकभाक् ।
सच्चिदानन्दरूपोऽहमात्मानमिति भावयेत् ॥११॥
संसारयात्रामनुवर्तमानं त्वदाज्ञया श्रीहनुमन्महेश ।
स्पर्द्धातिरस्कारकलिप्रमादभयानि मा माऽभिभवन्तु तात ॥१२॥
जानामि धर्मं न च मे प्रवृत्तिर्जानाम्यधर्मं न च मे निवृत्तिः ।
त्वया जगत्प्राणहृदि स्थितेन यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि ॥१३॥
इति देवं प्रार्थ्य बहिर्गमनार्थं महीं ध्यायेत् ।
समुद्रकाञ्चीसम्भूषे पर्वतस्तनमण्डले ।
विष्णुपत्नि ! नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे ॥१४॥

मैं ही देव हूं और कुछ दूसरा नहीं हूं। मैं ही परब्रह्म हूं। मुझे किसी प्रकार का शोक नहीं है। मैं ही सच्चिदानन्द स्वरूप हूं। इस प्रकार ध्यान करे ॥१५॥ हे हनुमान् ! हे महेश ! संसार में अपने निर्वाह के लिए काम करने वाले मुझ को, आपकी आज्ञा से स्पर्धा, तिरस्कार, कलह, प्रमाद तथा भय के द्वारा कोई अनादर प्राप्त न हो ॥१५॥

मैं धर्म को जानता हूँ, पर मेरी उसमें प्रवृत्ति नहीं है, मैं पाप को जानता हूँ पर उससे अब मेरा छुटकारा नहीं हो पाता। अतः हे जगत्प्राण ! मेरे हृदय में बैठ कर आप जैसी आज्ञा देते हैं, वैसा ही कर रहा हूँ ॥१६॥

इसी प्रकार देवता की प्रार्थना कर बाहर जाने के लिए पृथ्वी की प्रार्थना करे। आप समुद्ररूप मेखला तथा पर्वतरूप स्तनमण्डल से विराजमान है। विष्णु पत्नि ! मैं तुम्हें नमस्कार करता हूं। तुम मेरे द्वारा किये गये चरण स्पर्श को क्षमा करो ॥१४॥

इति प्रार्थ्य "ऐं" इत्युत्थाय करे जलपात्रमादाय, नगराद् बहिः शौचादिकं कर्तुं त्रिवारं, देवं च स्मरन् गच्छेत् ॥

इति प्रातःकृत्यं समाप्तम् ॥

तत्र गत्वा जलपात्रं स्वनैर्ऋत्ये संस्थाप्य भूतसङ्घान् प्रार्थयेत्—

गच्छन्तु पितरो देवा ऋषयो यक्षराक्षसाः ।

भूतप्रेतपिशाचाद्याः करिष्ये मलमोचनम् ॥१॥

इति प्रार्थ्य "ल" धृति—

प्रादेशमात्रं भूतलं सम्मृज्य दक्षिणकर्णोपवीती वसनवेष्टितमस्तको दिवा प्राङ्मुखो वोदङ्मुखो रात्री च दक्षिणदिङ्मुखो मौनी तत्रोपविश्य "क्रो" इतिमध्यातर्जनीभ्यां

ऐसी प्रार्थना कर "ऐं" इस मन्त्र का उच्चारण कर जलपात्र लेकर गांव से बाहर, शौच करने के लिये, तीन बार अपनी इष्ट देवता का स्मरण करते हुए जाये ।

इस प्रकार प्रातःकाल का कृत्य समाप्त ।

शौच के लिये नगर से बाहर अकृष्ट भूमि में जाकर नैर्ऋत्य दिशा में जल को रखकर भूत संघों की प्रार्थना करे ।

पितर, देवता, ऋषि, यक्ष, राक्षस, भूत, प्रेत आदि इस स्थान से दूर चले जायें, क्योंकि मैं यहाँ मलमोचन करूंगा ॥१॥

इस प्रकार प्रार्थना कर 'ल' इस मन्त्र को पढ़कर प्रादेशमात्र भूमि को स्वच्छ करे । दाहिने कान पर जनेऊ को चढ़ाये । वस्त्र से अपने शरीर को ढककर दिन में पूर्वमुख होकर अथवा उत्तराभिमुख होकर, रात्रि में दक्षिणाभिमुख मौन होकर शौच के लिये बैठे ।

क्रीं इति लिंगं धृत्वा ओं ह्लीं कपालिन्यै नमः इति मूत्रं विसृज्य ओं ह्लीं रक्तचामुण्डायै नमः इति मलं विसृजेत् ।

वं इति जलेन बहुमृदा च लिङ्गगुदे

प्रक्षाल्य "ऐं क्लीं श्रीं'

इति करौ पादौ च प्रक्षाल्य ह्रीं क्लीं ह्रीं इति पुनः करौ प्रक्षाल्य दन्तधावनं कुर्यात् ।

दन्त धावन विधि

चम्पाऽऽम्र-जम्बू-अपामार्गाणामेकतमं वृक्षं प्रार्थयेत्।
आयुर्बलं यशो वर्चः प्रजाः पशून् वसूनि च।
श्रियं प्रज्ञां च मेधां च त्वन्नो देहि वनस्पते॥

इति प्रार्थ्य अष्टौ दश द्वादशाङ्गुलं वा विहित वृक्षशास्त्रोक्तदन्तकाष्ठं गृहीत्वा, "क्लीं" कामदेवाय सर्वजनप्रियाय नमः।

इस मन्त्र से मध्यम तर्जनी उंगलियों के द्वारा लिंग को पकड़कर "ओं कपालिन्यै नमः" इस मन्त्र से मूत्र का तथा ओं रक्तचामुण्डायै नमः इस मन्त्र से जल तथा मिट्टी के द्वारा गन्धक्षय पर्यन्त लिंग और गुदा का प्रक्षालन करे। फिर "ऐं क्लीं श्रीं" इस मन्त्र से दोनों हाथों और पैरों का तथा "ह्रीं क्लीं ह्रीं" इस मन्त्र से पुनः हाथ का प्रक्षालन करे और दांतुन के लिये चम्पा, आम, जामुन तथा अपामार्ग में से किसी वृक्ष की प्रार्थना करे

"हे वनस्पते! आप मुझे आयु, बल, यश, तेज, संतति, पशु, धन, धान्य, श्री, मेधा तथा प्रज्ञा प्रदान करें॥

इस प्रकार प्रार्थना कर आठ दस या बारह उंगल की दांतुन के लिये शास्त्र में विहित वृक्ष की शाखा से दांतुन काट ले। फिर "क्लीं" कामदेवाय सर्वजनप्रियाय नमः।

दशनैः संशोध्य "क्लीं" इति जिह्वामुल्लिख्य दन्तकाष्ठं प्रक्षालयेत्। ततः करौ प्रक्षाल्य देवं स्मरन् मुखं प्रक्षालयेत्। इति दन्तधावन-विधिः।

ततो गुरुमन्त्रं स्मरन् योगमन्दिरे सम्मार्जनादिकं कृत्वा मंगलारार्तिकं विधाय, निर्माल्यमस्तार्थं देवगुणकर्मादिकं स्मरन् स्नातुं नदीं गच्छेत्। तत्र गत्वा "ॐ" इति वारि प्रोक्ष्य स्नानोपस्करं संस्थाप्य, तर्जन्यां स्वर्णरजत-निर्मितां मुद्रिकां कुशमयीं वा धृत्वा गंगेशं च नत्वा अन्तःस्नानं कुर्यात्। शिरसि सहस्रदल, कमल, कर्णिकायां विराजमानं कोटिसूर्यप्रतीकाशं निजविविधभूषण-विभूषितविग्रहं वराऽभयकराऽम्बुजं श्रीगुरुं ध्यायेत्॥

इस मन्त्र से दान्तों को शुद्ध करे। पश्चात् क्लीं इस मन्त्र से जिह्वा

को साफ कर दन्तुअन के छिलकों को धोकर शुद्ध स्थान में फेंक दें। तदनन्तर हाथ धोकर इष्ट देवता का स्मरण करता हुआ मुख का प्रक्षालन करे।

दन्तधावनविधि समाप्त।

स्नानविधि

तत्पश्चात् श्री हनुमान जी का स्मरण करता हुआ यज्ञ भूमि को लीपे और मंगल आरती करे। फिर श्री हनुमान जी के ज्ञान आदि गुण तथा अतुलित बलधाम आदि पराक्रम का स्मरण करता हुआ स्नान के लिये नदी में जाये। वहां जाकर "फट्" इस मन्त्र से तट को शुद्ध करे और वहां पर स्नान की समस्त सामग्री धोती, कमण्डलु आदि को रखे और तर्जनी उंगली में सोने, चांदी अथवा कुशा की अंगूठी धारण करे एवं गणेश जी का स्मरण करके सर्वप्रथम मानसिक स्नान करे। सिर पर सहस्रदल कमल में करोड़ों सूर्यों के समान देदीप्यमान निज विविध आभूषणों से युक्त कर तथा अभयमुद्रा हाथों में धारण किये हुए श्री गुरु को स्मरण करे।

ध्यात्वा तच्चरणविगलिताऽमृत-धारया-ऽन्तर्गतं मलं प्रक्षाल्य, विशुद्धान्तः करणो बहिःस्नानं कुर्यात्। नाभिमात्रोदकं गत्वा पुरतो हस्तमात्रं तीर्थं कल्प्य आचम्य प्राणानायम्य।

"क्रों" इत्यङ्कुशमुद्रया तीर्थान्याकर्षयेत्।

ब्रह्माण्डोदरतीर्थानि करैः संस्पृष्टानि ते रवे।
तेन सत्येन सकलं तीर्थं देहि दिवाकर॥

गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु॥

उनके चरण से निकले हुए अमृत की धारा से अपने समस्त पापों को दूर करने की भावना से अन्तःकरण के पापों को दूर करके पश्चात् बाहरी स्नान करे। नाभिमात्र जल में जाकर अपने चारों ओर एक हाथ तीर्थ कल्पना करता हुआ आचमन करे। फिर प्राणायाम करे। "क्रों" इस मन्त्र से अंकुश मुद्रा को बनाकर तीर्थों का आह्वान करे।

हे रवे! इस ब्रह्माण्ड के भीतर रहने वाले समस्त तीर्थ तुम्हारी किरणों से

पुष्ट हैं। अतः हे दिवाकर ! इस सत्य से इस जल में समस्त तीर्थ मुझे प्रदान करो ॥

हे गंगे ! हे यमुने ! हे गोदावरि ! हे सरस्वति ! हे नर्मदे ! हे सिन्धो हे कावेरि ! इस जल में आपका सन्निधान हो ॥

आवाहयामि त्वां देवि ! स्नानार्थमत्र सुन्दरि ।

एहि गंगे ! नमस्तुभ्यं सर्वतीर्थसमन्विते ॥

इत्यावाह्य "व" इति तीर्थान् तज्जले संयोज्य, रव्यग्नीन्द्रमण्डलानि तत्र सञ्चिन्त्य "व" इति द्वादशधाऽभिमन्त्र्य धेनुमुद्रया मुद्रीकृत्य, मत्स्येनाच्छाद्य "हुं" इत्यवगुण्ठ्य चक्रेण संरक्ष्य "फट्" इति छोटिकया दशदिग्बंधनं कृत्वा मूलेनैकादशधाऽभिमन्त्र्य जलं नमेत् ।

हे समस्त तीर्थों से संयुक्त सुन्दरी गंगा देवी ! मैं तुम्हें नमस्कार करता हूं। इस जल में हम तुम्हारा आह्वान करते हैं ॥

इस प्रकार जल में तीर्थों का आह्वान करके "व" इस मन्त्र से उन तीर्थों को जल में मिलाये। सूर्य, अग्नि तथा चन्द्रमण्डल के तेज का ध्यान करता हूं। "व" इस मन्त्र से बारह बार जल अभिमन्त्रित करे। धेनुमुद्रा से अमृततुल्य बनाकर तथा मत्स्य "मुद्रा" को आच्छादित कर "हूं" इस मन्त्र से उसे अवगुण्ठित करके चक्रमुद्रा से उस जल की रक्षा करता हुआ "फट्" इस मन्त्र से छींटों द्वारा दस दिशाओं की रक्षा करे। फिर मूल मुद्रा से ग्यारह अथवा बारह बार जल को अभिमन्त्रित करके उसे प्रणाम करे।

ततो जलं पूर्वोक्तविधिना प्रक्षिप्य चतुष्कोणं वक्ष्यमाणं विचिन्त्य, बिन्दौ हनुमन्तं ध्यात्वा, षडङ्गमन्त्रैः पञ्चोपचारैः सम्पूज्य मूलेन कुम्भमुद्रया शिरसि तोयं त्रिः प्रक्षिप्य ओं स्वाहा इत्याचामेत्। ततः सप्तरन्ध्राणि संरुन्धयन् त्रिर्निमज्ज्य देवं मनसि स्मरन् "हिरण्यशृङ्गम्" इत्यादिवैदिकमन्त्रैस्तान्त्रिकमन्त्रैश्च स्वदेहमभिषिञ्चेद् यथा—

हिरण्यशृङ्गं वरुणं प्रपद्ये तीर्थं मे देहि याचितः ।

तदनन्तर जल में पूर्वोक्त कर्म से उसके चारों ओर हनूमत् मन्त्र का ध्यान करता हुआ, बिन्दु में हनुमान् का ध्यान करता हुआ, षडङ्ग मन्त्रों से पञ्चोपचार

द्वारा उस जल का पूजन करे। मूल मन्त्र से कुम्भ के द्वारा सिर पर तीन बार जल छिड़ककर "ग्रों ह्रीं स्वाहा" इस मन्त्र से उस जल द्वारा आचमन करे। पश्चात् शरीर के सात छिद्र—दो कान, दो नेत्र, दो नासिका पुट तथा मुख को धोता हुआ तीन बार जल में डुबकी लगाये। फिर इष्ट देवता श्री हनुमान् जी का स्मरण करता हुआ "हिरण्यशृङ्गम्" इत्यादि वैदिक तथा तान्त्रिक मन्त्रों से अपने शरीर पर जल छोड़े।

वह इस प्रकार है—

मैं हिरण्यशृङ्ग वरुण की शरण में हूं। मैं वरुण, मैं आप समस्त तीर्थों की याचना कर रहा हूं। आप मुझे समस्त तीर्थ प्रदान करें।

यन्मयाऽऽत्तं प्रसाधूनां पापेभ्यश्च प्रतिग्रहः ।।
यन्मया मनसा वाचा कर्मणा वाऽघः कृतम् ।
तन्म इन्द्रो वरुणो बृहस्पतिः सविता च पुनन्तु पुनः पुनः ।।
इयं मे गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या ।
असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयाऽऽर्जीकीये शृणुह्या सुषोमया ।।
आधारा सर्वभूतानां विष्णोर्जाताश्च तेजसा
तद्रूपाश्च ततो जाता आपस्ताः प्रणमाम्यहम् ।।७।।
सिसृक्षोर्निखिलं विश्वं ग्रहः शुक्रं प्रजापतेः ।
मातरः सर्वभूतानामापो देव्यः पुनन्तु माम् ।।८।।
अलक्ष्मीमजरूपा या सर्वभूतेषु संस्थिता ।
क्षालयन्ति निजस्पर्शात्सर्वा देव्यः पुनन्तु माम् ।।

जो मैंने साधुजनों को दान किया है अथवा पापियों से प्रतिग्रह लिया है अथवा उनका मन वचन और कर्म से जो पाप किया है, मेरे उन पापों को इन्द्र, वरुण, बृहस्पति और सविता नष्ट कर पवित्र करें।।

जो समस्त प्राणियों का आधार है, तथा जिसकी उत्पत्ति अत्यन्त तेजस्वी श्री विष्णु से हुई है उस जल को मैं प्रणाम करता हूं।।

विश्व की सृष्टि करने वाले भगवान् प्रजापति का शुक्र जिसमें पड़ा है, तथा जो समस्त प्राणियों का पालन करने के कारण मातृस्वरूप है उस जल की अधिष्ठात्री देवी को मैं प्रणाम करता हूं।।

जो समस्त प्राणियों के भीतर रहने वाली मलरूप अलक्ष्मी का स्पर्श मात्र से ही विनाश कर उन्हें पवित्र करते हैं उस जल की अधिष्ठात्री देवी को मैं नमस्कार करता हूँ ।।६।।

यन्मे केशेषु दौर्भाग्यं सीमन्ते यच्च मूर्द्धनि ।
ललाटे कर्णयोरक्ष्णोरपस्तदघ्नन्तु वो नमः ।।
आयुरारोग्यमैश्वर्यमरिपक्षक्षयं सुखम् ।
सन्तोषः शान्तिरास्तिक्यं विद्या भवतु ते नमः ।।

एभिर्मन्त्रैर्जलेन चाऽभिषिच्य 'देवांस्तर्पयामि, ऋषींस्तर्पयामि, पितॄंस्तर्पयामि ।'' इति सन्तर्प्य वस्त्रं सम्पीड्य, क्षालयित्वा, तीरमागत्य भूतादिभ्योऽञ्जलित्रयं दद्यात् ।

असुरा भूतवेतालाः कूष्माण्डा ब्रह्मराक्षसाः ।
ते सर्वे तृप्तिमायान्तु मया दत्तेन वारिणा ।।

इति दत्वा मूलेन प्रोक्षिते धौते वाससी परिधायाऽऽचामेत इति स्नानविधिः ।

मेरे केशों के विन्यास स्थान शिर, ललाट, कान, तथा नेत्रों में जो पाप स्थित है, उसे हे जल की अधिष्ठातृ देवता नष्ट करो ।।

हे जल ! मैं तुम्हें नमस्कार करता हूं। आप मुझे आयु, आरोग्य, ऐश्वर्य, शत्रुपक्ष का नाश, सुख, सन्तोष, शान्ति, आस्तिक्य तथा विद्या प्रदान करें ।।

इन मन्त्रों से तथा मूल मन्त्र से "देवांस्तर्पयामि । ऋषींस्तर्पयामि, पितॄंस्तर्पयामि" इन मन्त्रों से देवता, ऋषि तथा पितरों का तर्पण करे। उसे धोकर तट प्रदेश में आकर भूत वेताल, कूष्माण्ड तथा ब्रह्मराक्षस मेरे दिये गये जल द्वारा तृप्त हों ।।

इस प्रकार मन्त्र को पढ़कर तीन अंजलि जल देकर मूल मन्त्र से धोती का प्रोक्षण कर धोती तथा अंगोछा धारण करे। फिर आचमन करे।

—: ० :—

धार्मिक साहित्य

श्रीमद् भगवद् गीता (भाषा)

श्रीगीता जी का हिन्दी भाषा में बहुत ही सुन्दर सरल अनुवाद। प्रत्येक स्त्री, बच्चे, पुरुष के लिए बड़ी अच्छी और रोजाना पाठ करने के लिए उपयोगी है। मूल्य सादा जिल्द15/- रु०। कपड़ा जिल्द 20/- रु० उर्दू भाषा में भी प्राप्त है।

श्री प्रेम सागर

इस ग्रन्थ में भी श्री कृष्ण जी के चरित्र का आदि से लेकर अन्त तक वर्णन किया गया है : भगवान श्रीकृष्ण के बचपन की रोचक बातें, युवावस्था और उनके मरण तक की सब बातों का हाल है। इस ग्रन्थ में श्रीमद्भागवद् के दशम स्कन्ध का वर्णन है। मूल्य केवल 20 रुपये।

महाभारत भाषा (अठारह पर्व)

महाभारत की घटनाओं को कौन नहीं जानता। इस ग्रन्थ में महाभारत का सम्पूर्ण हाल सरल हिन्दी भाषा में दिया गया है। इसमें पांडवों का जन्म से लेकर उनके हिमालय में गलने तक का पूरा हाल है।
मूल्य केवल 70 रुपये।

गोस्वामी तुलसीदासकृत रामायण (भाषा टीका सहित आठ काण्ड)

इस ग्रन्थ में दोहे व चौपाइयों का ऐसा सरल अर्थ दिया गया है कि साधारण से साधारण पढ़ा-लिखा मनुष्य भी सुगमता से भगवान राम की कथा के तत्व को समझ सकेगा। इस ग्रन्थ का प्रत्येक हिन्दू परिवार में होना आवश्यक है। मजबूत जिल्द बड़ी 80 रुपये।

न्यू स्टैण्डर्ड पब्लिकेशन्स (G) 1813, चन्द्रावल रोड, दिल्ली-7

चाणक्य नीति

मध्य युग के महान राजनीतिज्ञ आचार्य चाणक्य का नाम कौन नहीं जानता ? अल्प शक्ति होते हुए भी उन्होंने किस प्रकार प्रबल शत्रु पर सफलता प्राप्त की, यह जानना आज के युग में अत्यन्त ही आवश्यक है।

"शठे शाठ्यं समाचरेत् की नीति के मूर्त रूप आचार्य चाणक्य की नीतियाँ मानना प्रत्येक शठ विरोधी का कर्त्तव्य है। मूल्य 5/- रुपये।

श्री वाल्मीकि रामायण भाषा

इस ग्रन्थ में मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीराम की शिक्षाप्रद सम्पूर्ण कथा मोटे अक्षरों में सुन्दर छापी गई है। पुस्तक में अनेकों सुन्दर चित्र दिये गये हैं। आवरण चित्र अति सुन्दर हैं। जिस पर भी सजिल्द ग्रन्थ का मूल्य 80 रुपये ! डाक व्यय माफ

श्री राधेश्याम रामायण

हमने इस धर्म ग्रन्थ को मधुर गायन और सरल कविता में लिखकर प्रकाशित किया है। पढ़ने वाले का बिना पूरी रामायण पढ़े छोड़ने को जी नहीं चाहता। अनपढ़ और मूढ़ भी इसके अर्थ को बिना समझाये समझ लेते हैं। कथावाचक बाजे पर इसकी कथा सुनाकर मन मोह लेते हैं। मूल्य 30 रु०। छोटी 21 रु०

श्री दुर्गा सप्तशती भाषा (18 अध्याय)

यह पुस्तक दुर्गा का पाठ करने वाले भक्तजनों के लिए अत्यन्त उपयोगी है और इसमें वर्णित कथाओं का अर्थ सुन्दर और सरल भाषा में भली प्रकार खोला गया है जिससे संस्कृत से अनभिज्ञ भक्तजन भी पूरा-पूरा लाभ उठा सकते हैं। मूल्य 10 रुपये।

सुखसागर श्रीमद (भागवत पुराण)

(बम्बई का मोटा टाईप पक्की जिल्द)

श्रीमद्भागवत गीता का सरल हिन्दी अनुवाद कर स्कन्ध सहित संपूर्ण जिसमें मुरली मनोहर श्रीकृष्ण भगवान का चरित्र व जीवन का वर्णन अनेक चित्रों सहित दिया गया है। रेगजीन की सुन्दर गोल्ड ठप्पे की जिल्द, अनेक रंगों की तस्वीर व अन्य चित्रों सहित है। कृपया अपनी प्रति आज ही मंगाने की कृपा करें। मुल्य 80। रुपये।

हिन्दी कुरान शरीफ

संसार का बड़ा समूह जिसे ईश्वरी ग्रन्थ मानकर पूजता है वह कुरान शरीफ बना है ? अरबी अक्षरों को हिन्दी में लिखने का शुद्ध रास्ता आया है। मूल्य 20 रुपये डाक खर्च सहित।

यह 30 सिपारों में प्रकाशित हो गई है। केवल मुल (गुजरा) हिन्दी अक्षरों में प्रति सिपारा साथ में अक्षरों का चार्ट और पढ़ने की नियमावली दी हुई है। तत्काल आर्डर भेजकर अपनी प्रतियां मंगवा लें।

बड़ा भक्ति सागर

इस किताब में ईश्वर प्रार्थना, हनुमान चालीसा, आरतियां, सर्वपुराण, वेदों का मन्त्र, भगवत विनय, कमल स्तोत्र, शिव चालीसा, दुर्गा चालीसा, बजरंग बाण, कीर्तन, हरिहर स्तोत्र, प्रातः व संध्या समय व भोजन तथा सोते समय की प्रार्थना, नित्य कर्म की पद्धति, दिन-चर्या, गीता का अठारहवां अध्याय, महात्म्य सहित, आदि बहुत सी धार्मिक बातें लिखी गई हैं। यह पुस्तक स्त्री पुरुषों व विद्यार्थियों सभी के लिए समान रूप से उपयोगी और सतसंगों में कथा करने के लिए विशेष उपयोगी है। मूल्य 15 रुपये डाक व्यय सहित।

योगवशिष्ट—भाषा दो खंडों में

भक्ति, वैराग्य और वेदान्त का यह अनुपम ग्रन्थ है। विरक्त सज्जनों का तो मानो प्राण ही है। सरल भाषा में मोटे अक्षरों में छपे ग्रन्थ का मूल्य 100 रुपये प्रति है। सैट दो जिल्दों में है। डाक खर्च अलग।
